ISSN-0974-0118

मेकल मीमांसा

अंतर-अनुशासनात्मक डबल ब्लाइंड पीयर रिव्यूड यूजीसी केयर सूचीबद्ध अर्धवार्षिक शोध पत्रिका
वर्ष-13, अंक-01 जनवरी-जून-2021

इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय
अमरकंटक (म.प्र.)

कुलगीत

तपोभूमि यह ऋषि मुनियों की अति पावन अभिराम।
विद्या के आलोक पुंज को शत शत बार प्रणाम।।

यहाँ नर्मदा की लहरों में संस्कृति का अनुप्रास।
यह भारत की अमर संपदा का पूरा इतिहास।।
यह स्कंदपुराण निरूपित अद्भुत रेवाखण्ड।
युग युग से महिमामंडित यह वंदित और अखंड।।
जनजातीय समाज यहाँ पर कर्मशील निष्काम।
विद्या के आलोक पुंज को शत शत बार प्रणाम....।।

यहाँ नर्मदा, सोन, जोहिला और अरण्डि प्रवाहित।
विद्या की देवी की पावन वीणा यहाँ स्वरासित।।
आदि शंकराचार्य, कपिल ने यहीं किया था ध्यान।
साधक, संत, कबीर पा रहे प्रज्ञा का वरदान।।
यहीं विश्व की मानवता को मिल पाता विश्राम।
विद्या के आलोक पुंज को शत शत बार प्रणाम....।।

यहाँ सुलभ है जनजीवन की परिपाटी का ज्ञान।
भारत की भाषा परिभाषा का अद्भुत अनुमान।।
यहाँ सूक्ष्म स्थूल दीखता, कण-कण ऊर्जावान।
मेघदूत सर्वदा निहारे साल, चीड़, वट, आम।।
सदा अमरकण्टक में गुंजित दिव्य सदाशिव नाम।
विद्या के आलोक पुंज को शत शत बार प्रणाम....।।

इस अंचल से जुड़ी हुई हैं जन-जीवन की आशा।
पूर्ण करेगा विद्यासागर जन-जन की अभिलाषा।।
वन औषधि की प्रचुर संपदा का यह सुंदर कोष।
संस्कृति और जीवन मूल्यों का यह करता उद्घोष।।
यहाँ सिद्धि की सतत् चेतना बहती है अविराम।
विद्या के आलोक पुंज को शत शत बार प्रणाम....।।

यह धर्म भूमि, यह कर्म भूमि, जीवन दर्शन की मर्म भूमि।
यह ज्ञान भूमि, यह ध्यान भूमि, यह सतत् लक्ष्य संधान भूमि।।
यह बोध भूमि, यह शोध भूमि, यह ''चरैवेति'' अनुरोध भूमि।
यह तत्व भूमि, यह सत्व भूमि, यह मेधा की अमरत्व भूमि।।
गुप्त नर्मदा से अभिसिंचित विश्व विदित गुरुधाम.....

तपोभूमि यह ऋषि मुनियों की अति पावन अभिराम।
विद्या के आलोक पुंज को शत शत बार प्रणाम....।।

वैशाख शुक्ल पक्ष पूर्णिमा (बुद्ध पूर्णिमा)

प्रोफेसर श्रीप्रकाश मणि त्रिपाठी
कुलपति
इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय
अमरकंटक (म.प्र.)

ISSN-0974-0118

मेकल मीमांसा

अंतर-अनुशासनात्मक डबल ब्लाइंड पीयर रिव्यूड यूजीसी केयर सूचीबद्ध अर्धवार्षिक शोध पत्रिका
वर्ष-13, अंक-01 जनवरी-जून-2021

संरक्षक

प्रोफेसर श्रीप्रकाश मणि त्रिपाठी, कुलपति
इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय
अमरकंटक, मध्य प्रदेश

प्रधान सम्पादक

प्रो. राघवेंद्र मिश्रा, प्रोफ़ेसर, पत्रकारिता और जन संचार विभाग

कार्यकारी सम्पादक

प्रो. ज्ञानेंद्र कुमार राउत, प्रोफ़ेसर, शिक्षा शास्त्र विभाग
डॉ. टी. श्रीनिवासन, प्रोफ़ेसर, वनस्पति विज्ञान विभाग

सम्पादक मण्डल

डॉ. गौरी शंकर महापात्र, सह-प्राध्यापक, जनजातीय अध्ययन विभाग
डॉ ललित कुमार मिश्र, सह-प्राध्यापक, मनोविज्ञान विभाग
डॉ नीरज कुमार राठौर, सह-प्राध्यापक, संगणक विज्ञान विभाग
डॉ. एन सुरजीत कुमार, सहायक प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान और मानवाधिकार विभाग
डॉ. राहिल यूसुफ ज़ई, सहायक प्राध्यापक, व्यवसाय प्रबंध विभाग
डा. बिमलेश सिंह, सहायक प्राध्यापक, अर्थशास्त्र विभाग
डॉ. हरजीत सिंह, सहायक प्राध्यापक, भाषाविज्ञान विभाग
डॉ. ऋषि पालीवाल, सहायक प्राध्यापक, भैषजिक विज्ञान विभाग
डॉ. पूनम पांडेय, सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग
डॉ. आशुतोष कुमार, सहायक प्राध्यापक, भूविज्ञान विभाग

इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय
अमरकंटक, मध्य प्रदेश

© इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय, अमरकंटक, मध्य प्रदेश- 484887

सहयोग राशि: 300.00

प्रकाशक :
इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय,
अमरकंटक, मध्य प्रदेश- 484887
http://www.igntu.ac.in/mekalmimansa.aspx

मुद्रक:
बाइकिंग बुक्स
G-13, एस०एस० टावर
धम्मानी स्ट्रीट, चौरा रास्ता
जयपुर, राजस्थान- 302003

डिज़ाईन:
न्यू विजन एंटरप्राइजेज

ध्यानार्थ:

मेकल मीमांसा राष्ट्रभाषा हिंदी में गुणवत्तापरक एवं मौलिक शोधपत्रों के प्रकाशन के माध्यम से ज्ञान के प्रदीपन और विस्तार हेतु संकल्पित है | मेकल मीमांसा डबल ब्लाइंड पीयर रिव्यू पद्धति का अनुसरण करती है | पत्रिका लेखकीय गरिमा का सम्मान करती है | पत्रिका में प्रकाशित विचार और विश्लेषण लेखकों द्वारा प्रस्तुत हैं जो विषयवस्तु की मौलिकता एवं प्रमाणिकता हेतु उत्तरदायी हैं।

कुलपति की कलम से

राष्ट्रभाषा हिंदी में प्रकाशित होने वाली शोध पत्रिका मेकल मीमांसा की राष्ट्रीय स्तर पर पहचान स्थापित हो चुकी है। अपनी निरंतरता तथा शोध पत्रों के प्रकाशन हेतु प्रतिवद्धता के चलते यह शोधार्थियों, जिज्ञासुओं, विद्वानों तथा संस्थानों के लिए सुपरिचित हो चुकी है। प्रस्तुत अंक जनवरी-जून 2021 के प्रकाशन के साथ ही मेकल मीमांसा अपने प्रकाशन के तेरहवें वर्ष में प्रवेश कर चुकी है। इस उपलब्धि के लिए मैं पत्रिका के संपादक मंडल को बधाई देता हूँ।

प्रस्तुत अंक में पत्रिका के अंतर-विषयक एवं बहु-विषयक स्वरूप को और भी निखारने का काम किया गया है। यह अंक अनुभवी विद्वानों एवं दक्ष आचार्यों के साथ-साथ युवा शोधार्थियों के भी विचारों और शोधपरक निष्कर्षों की प्रस्तुति का माध्यम बना है। प्रस्तुत अंक में भौतिक विज्ञान से लेकर सामाजिक विज्ञान, पत्रकारिता, कला, साहित्य, दर्शन और इतिहास जैसे क्षेत्रों से नए और मौलिक शोध को सामने लाने का कार्य किया गया है जो प्रशंसनीय है।

आज देश में उच्च शिक्षा के प्रतिमानों में नए परिवर्तन दृष्टिगोचर हो रहे हैं तथा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग सहित उच्च शिक्षण संस्थान, शोध एवं अनुसंधान की मौलिकता तथा गुणवत्ता में सुधार हेतु निरंतर सचेत तथा सचेष्ट हैं। आशा है कि मेकल मीमांसा भी निरंतर इस संकल्प का अनुपालन करती रहेगी।

कोविड संकटकाल में पत्रिका का भौतिक रूप में प्रकाशन एक चुनौतीपूर्ण कार्य है जिसे संपादक मंडल ने स्वीकार करते हुए अपने दायित्व का सफलतापूर्वक निर्वहन किया है। हमें विश्वास है कि आगे भी हर तरह की चुनौतियों का सामना करते हुए 'मेकल मीमांसा' के माध्यम से राष्ट्रभाषा हिन्दी में गुणवत्तापूर्ण शोध कार्यों को लोगों के सामने लाने का कार्य तन्मयता एवं तत्परता से किया जाता रहेगा।

प्रोफेसर श्रीप्रकाश मणि त्रिपाठी
कुलपति
इंदिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय
अमरकंटक, मध्य प्रदेश

मेकल मीमांसा
अंतर-अनुशासनात्मक डबल ब्लाइंड पीयर रिव्यूड यूजीसी केयर सूचीबद्ध अर्धवार्षिक शोध पत्रिका
वर्ष-13, अंक-01 जनवरी-जून-2021

इस अंक में

क्रम संख्या	लेख का शीर्षक	योगदानकर्ता	पृष्ठ संख्या
1.	प्रेमचंद और निराला के कथा साहित्य में नारी चिंतन का तुलनात्मक स्वरूप	स्व. प्रो. तीर्थेश्वर सिंह	01 - 08
2.	महिलाओं पर बढ़ते अत्याचार के उत्तरदायी कारणों का विश्लेषण	प्रो. घनश्याम शर्मा	09 - 15
3.	जनसंचार माध्यमों में सत्याग्रह की समझ	डॉ. अमित राय	16 - 24
4.	इंटरजनरेशनल जस्टिस और इको फेमिनिज्म	डॉ. चित्रा माली	25 - 31
5.	राजस्थानी लघु चित्रों में लोक जीवन : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन	डॉ. शैलेन्द्र कुमार	32 - 40
6.	भारतीय जाति व्यवस्था - गाँधी एवं अम्बेडकर	डा. राजीव कुमार सिंह एवं डा. नरेश कुमार सोनकर	41 - 52
7.	मध्य भारत में आदिवासी राजनीतिक नेतृत्व का स्वरूप : मध्यप्रदेश एवं छत्तीसगढ़ के विशेष संदर्भ में	डॉ. अनिल कुमार एवं डॉ. मंजीता पटेल	53 - 68
8.	शिक्षा एवं आदिवासी महिला सशक्तिकरण एक विश्लेषणात्मक अध्ययन	डॉ. कुशल जैन कोठारी, अनिता चौहान	69 - 83
9.	इन्टरनेट उपभोक्ता युवाओं में वेब-सीरीज की लोकप्रियता एवं प्रभावशीलता : एक अध्ययन	डॉ. सुनील कुमार मिश्र	84 - 96
10.	भारतीय संचार: संस्कार, संस्कृति और भाषा से समृद्धि	डॉ. योगेश कुमार गुप्ता	97 - 108
11.	उच्च शिक्षा के नवीन आयाम एवं मीडिया शिक्षण: नई शिक्षा नीति के संदर्भ में	डॉ. राम प्रवेश राय	109 - 118
12.	योग दर्शन में तप एवं तपोजा सिद्धि	डॉ. गोविन्द प्रसाद मिश्र	119 - 129
13.	पूर्वी उत्तर प्रदेश तराई में थारू जनजाति की साक्षरता का स्थानिक स्वरूप	डॉ. संजीव कुमार सिंह, डॉ. अभिषेक सिंह, सीमा सिंह	130 - 142
14.	पादप संरक्षण में ऊतक संवर्धन तकनीक की भूमिका	डॉ. मनोज कुमार राय, रोशनी राठौर	143 - 156
15.	बुन्देलखण्ड के प्राचीन दुर्ग: एक अनुशीलन	डॉ. मोहन लाल चढ़ार	157 - 173
16.	भारत-बांग्लादेश संबंध के 50 वर्ष: एक ऐतिहासिक मूल्यांकन	डॉ. सोनाली सिंह	174 - 182

प्रेमचंद और निराला के कथा साहित्य में नारी चिंतन का तुलनात्मक स्वरूप

स्व. प्रो. तीर्थेश्वर सिंह*

सारांश

कालखण्ड की दृष्टि से कथा शिल्पी प्रेमचंद एवं क्रान्तिकारी रचनाकार निराला समसामयिक कथाकार हैं और दोनों की समान विशेषता यह है कि दोनों मानवतावादी तथा भारतीय जनजीवन के यर्थाथ की अभिव्यक्ति के कुशल चितेरे हैं। इनके समानता के यह भी बिन्दु हैं कि इनके द्वारा रचित उपन्यास में भारतीयता के साथ-साथ, भारतीय जन-जीवन की सच्चाई तथा स्त्री के व्यथापूर्ण जीवन का यथार्थ अंकन एवं स्त्री चेतना के स्वर की बहुविध अनुगूँज भी है। अपने पूर्ववर्ती रचनाकारों की तरह इन दोनों रचनाकारों ने स्त्री को आदर्श दृष्टि से ही नहीं देखा बल्कि उनके प्रति आधुनिक और प्रगतिशील दृष्टि भी दिखाई। इन दोनों ने स्त्री पर लगाये गए हर तरह के सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक प्रतिबंधों को हटाने की वकालत की तथा उनके आत्म अभिमान को जागृत कर उन्हें उच्च स्थान पर बैठाया। वास्तव में इतिहास के पृष्ठों पर दृष्टि डाली जाए तो वैदिक युग का स्त्री समाज पुरूष के समान हर तरह से समानता प्राप्त था। इसलिए कहा भी गया "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता", लेकिन यह स्थिति उत्तर वैदिक काल तक आते-आते समाप्त हो गई। विषम स्थिति नारी की मध्य काल से लेकर आधुनिक युग तक एक जैसी रही। 1927 में लिखित श्रृंखला की कड़ियाँ में महादेवी वर्मा ने सबसे पहले बड़े भावुक शब्दों में नारी पक्षधरता पर आवाज उठाई और पूरे नारी समाज की पीड़ा को व्यक्त करते हुए अपनी कविता में लिखा-

विस्तृत नभ का कोई कोना
कोई न कभी अपना होना।
परिचय इतना इतिहास यही।
उमड़ी कल थी मिट आज चली। (महादेवी वर्मा)

प्रेमचंद और निराला का कथा साहित्य स्त्री के प्रति एक नई दृष्टि प्रस्तुत करता है जिसकी मीमांसा इस आलेख में की गई है|

बीज शब्द: कथा साहित्य, नारी चेतना, तुलनात्मक स्वरुप

प्रस्तावना

वैश्विक स्तर पर स्त्री स्वतंत्रता को लेकर धीरे-धीरे यूरोप और अमेरिका में तेजी से

*लेखक इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय, अमरकंटक मे हिन्दी विभाग के अध्यक्ष थे।

स्वर उठे, जिसका परिणाम यह हुआ कि 1960 के दशक में हिन्दी कथा लेखिकाओं और कवयित्रियों ने यह बात कही कि हमारे स्वानुभूति की अभिव्यक्ति जितनी ईमानदारी से हम कर सकते हैं पुरूष रचनाकार नहीं। हाँलांकि इस काल खण्ड के समसामयिक रचनाकारों ने इस प्रश्न का विरोध किया और माना कि रचना-रचना होती है, उसमें सहानुभूति और स्वानुभूत का पक्ष नहीं होता | लेकिन नारी विषयक चिंतन का यह पक्ष था कि हमारे मन की पीड़ा की अभिव्यक्ति जितनी ईमानदार हमारे लेखन से होगी वह पुरूष के द्वारा संभव नहीं क्योंकि भोगे यथार्थ की अभिव्यक्ति स्त्री लेखिकाओं ने धीरे-धीरे स्त्री देह की स्वतंत्रता के साथ व्यक्तिव की स्वतंत्रता और सामाजिक भागीदारी पर भी विचार किया। सभ्यता का विकास हुआ परन्तु शोषण का भाव बना रहा। धीरे-धीरे स्त्री मुक्ति और स्त्रियों के सवालों पर कई लेखिकाओं ने लिखा | इनके विचार से नारी उत्पीड़न का मूल केन्द्र है विवाह संस्था। इस प्रकार समकालीन लेखन में स्त्रीमुक्ति के बहुविध स्वर मिलने लगे, इसमें कोई सन्देह नहीं।

विचारणीय बिन्दु: प्रेमचंद और निराला की स्त्री चेतना का तुलनात्मक अध्ययन

इन दोनों ही कथाकारों के कई उपन्यास स्त्री प्रधान उपन्यास हैं। प्रेमचंद के कई स्त्री प्रधान उपन्यास हैं। प्रेमचंद के उपन्यासों सेवा सदन, प्रेमा, प्रतिज्ञा, निर्मला, गबन, वरदान, आदि में स्त्री जीवन को ही प्रमुखता मिली लेकिन इसके अतिरिक्त प्रेमचंद के इन उपन्यासों - रंगभूमि, कर्मभूमि, गोदान, कायाकल्प, प्रेमाश्रय, मंगलसूत्र आदि में भी स्त्री की समस्याएं बड़ी गंभीरता से उठाई गई हैं।

ठीक उसी तरह निराला ने भी अपने उपन्यास अप्सरा, अल्का, निरूपमा, तथा प्रभावती में स्त्री जीवन के ढेर सारे प्रश्न इन रचनाओं में उठाये हैं। इसके अलावा उनके उपन्यास 'कालेकारनामे', 'चोटी की पकड़, 'चमेली' में भी नारी जीवन के बहुविध चित्र हैं। यद्यपि यह दोनों कथाकार समसामयिक हैं, परन्तु निराला की भाव संवेदना और प्रेमचंद की भाव संवेदना में पर्याप्त अन्तर भी देखने को मिलता है। यह सत्य है कि दोनों रचनाकार अपने समय और समाज को अच्छा करने के लिए स्त्री संदर्भ को सामने लाते हैं। इन दोनो की इस संदर्भ में गहरी संवेदना देखने को मिलती है | लेकिन यह ज्ञात तथ्य है कि दोनों की वैचारिकी में साम्य और वैषम्य दोनो देखने को मिलते हैं। समानता की दृष्टि से देखा जाए तो इन दोनों में विषयगत समानता के ढेर सारे बिन्दु हैं जैसे-प्रेमचंद ने सेवासदन तथा निराला ने अप्सरा में वेश्या जीवन के कई सूक्ष्म चित्र सामने लाये हैं तथा उनकी त्रासदी और नारी मन की वेदना का यथार्थ अंकन किया है।

सेवा सदन की सुमन तथा अप्सरा की कनक परिस्थितिवश वेश्या जीवन अपनाती हैं और दोनों ही पात्र रूढ़िवादी सामाजिक परम्परा को झेलती हैं। दोनों समाज की खोखली मान्याताओं से घृणा करती हैं। सेवा सदन की पात्र सुमन तीखे व्यंग के साथ कहती है

"अन्धकार में जूठा खाने को तैयार पर उजाले में निमत्रंण भी स्वीकार नहीं"। ठीक इसी तरह निराला के उपन्यास की पात्र कनक भी है | मिल्टन कुँवर साहब तथा उनके मित्रों के संबंध में ऐसे ही वक्तव्य देती है और कहती है "मुझमें और इनमें कितना फर्क है ? इनका चरित्र किसी वेश्या से श्रेष्ठ नहीं है। फिर भी समाज इनका है, इसलिए ये अपराधी नहीं हैं | नीचता से ओत-प्रोत ऐसी विचारधारा लिए हुए भी ये समाज के प्रतिष्ठित, विद्वान और बुद्धिमान व्यक्ति हैं" (प्रेमचन्द,1994 पृ.295)।

इन दोनों कथनों का सार यह है कि दोनों लेखकों ने सुमन तथा कनक के मन की पीड़ा को न केवल शब्द दिया है बल्कि भारतीय समाज की विसंगति और विडम्बनाओं को सामने लाया है। साथ ही यह दिखाया है कि किस तरह हमारा समाज दोहरे चरित्र को जीता है (नवल, 2006 पृ.91)।

निराला एवं प्रेमचंद की स्त्री पात्र अपने निजी स्वार्थ की अपेक्षा संपूर्ण स्त्री समाज के लिए सघंर्ष करती दिखती हैं। यह बिन्दु दोनों के वैचारिक समानता के सूचक हैं | गबन उपन्यास की जालपा, प्रभावती की यमुना तथा रंगभूमि उपन्यास की सोफिया तथा अप्सरा की तारों, प्रतिज्ञा की अलका तथा प्रेमा, कायाकल्प की मनोरमा बिना किसी स्वार्थ के भारतीय सामाज की प्रचलित परम्पराओं, विडम्बनाओं तथा कुरीतियों के विरूद्ध अपना मोर्चा दर्ज कराती हैं। इस संदर्भ में डॉ. बलदेव प्रसाद मेहरोत्रा लिखते हैं कि "यमुना के माध्यम से निराला ने स्त्री की अद्भुत महिमा ज्योति का दिग्दर्शन कराया है। वह अपने कुल की रूढ़ियों के निष्ठुर बन्धन को प्रतिबन्धित कर जीवनरूपी समर में सदा कर्मठ रहती हैं" (मेहरोत्रा :1984 पृ.275)।

वास्तव में यह कथन इस बात का संकेत करता है कि आधुनिक युग की महिला श्रृंखला की बेड़ियां तोड़कर भारतीय परंम्परा के जर्जर रूढ़ बंधन से मुक्त होकर प्रगतिशीलता को अपनाना चाहती है। यह जरूरी भी है क्योंकि भारतीय समाज की आधी आबादी सिसकते जीवन को जिएंगी तो भारतीय समाज में प्रगतिशीलता आखिर कब आयेगी?

इसी तरह वरदान उपन्यास की पात्र विरंजन के हृदय में भी सामाजिक कल्याण की भावना कूट-कूट कर भरी है। जिसका सत्य प्रेमचंद के निम्न कथन में देखा जा सकता है। "वह अपने पात्रों में प्रेम कहानी न लिखकर सेठ साहूकारों तथा जमींदारों द्वारा गाँव वालों पर होने वाले अत्याचारों का उल्लेख करती है। देश की जटिल समस्यायें उसके लिये एक बड़ी चुनौती बनकर उपस्थित होती है। ग्रामीणों में व्याप्त अंध-विश्वास, कर्मफल तथा भाग्यवाद की बातें उसके हृदय को झकझोर देती हैं। इस रूढ़िवादी परम्परा को कैसे समाप्त किया जाये। यह बात उसके मानस-पटल को उद्वेलित करती है" (राय:1996 पृ.150)।

धीरे-धीरे आज की स्त्री भारतीय समाज में व्याप्त हर तरह की समस्या को बड़ी

गंभीरता से देखती है और उसे समाप्त करने के लिए निरंतर चिंतन करती है। प्रेमचंद के अन्य उपन्यासों में भी सुमन, सोफिया निरंतर इस तरह का संघर्ष करते हुए दिखती हैं। आज की नारी केवल अपने अधिकार की बात नहीं करती बल्कि भारतीय समाज में व्याप्त समस्याओं से लड़ते-जूझते दिख जाती है।

निराला की पात्र अलका दलित बस्तियों में शिक्षा का अलख जगाते हुए दिखती हैं तो जरूरत के समय परिवार के कल्याण हेतु भी हर कदम पर खड़े दिखती हैं। इस संदर्भ में रामविलास शर्मा का कथन दृष्टव्य है | वह लिखते हैं "प्रेमचंद के स्त्री पात्रों में जालपा एक नये प्रकार की स्त्री है। वह धैर्य को न खोते हुए, तद्युगीन परिस्थितियों से लोहा लेती है। भारी से भारी मुसीबत पड़ जाने पर भी बुद्धि से काम लेती है तथा नये-नये दाँव-पेंचों के द्वारा कठिनाईयों का साहस के साथ सामना करती है। उसका चरित्र कठिनाईयों का सामना करते हुए बारम्बार निखरता है, क्योंकि वह अपनी कमियों को पहचान सकती है | वह एक ईमानदार तथा संर्घशील स्त्री है" (शर्मा:1993 पृ.62)।

आधुनिक युग में मानवतावादी चिंतन में स्त्री संघर्ष के प्रति गहरी संवेदना रचनाकारों के मन में थी जिसका परिणाम यह हुआ कि जालपा जैसे चरित्र का सृजन रचनाकार करता है और वह हर विपरीत परिस्थितियों में संघर्ष करते दिख जाती है। निराला और प्रेमचंद की स्त्री आदर्श दृष्टि उनके कथा साहित्य में जगह-जगह दृष्टि गोचर होती है। गोदान के पात्र मेहता के माध्यम से प्रेमचंद नारी के संबंध में बड़ी महत्वपूर्ण टिप्पणी करते हैं| वह लिखते हैं कि "मेरे जेहन में स्त्री वफा और त्याग की मूर्ति है, जो अपनी बेजुबानी से, अपनी कुर्बानी से, अपने को बिल्कुल समर्पित कर पति की आत्मा का एक अंश बन जाती है" (प्रेमचंद, 1939)। पुनः गोदान के पात्र मेहता एक जगह कहते हैं कि स्त्री पुरूष से उतनी ही श्रेष्ठ है जितना प्रकाश अन्धेरे से, मनुष्य के लिए क्षमा, त्याग और अहिंसा जीवन के उच्चतम आदर्श हैं। नारी ऐसे आदर्श को प्राप्त कर चुकी है (प्रेमचं, 1939 पृ.132)।

इसी तरह निराला ने अपने उपन्यास में स्त्री प्रसंग के गम्भीर मुद्दे उठाये हैं | अप्सरा उपन्यास की पात्रा तारा स्त्री श्रेष्ठता पर अपना मन्तव्य देते हुए कहती है "हम लोगों के बीच जो पुरानी मान्यताओं को मानने वाले लोग हैं, उन्हें तुमसे कुछ मतभेद हो सकता है? उनसे तुम्हें कुछ दुख भी होगा, किन्तु बहन! मानव की अज्ञानता की मार मानव ही हो सकते हैं। फिर स्त्री तो अपनी क्षमा और सहिष्णुता के कारण ही पुरूषों से श्रेष्ठ है, उसके यही गुण पुरूष की जलन को शीलता प्रदान करते हैं" (नवल, 2006 पृ.102-03)।

इस तरह हम देखते हैं कि प्रेमचंद के उपन्यास के पात्र की तरह ही निराला के पात्र भी कई स्त्री प्रश्नों को गंभीरता से उठाते हैं। इन दोनों उपन्यासकारों के स्त्री पात्र स्त्री मुक्ति की बात करते हैं। पुरूष की तरह ही अपने अधिकारों के संघर्ष के लिए कई जगह विद्रोह करते

दिख जाते हैं | प्रेमचंद के उपन्यासों में मालती, मीनाक्षी, सरोज आदि पात्र कई तरह की स्वतंत्रता की मांग करते हैं और परम्परा की बेड़ियों में जकड़ी नारी स्वतंत्रता हेतु संघर्ष करती है। हर तरह के सामाजिक प्रतिबंधों को तोड़ने की भी बात करते हैं | वह जानती हैं कि पुरूष समाज कदम-कदम पर उन्हें परम्पराओं की बेड़ियों में जकड़ेगें। अतः वह उन सारी चीजों को तोड़कर स्वतंत्रता की सांस लेना चाहती है। सेवा सदन के सुमन पात्र पर डॉ. रामविलास शर्मा लिखते हैं कि- "हिन्दी कथा साहित्य में वह पहली स्त्री है जिसने आत्म गौरव की रक्षा के लिए अपना पैर अग्रसर किया है" (शर्मा,1993 पृ.62)।

इस तरह यह स्पष्ट है कि प्रेमचंद और निराला के अधिकांश स्त्री पात्र सामाजिक रूढ़ियों और बंधनों को तोड़कर स्वतंत्रता की सांस लेना चाहते हैं और किसी भी तरह की बेड़ियां स्वीकार नहीं करना चाहते | वह अपने अधिकार और स्वाभिमान के लिए पूरी निडरता और आत्मविश्वास के साथ हर तरह के संघर्ष के साथ प्रस्तुत दिख जाते हैं। पूरे वैश्विक स्तर पर नारी स्वतंत्रता के बदलाव को महसूस करते हैं, इसलिए वह सब कुछ पाने के लिए प्रस्तुत हैं। इस दृष्टि से हम देखें तो दोनों रचनाकारों की वैचारिकी बहुत कुछ समानता के बिन्दु पर खड़ी है।

समानता के कई बिन्दु प्रेमचंद और निराला में देखने को मिलतें हैं। लेकिन यह भी सच्चाई है कि असमानता के ढेर सारी बिन्दु भी देखने को मिलते हैं। जैसे- दोनों ने वेश्याओं की समस्या के समाधान के लिए कई वैचारिकी रखी; लेकिन इन दोनों के समाधान की वैचारिकी में अंतरबिन्दु स्पष्ट देखे जा सकते हैं। उदाहरण के तौर पर सेवा सदन की पात्र सुमन कुलीन परिवार से और अनमेल विवाह होने के कारण दोनों पति-पत्नी में सांमजस्य नहीं हो पाता। सुमन का पति उसे सदैव संदेह की नजरों से देखता है तथा किसी भी परिस्थिति में जब दोनों का तालमेल नहीं बैठता तो सुमन घर छोड़ देती है और सामाजिक व्यवस्था के चलते उसे वेश्या बनना पड़ता है | सुमन कहती है- "आप सोच रहे होंगे कि मैं भोग-विलास की अभिलाषा से इस कुमार्ग में आई हूँ, किन्तु वास्तविकता यह नहीं है। मैं मानती हूँ कि मैंने बड़ा ही नीच कर्म किया है, किन्तु मैंने विवशता में यह सब किया है। इसके अतिरिक्त मेरे लिए और कोई मार्ग न था। आप तो जानते ही हैं कि इस संसार में सभी की प्रवृत्ति एक जैसी नहीं होती। कोई अपना अपमान सह लेता है, कोई नहीं सह सकता। मैं एक उच्चकुल की नारी हूँ। पिता की नासमझी से मेरी शादी एक दरिद्र एवं मूर्ख मनुष्य से हो गई किन्तु दरिद्र होने पर भी मुझसे अपना अपमान न सहा जाता था। निरादरों का आदर देखकर मेरे हृदय में कुवासनाएं उफान मारने लगती थीं किन्तु मैं इस अग्नि को अपने मन में ही दबाये रहती थी। कभी अपनी भावनाओं को किसी के सामने नहीं लाई। सम्भव था धीरे-धीरे यह अग्नि स्वतः ही बुझ जाती पर पद्म सिंह के जलसे ने इस आग को भड़काने का काम किया। पद्म सिंह के घर से निकलकर

मैं भोला बाई के आश्रय में गई किन्तु ऐसी अवस्था में भी इस कुमार्ग से मेरा पीछा नहीं छूटा। मैंने सोचा कि मैं कपड़े सिलकर जीवन निर्वाह करूँगी पर समाज के ठेकेदारों ने मुझे इस प्रकार से तंग किया कि अन्त में मुझे इस कुएँ में कूदना ही पड़ा। सुख भले न सही किन्तु यहाँ मेरा सम्मान तो है, मैं किसी की गुलाम तो नहीं" (प्रेमचन्द:1994 पृ.78-79)।

वास्तव में सुमन के इस कथन में सुमन ने एक स्त्री वैश्या कैसे बनती है? उस बात की सच्चाई को स्पष्ट किया है और दिखाया है कि सामाजिक विषमता में कोई स्त्री वेश्या बनती है। निराला ने वेश्या की समस्या को अवश्य उठाया है लेकिन उन्होनें अपने उपन्यास में यह दिखाया है कि वेश्या की बेटी किस तरह से समाज की धारा में शामिल होना चाहती है लेकिन समाज उसे स्वीकार नहीं कर रहा। लेकिन इस उपन्यास के एक पात्र के सहयोग से क्रांतिकारी निर्णय सामने आया है। उन्होंने वेश्या पुत्री का राजकुमार से विवाह करवाकर एक बड़े सामाजिक परिवर्तन की दस्तखत दी है। जबकि प्रेमचंद सेवा सदन में वेश्या का विवाह नहीं होने देते | यह बात यह सिद्ध करती है कि दोनों की वैचारिकी में इस प्रश्न पर असमानता थी | इसी पर गंभीर टिप्पणी करते हुए डॉ. गोपाल राय लिखते है कि "प्रेमचन्द तवायफों के प्रति सहानुभूति तो रखते हैं, किन्तु वह इतना साहस नहीं दिखा पाते कि वह किसी वेश्या का किसी कुलीन युवक से विवाह करा सकें। किन्तु निराला में यह साहस विद्यमान है | उन्होंने अपने उपन्यास अप्सरा में वेश्या की पुत्री कनक का विवाह साहित्य के प्रति पूर्ण रूप समर्पित व्यक्ति राजकुमार से कराके एक नई क्रान्ति का उन्मेष किया है" (प्रेमचन्द, राय ,2002 पृ.151)।

दोनों कथाकारों का एक और मौलिक अंतर स्पष्ट दिखता है। वह यह कि प्रेमचन्द की स्त्री पात्र जहां प्रताड़ना का शिकार होती दिखती है। वहां निराला के स्त्री पात्र इस तरह की प्रताड़ना के शिकार नहीं दीखते | सबसे करूण और दुखद स्थिति निर्मला उपन्यास की कल्याणी की अभिव्यक्ति में दिखती है जब वह अपने पति से यह बात कहती है, "इसलिए न क्योंकि तुम जानते हो कि मेरा अन्य कहीं आश्रय नहीं है। मैं तुम्हारी ही रोटियों पर पली हूँ या और कुछ? मानों मैं घर की लौंडी हूँ। जितना मैं दबती जाती हूँ, उतना ही तुम दबाते जाते हो। उदयभानु भी अपनी अहंवादी भावना से कहता है-मैं कमाकर लाता हूँ, जिस तरह से चाहूँ, उस तरह से खर्च करूँ। किसी को बोलने का अधिकार नहीं है" (प्रेमचन्द, 2009 पृ.10)।

कल्याणी का यह कथन स्त्री के दासत्व स्थिति को तो दर्शाता है साथ में उसकी विवशता को स्पष्ट करता है। प्रेम दृष्टि से दोनों कथाकारों की तुलना करें तो निराला के उपन्यास के स्त्री पात्र स्वच्छन्द प्रेम करते हुए दिखते हैं जबकि प्रेमचंद की कथा में ऐसा नहीं है। इस बात की पुष्टि करते हुए डॉ. कुसुम वाष्णेय लिखती हैं "जिस तरह से निराला ने अपने काव्य में मुक्तकों की अवधारणा की, ठीक उसी प्रकार अपने उपन्यासों में स्वच्छन्द व्यक्तित्व के पात्रों का चित्रण किया है | इन सभी पात्रों की चरित्रगत स्वंतत्रता प्रत्येक क्षेत्रों में दिखाई

देती है किन्तु प्रेम के क्षेत्र में यह और भी अधिक प्रकट हुई है। निराला ने परम्परागत प्रेम में अनेक दोष देखे हैं। परिणामतः उन्होंने इस प्रकार के पात्रों का सृजन किया जो परम्परागत समाज की रूढ़ियों को तोड़कर वैयक्तिक मान्याताओं के स्वच्छन्द प्रेम का पोषण करते हैं। अप्सरा, अलका, निरूपमा, एवं प्रभावती उपन्यासों के पात्र स्वच्छन्द प्रेम के पोषण करने वाले हैं। इनके पात्र अपने प्रेम की स्वतन्त्र धारण रखते हैं। इनमें से किसी एक का भी विवाह परम्परागत समाज की मान्यताओं के आधार पर नहीं होता। यह सभी पात्र अपना जीवन साथी स्वयं चुनकर प्रेम विवाह करते हैं" (वाष्णेय:1963 पृ.106-107)।

डॉ. कुसुम ने यह साफ किया कि निराला के अधिकांश स्त्री पात्र स्वच्छंद प्रेम करके सफल होते हैं। यह इस बात का सूचक है कि निराला स्वछंद प्रेम को सर्वोपरि मानते हैं। इसिलिए वह विधवा विवाह वेश्या विवाह और अन्तर्जातीय विवाह की अनुमति प्रदान करते हैं, जबकि प्रेमचन्द अपने उपन्यासों में प्रेम के मामले में ज्यादा परंपरागत रहते हैं।

हालांकि गोदान उपन्यास आते-आते कई पात्र अन्तर्जातीय विवाह का समर्थन कर उसका अनुकरण करते हैं। इसके संदर्भ में डॉ. मधुरेश कहते है कि- "प्रेमचन्द स्वच्छन्द प्रेम प्रसंगों का चित्रण कर पाने में सक्षम नहीं हैं, ऐसा नहीं था | निराला के उपन्यासों की तरह वह स्त्री के प्रेम विवाह के पक्ष में भले ही न हों किन्तु वह कन्या की योग्यता के अनुसार ही उसके वर के वरण के पक्ष में हैं" (मधुरेश:2002 पृ.58-59)।

स्त्री की राजनीतिक जागरूकता को लेकर दोनों के चिंतन में मतभेद है। प्रेमचन्द की नारी खुलकर राष्ट्र निर्माण में अपनी भागीदारी दिखाती है। जबकि स्त्री को लेकर इस संदर्भ में निराला के उपन्यासों में उदासीनता ही दिखती है। प्रेमचन्द के कई उपन्यासों में स्त्रियाँ सर्वोच्च बलिदान और उत्थान का परिचय देते हुए निरन्तर राष्ट्रीय आंदोलन और उत्थान में अपनी भूमिका पूरी करती हैं | वरदान की पात्र सुभागा, रंगभूमि की रानी जान्हवी, कर्मभूमि की सुखदा, सकीना और मुन्नी प्रतिपल राष्ट्रीय संदर्भों में अपनी सक्रियता दिखाती हैं। कर्मभूमि की पात्र सोफिया ब्रिटिश हुकूमत के खिलाप क्रोध भरे स्वर में कहती है कि चाहे मेरा सर्वनाश हो जाए इन अंग्रेजों को मैं उनके अंजाम तक पहुंचा दूँगी।

इसी तरह कर्मभूमि की स्त्री-पात्र कहती है कि हर स्थिति में सूरदास का साथ देगी। दोनों कथाकारों की दृष्टि में यह एक अंतर और उभरकर सामने आता है कि प्रेमचन्द के उपन्यासों के स्त्री पात्रों के मूल प्रश्न आर्थिक हैं तो निराला के पात्र कई तरह की सामाजिक विषमताओं और विडम्बनाओं से पीड़ित दिखते हैं | इसी बात पर डॉ. कुसुम वाष्णेय कहती हैं कि "प्रेमचन्द जी के पात्र अर्थसंबंधी वेदना से पीड़ित हैं जबकि निराला के पात्रों के स्वच्छन्द जीवन में परम्परागत समाज की दूषित वर्जनाएँ बाधा डालती हैं" (वाष्णेय,1963 पृ.108)।

हालांकि यह भी सत्य है कि प्रेमचन्द के स्त्री-पात्र भी कई जगह सामाजिक

विसंगतियों के शिकार दहेज के स्तर पर, बेमेल विवाह के स्तर पर दिख जाते हैं । यह रेखाकिंत करने वाली बात है कि निराला के स्त्री पात्र आर्थिक रूप से संपन्न हैं | उनकी सारी समस्याएं सामाजिक प्रश्नों में दिखती हैं। यह भी सत्य है कि निराला के अपने स्त्री पात्रों को कई जगह स्त्री विचारों की स्वतंत्रता की वकालत करते हुए देखा जाता है और वह कभी किसी बंधन को स्वीकार नहीं करना चाहते हैं।

निष्कर्ष

इन सारे विश्लेषणों का सार यह है कि दोनों कथाकारों ने अपने समसामयिक समाज के कालखंड के नारी जीवन के बहुविध चित्रण को विभिन्न पात्रों के माध्यम से प्रस्तुत किया है जिसमें समानता और असमानता के ढेर सारे बिन्दु हैं। लेकिन यह भी सत्य है कि उन्होंने अपने समय और समाज में नारी समाज को यथोचित स्थान दिलाने हेतु अपने पात्रों के माध्यम से एक वैचारिकी को समाज के सामने अलग-अलग धरातल पर सामने लाया है। इन दोनों ने मानवतावादी विचारधारा के आलोक में आधी आबादी की हकीकत को दुनिया के सामने न केवल लाया है बल्कि उनके उचित स्थान हेतु एक स्पष्ट धारणा भी प्रस्तुत की है|

संदर्भ सूची

पप्रेमचन्द (1994),सेवासदन, अंकुर पब्लिकेशन, दिल्ली प्रथम संस्करण

नंद किशोर नवल (2006), निराला सम्पादन-निराला रचनावली-, अप्सरा प्रकाशन राजकमल प्रा.लि. नई दिल्ली, चतुर्थ संस्करण,

बलदेव प्रसाद मेहरोत्रा (1984), कथा शिल्पी – निराला, लोकभारती प्रकाशन प्रथम संस्करण

सरिता राय (1996), उपन्यास कार प्रेमचंद की सामाजिक चिंता, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली

डॉ. रामविलास शर्मा (1993),प्रेमचंद और उनका युग, राजकमल प्रकाशन प्रा.लि., नई दिल्ली प्रथम संस्करण,

प्रेमचंद (1939),गोदान, सरस्वती प्रेस, बनारस

नंद कि शोर नवल (2006), निराला सम्पादन-निराला रचनावली, अप्सरा प्रकाशन, राजकमल प्रा.लि., नई दिल्ली, चतुर्थ संस्करण,

डॉ. रामविलास शर्मा (1993),प्रेमचंद और उनका युग, राजकमल प्रकाशन प्रा.लि., नई दिल्ली, प्रथम संस्करण

प्रेमचन्द (1994),सेवासदन, अंकुर पब्लिकेशन, दिल्ली प्रथम संस्करण .

प्रो. गोपाल राय (2002),हिन्दी उपन्यास का इतिहास, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, प्रं. सं.,पृष्ठ-151

प्रेमचन्द (2009), निर्मला, सुमित्रा प्रकाशन इलाहाबाद

डॉ. कुसुम वाष्णेय (1963), निराला का कथा साहित्य,ममता प्रकाशन इलाहाबाद .प्र.

डॉ. मधुरेश (2002), हिन्दी उपन्यास - सार्थकता की पहचान, स्वराज प्रकाशन दिल्ली,

डॉ. कुसुम वाष्णेय (1963), निराला का कथा साहित्य, ममता प्रकाशन इलाहाबाद .प्र.

महिलाओं पर बढ़ते अत्याचार के उत्तरदायी कारणों का विश्लेषण

प्रो. घनश्याम शर्मा*

सारांश

नारी प्रकृति की कोमलता, सुन्दरता, समर्पण और त्याग का मानवीय रूप है | सभ्यता के कालक्रम में समाज में नारी की स्थिति में अनेक परिवर्तन हुए हैं | यह सकारात्मक और नकारात्मक दोनों ही रहे हैं | भारतीय संस्कृति में अर्धनारीश्वर की परिकल्पना की गई है | स्त्री और पुरुष दोनों ही सृष्टि रुपी रथ के दो चक्र हैं और जीवन के चलने में दोनों का ही बराबरी का योगदान है | दुर्भाग्यवश समय में बदलाव और अनेक राजनितिक एवं अन्य कारणों से स्त्री की स्थिति में ह्रास होता गया और साथ ही उसे उपभोग्या मान लिया गया | स्त्रियों पर होने वाले अत्याचार इस दृष्टि के ही कारण हैं | प्रस्तुत शोध आलेख स्त्री के ऊपर हो रहे अत्याचारों का विश्लेषण करता है और उन कारकों की मीमांसा करता है जो इसके लिए उत्तरदायी हैं |

बीज शब्द: स्त्री, घरेलू हिंसा, भारतीय संस्कृति, अत्याचार

परिचय

नारी प्रकृति की अनुपम कृति है। नारी सृजन की पूर्णता है। सृष्टि के विकास क्रम में उसका महत्वपूर्ण स्थान है। वह मानव जीवन की जन्मदात्री हैं। उसे सौंदर्य, दया, ममता, संवेदना, करूण, क्षमा, वात्सल्य, त्याग और समपर्ण की प्रतिमूर्ति माना जाता है। नारी के इन्हीं गुणों के कारण वेदकाल से लेकर आधुनिक काल तक उसका महत्व अक्षुण्ण रहा है। उसकी उपेक्षा करके मानव पूर्णता प्राप्त नहीं कर सकता है। वह समाज रूपी गाड़ी की पहिया है जिसके बिना सम्रग जीवन पंगु है (मिश्र, 2007)।

इस विषय पर चितंन के संदर्भ में प्राचीन भारतीय संस्कृति का सिंहावलोकन परम आवश्यक है। ऋग्वेद काल में नारी की सामाजिक स्थिति सम्मानजनक एवं श्रद्वास्पद थी। स्त्री को पुरूष की अर्धांगिनी इस लिए कहा गया है, क्योंकि वह पुरूष का ज्ञान, बल तथा क्रिया भी है। इसीलिए ऋग्वेद काल में स्त्री को लौकिक तथा पारलौकिक उभय कल्याणों का अक्षयस्त्रोत माना गया है। हमारे राष्ट्र में जहां स्त्रियों को शक्ति रूप में पूजा जाता है, उसमें महिलाओं पर अत्याचार क्या बिडम्बना पूर्ण एवं दुर्भाग्यपूर्ण नहीं है? हमारी संस्कृति में कहा गया है कि यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवताः, पर राष्ट्र का दुर्भाग्य ही कहा जायेगा कि समय चक्र के परिवर्तन के साथ-साथ यह अवधारणायें केवल सैद्धांतिक रूप में ही अवशेष हैं

* लेखक अनुभवी राजनीति विज्ञानी एवं राजनीति विज्ञान एवं मानवाधिकार विभाग, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय, अमरकंटक में स्कॉलर-इन-रेजिडेंस हैं |

। वर्तमान युग में इनका व्यवहारिक पक्ष कहीं दृष्टिगोचर नहीं होता, वरना आज के सामाजिक पतन की स्थिति देखकर तो विश्वास भी नहीं होता कि हमारे राष्ट्र का इतना गौरवपूर्ण इतिहास रहा होगा। आज तो समाज में चहुँओर शोषण, हिंसा व्यभिचार का बोलबाला है, जिसका परिणाम समाज के नैतिक पतन के रूप में हमारे समाने परिलक्षित है (रामजादा, 2007)।

हमारे प्राचीन धर्मशास्त्रों में नारियों को समुचित सम्मान का स्थान प्राप्त है। कालान्तर में हमारे देश में नारियों के प्रति अधिक दुर्व्यवहार होने लगा। उनका जीवन केवल रसोईघर एवं बच्चों के पालन-पोषण तक ही सीमित था। अधिकांश महिलाएं दयनीय जीवन जीने को बाध्य थीं। उनका पर्याप्त सामाजिक शोषण किया जा रहा था। समाज में व्याप्त अनेक कुप्रथाएं-सतीप्रथा, पर्दा प्रथा, तलाक, दहेज प्रथा आदि उनकी प्रताड़ना हेतु अनुचित माध्यम थीं। उन्नीसवीं शताब्दी में राजाराममोहन राय, ईश्वरचन्द विद्यासागर, केशवचन्द्र सेन, दयानन्द सरस्वती आदि महान सुधारकों ने नारियों की मुक्ति के लिए महत्वपूर्ण कार्य किये।

किन्तु आज के युग में नारी की दशा दयनीय होती जा रही है। वह इस संसार में आने से पहले गर्भ में अपने लिए स्थान ढूढ़ती है, फिर इस समुद्र रूपी समाज में। यदि हम मानव जाति के इतिहास पर दृष्टिपात करें तो ज्ञात होगा कि जीवन में कौटुम्बिक, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, साहित्यिक, धार्मिक सभी क्षेत्रों में प्रारंम्भ से ही महिलाओं की अपेक्षा पुरूष का आधिक्य रहा है। हमारी प्राचीन परम्पराओं और समाज में फैली कुरीतियों ने महिलाओं की स्वतंत्रता का अपहरण कर उन्हें पराधीन बना दिया है। उन्हें पुरूषों की अपेक्षा कमजोर मानकर मानवीय आधिकारों से भी बेदखल कर दिया गया। सहयोगिनी या सहचरी के स्थान पर उसे अनुचरी बना दिया गया। उसके समस्त अधिकारों का हनन कर लिया गया (सरकार, 2010)।

अत्याचार क्या है

अत्याचार का यदि शाब्दिक अर्थ ग्रहण किया जाय, तो जिस आचार या व्यवहार की अति हो अर्थात् सीमा का उल्लंघन हो, वह अत्याचार की श्रेणी में आता है। हमारी नैतिक परंपरा भी अति सर्वत्र वर्जयेत की पक्षधर है। हमारे मानव अधिकार जो भारतीय संविधान में विषद् रूप में उल्लिखित हैं, का जब हनन किया जाता है तो इस कार्य को अत्याचार की श्रेणी में रखा जाता है।

भारत में महिलाओं के प्रति जितने अपराध होते हैं उतने अपराध विश्व के बहुत कम देशों में देखने व सुनने को मिलते हैं। भारत सहित विश्व के अधिकांश देशों में लगभग आधी संख्या महिलाओं की है। इसलिए महिला विहीन समाज की परिकल्पना करना असम्भव है। फिर प्रश्न उठता है कि यह समाज पुरूष प्रधान समाज क्यों है? महिलाओं पर अत्याचार क्यां

होते हैं? महिलाओं की स्थिति पुरूषों की तुलना में कमजोर क्यों है? जबकि समाज के उत्थान में महिलाओं का योगदान किसी भी प्रकार कम नहीं है। इस पर भी उनके सामाजिक और आर्थिक योगदान का मूल्यांकन नहीं किया जाता है । उनको घर और बाहर अधिकाधिक परेशानी, अपमान तथा हिंसा का सामना करना पड़ता है। हमारे देश में, दहेज, बालविवाह आदि रीति-रिवाजों को सामाजिक मंजूरी के कारण महिलाओं के प्रति अत्याचार में एक और आयाम जुड़ गया है। प्रकृति-प्रदत्त गुणों से भरपूर होते हुए भी इसने समाज में महिलाओं की स्थिति कमजोर बना दिया है। पुरुषों द्वारा महिलाओं के लिए मापदण्ड, उनके द्वारा खींची गयी लक्ष्मण रेखा, सामाजिक और पारिवारिक मानदण्ड और परम्परा से चले आ रहे संस्कारों को लेकर समय-समय पर बहुत बहस हुई किन्तु पाशविक नृशंस महिला उत्पीड़न, परिवार व समाज में उसके साथ दोहरा बर्ताव और अभिशप्त जीवन जीने के लिए बाध्य किये जाने की घटनाएं अनेकानेक कानूनी प्राविधानों के बावजूद कम नहीं हुईं बल्कि बढ़ी हैं। विडम्बना यह है कि लगभग 50 प्रतिशत आबादी का नारी समुदाय अपनी हर छोटी समस्या के लिए पुरूषों का मुखापेक्षी था और है। वर्तमान स्थिति यह है कि जंगल में अकेली जाती स्त्री को शेर-चीते जैसे हिंसक पशुओं से खतरा इतना अधिक नहीं होता जितना कामुक कुत्तों की तरह झपटने वाले मनुष्य से। पशुओं के आक्रमण से वह भले ही बच निकले परन्तु मनुष्य के व्यभिचार के कुठाराघात से बचने का कोई उपाय नहीं है। पाषाण युग के असभ्य आदिम मानव की प्रवृति प्रसारित हो रही है। आज कठोर दण्ड का भी कोई भय नहीं है (रामजादा, 2007)।

भारत में ऐसा कोई वर्ग शेष नहीं जहाँ की महिलाएं घरेलू हिंसा का शिकार न हो रही हों। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (2005-06) के जरिए महिलाओं की स्थिति जानने के लिए भारत के 29 राज्यों में सर्वेक्षण किये गये। इन सर्वेक्षणों ने जो आंकड़े प्रस्तुत किये वह महिलाओं की चितांजनक स्थिति की ओर इशारा करते हैं। सर्वेक्षण के मुताबिक भारत में विवाहित महिलाओं का एक बड़ा हिस्सा (37.2%) अपने जीवन में कभी न कभी अपने पतियों के हाथों शारीरिक या यौन शोषण का शिकार होता है। सर्वेक्षण इस तथ्य को उजागर करता है कि शिक्षा से वंचित महिलाएं पतियों द्वारा अधिक प्रताड़ित होती हैं। यदि राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो 2017 के आंकड़ों पर दृष्टि डाली जाय तो भारतीय महिलाओं की खराब दशा का साफ तौर पर पता चलता है। रिर्पोट के अनुसार हर मिनट पर एक महिला का उत्पीड़न होता है। अपनी आर्थिक उन्नति में आई हर बाधा को तोड़ने के प्रयास में जुटी भारतीय नारी आज भी सरे-राह डायन या चुड़ैल घोषित करके जला दी जाती है (लवानिया, 2005)।

उत्तरदायी कारक

महिलाओं पर बढ़ते हुए इन अत्याचारों के लिए कोई एक व्यक्ति या कारण उत्तरदायी नहीं हो सकता है। हमारे देश में महिलाओं के साथ होने वाले अपराधों को निम्न कारण प्रभावित करते हैं-

1. **समाज** - महिलाओं के प्रति होने वाले अत्याचारों में हमारी सामाजिक संरचना भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। बहुत समय से हमारे देश में लड़की के जन्म को अशुभ माना जाता रहा है। उसे एक बोझ के रूप में पराया धन मानकर उसका पालन-पोषण किया जाता रहा है। लड़की को लड़के की तुलना में हेय दृष्टि से देखा जाता रहा है। उसकी शिक्षा-दीक्षा पर भी ध्यान नहीं दिया जाता था। सामाजिक कुरीतियों एवं अंधविश्वासों ने धार्मिक विश्वास का रूप धारण कर रखा था। स्त्रियों को मृत पति के साथ जिन्दा जलने को बाध्य किया जाता था। आज महिलाएं पुरूषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर जीवन के हर क्षेत्र में कार्य कर रही हैं फिर भी उन्हें समाज में बराबरी का दर्जा प्राप्त नहीं हो रहा है (सरकार, 2010)। घर के बाहर कदम रखने के बाद नारी जीविकोपार्जन हेतु पुरूषों के समान ही संघर्ष कर रही है तथापि घर में उसकी वही आदर्श बहू वाली भूमिका अपेक्षित है। इस प्रकार उसका दोहरा शोषण हो रहा है और वह कुंठाग्रस्त होकर क्षुब्ध जीवन जीने के लिए बाध्य है। पुरूष-प्रधान सामाजिक संरचना में पुरूष मानसिक संकीर्णता से मुक्त नहीं है। आज के युग में आत्मनिर्भर होते हुए भी नारी सुरक्षित नहीं है, यह एक विचारणीय प्रश्न है। समाज और मानवीय संबंधों में परस्पर तीव्र गति से संवेदनशीलता, सौहार्द, स्नेह एवं विश्वास की कमी ने ही इस विषम समाज को जन्म दिया है। स्वार्थपरता भी मानव सम्बन्धों को कमजोर बनाने में प्रमुख भूमिका निभा रही है (अमर उजाला, 2008)। आज तथाकथित आधुनिक समाज ने केवल चोला बदला है, हृदय नहीं। अनुदार हृदय एवं जड़ मस्तिष्क युक्त समाज में कितना ही जागरण या जन चेतना का विकास किया जाय पर नारी उत्पीड़न से मुक्ति संम्भव नहीं है।

2. **नारी स्वंय उत्तरदायी है:-** हिन्दी साहित्य के समालोचकों ने संतशिरोमणि तुलसीदास को नारी निंदक कवि के रूप में स्थापित किया है। तुलसीदास जी के इस अभिव्यक्ति से सहमत हूँ कि 'मोह न नारि, नारी के रूपा' (तुलसीदास,2011,पृ.116) यदि मानस का प्रसंग ही लें तो मंथरा के माध्यम से कैकेई को यह सीख दी गयी थी कि-

कन्द्रू विनतहि दीन्ह दुःख तुम्हहि कौसिला देब |
भरतु बन्दिगृह सेइहहिं, लखनु राम के नेब॥
(तुलसीदास, अयोध्याकाण्ड)

इसी के द्वारा तीनों महारानियों ने वैभव्य एवं सीता, उर्मिला, माण्डवी ने विरह वेदना झेली। नारी ही नारी के मार्ग की बाधक रही है। वाल्मिकी के समय से इतिहास साक्षी है कि पिछली सदियों में नारी उत्पीड़न एवं शोषण से मुक्ति में पुरूष ज्यादा सहायक रहा है। अनादिकाल से जब संयुक्त परिवार प्रथा थी, परिवार में विधवाओं का अपमान और प्रताड़ना, बहुओं की प्रताड़ना में जितना हाथ स्त्रियों का रहा उतना पुरूष का शायद नहीं रहा। अस्पृश्यता को धर्म के पाखण्ड की आड़ में जितना महिलाओं ने पोषित किया उतना पुरूषों ने किया कदापि नहीं किया। आज के तथाकथित प्रबुद्ध भारतीय समाज में भी दहेज के कारण होने वाली हत्याएं या आत्महत्याओं में प्रेरक भूमिका प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से नारी की अधिक नज़र आती है। विवाह उत्सव में पुरूष सामान्यतः बहु क्या दहेज लाई है, का प्रश्न नहीं करता, न ही उस पर कोई तीखी टिप्पणी या व्यंग करता है। परिवार में यदि बहू की बेटियाँ हैं तो इसका ज्यादा प्रभाव महिलाओं पर पड़ता है। इसी का परिणाम है-कन्या भ्रूण हत्या का महापाप। बढ़ती महंगाई एवं जनसंख्या वृद्धि के युग में बच्चे दो ही अच्छे का सपना हर दम्पति का होता है। उसमें बेटा पहले हो गया तो ठीक नहीं तो यह तनाव स्त्री को ही ज्यादा होता है कि कही दूसरी संतान भी बेटी न हो जाय। इसलिए आज के भौतिकवादी तथाकथित प्रबुद्ध वर्ग में लिंग निर्धारण परीक्षण एक आम चलन हो गया है और कन्या भ्रूण की निर्मम हत्या करने का अवैधानिक व्यापार धड़ल्ले से चल रहा है। आज भी यह बातें केवल कहने के लिए हैं कि बेटे-बेटियों में हम कोई भेद नहीं मानते पर व्यवहार में नहीं है। आजकल के फैशन में बहू को बेटी मानने का पाखण्ड भी खूब फल-फूल रहा है और फिर उसी बेटी को थोड़ी सी धनलिप्सा के चलते आग में झोंक दिया जाता है (दैनिक जागरण, 2018)। जब तक नारी, नारी के प्रति संवेदनशील नहीं होगी तब तक महिलाओं पर, महिलाओं के द्वारा होने वाले अत्याचारों का सिलसिला अनवरत चलता रहेगा। आज आवश्यकता है मानसिक उदारता एवं परस्पर प्रेम व संवेदना की।

3. निरक्षरता:- गांधी जी ने कहा है कि अत्याचार करने वाले से ज्यादा दोषी अत्याचार सहने वाला है। भारतीय गाँवों में व्याप्त निरक्षरता के कारण भी महिलाएं अत्याचार एवं शोषण की शिकार हैं। वह अपने अधिकारों से अनभिज्ञ हैं। उन्होंने अपने आपको घर की चारदीवारी के अन्दर कैद एवं बंधुआ मजदूर के रूप में स्वीकार कर लिया है। अनपढ़ होने के कारण वह अपने शोषण के विरूद्व आवाज नहीं उठा सकतीं और चुपचाप मानसिक एवं शारीरिक संत्रास भोगने के लिए विवश हैं। उनका अस्तित्व केवल एक भोग्या का पर्याय बनकर रह गया है। निरक्षरता के अभिशाप से ग्रस्त अतीत की ऊर्जास्विनी नारी आज शक्तिहीन एवं दयनीय है।

4. गरीबी:- हमारे देश की जनसंख्या का एक बड़ा भाग गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन करने को बाध्य है। पेट की भूख और बच्चों की पीड़ा कभी-कभी उसे देह व्यापार एंव वेश्यावृत्ति के लिए बाध्य कर देती है। यहीं से शुरू होता है उसके दैहिक शोषण का एक अतंहीन सिलसिला । गरीबी सबसे बड़ा अभिशाप है । आदमी अपनी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए भी बड़े से बड़ा दुराचार करने को विवश हो जाता है। हमारे देश के अशिक्षित एवं अविकसित क्षेत्रों में महिलाओं पर होने वाले अत्याचारों का एक प्रमुख कारण आर्थिक विपन्नता भी है।

5. भौतिकवादी संस्कृति का विकास:- उच्च मध्यवर्गीय एवं उच्चवर्गीय समाज में पाश्चात्य सभ्यता के अंधानुकरण की प्रतिस्पर्धा ने भौतिकवादी संस्कृति का विकास किया है। सन्तोष धन को सर्वोच्च धन मानने वाले देश में भौगोलिक संसाधनों के एकत्रीकरण की होड़ सी लगी हुई है। परिणामस्वरूप लज्जा को आभूषण मानने वाली भारतीय नारी अपनी मर्यादा की लक्ष्मण रेखा का उल्लघंन कर अपनी उच्च महत्वकांक्षाओं को येन-केन प्रकारेण पूर्ण करने हेतु तत्पर हो उठी है । नारीमुक्ति आन्दोलन की समर्थक नारी कब पुरूष के स्वार्थलिप्त एवं वासना के शिकंजों में कसती गई उसे खुद भी एहसास नहीं हो पाया। इस मंहगाई के युग में हर तरह की भौतिक एवं ऐश्वर्यपूर्ण सामग्री जुटाते-जुटाते वह स्वयं शोषण एवं अत्याचार की शिकार हो गई (हिन्दुस्तान, 2018)। बन्धन भी प्रेम का दूसरा नाम है, पर आधुनिकताओं की अपरिपक्व सोच ने इसे गुलामी मान कर विद्रोह कर दिया और वह इस मकड़जाल में उलझकर अनायास अत्याचार का शिकार हो गई। आज की भौतिकवादी संस्कृति का व्यापक मोह भी महिलाओं पर बढ़ते अत्याचार के लिए उत्तरदायी है।

6. नैतिक मूल्यों का ह्रास :- छद्म आधुनिकता के नाम पर हमारे समाज का बहुत नैतिक पतन हो चुका है। हमारे पूर्वजों द्वारा स्थापित उच्च नैतिक एवं सात्विक आदर्शों को हमने रुढ़िवाद एवं पिछड़ेपन का नाम दे दिया। धर्म के प्रति हममें अनास्था का भाव आ गया है। अपनी प्राचीन संस्कृति के प्रति हमारी आसक्ति नहीं रह गई है और सबसे अहम बात है कि मानव में भगवान एवं पाप के प्रति भय नहीं रह गया है। मानव भौतिक प्रगति की चकाचौंध में आध्यात्मिक प्रगति की ओर पूर्णतः उदासीन हो गया है। इसलिए भी समाज में व्यभिचार, अपहरण, वेश्यावृति, शीलभंग की घटनाओं में वृद्धि होती जा रही है। यह सब बढ़ते प्रदूषण एवं बदलती देशकाल और वातावरण की परिस्थिति के कारण है। आज हमारे यहां सबसे बड़ी समस्या सांस्कृतिक एवं वैचारिक प्रदूषण की है। ज्यों-ज्यों हम प्रबुद्ध होते गये, हमारी कोमल एवं मानवीय भावनाएं मरती गईं और राक्षसी प्रवृतियाँ बढ़ती गईं। विनम्रता, आज्ञाकारिता, सज्जनता एवं शालीनता आज पोंगापन एवं उपहास का कारण बन गई हैं।

निष्ठा, श्रद्वा, सम्मान, दुर्लभ गुण हो गये हैं। नारी के प्रति सहज सम्मान का भाव जो हमारी सांस्कृतिक विरासत है तिरोहित होता जा रहा है। अब हम उपभोक्तावादी संस्कृति के शिकार हो रहे हैं। यदि यही स्थिति रही तो वह दिन दूर नहीं जब हम पुनः आदिम युगीन मानव का प्रतिनिधित्व करने लगेंगे (रस्तोगी एवं जैन, 2005)।

निष्कर्ष

आज आवश्यकता है हमारे ऋषिमुनियों द्वारा स्थापित उच्च मानव मूल्यों के पुनर्स्थापन की, ईश्वर की सत्ता में विश्वास जागृत करने की ताकि हम एक स्वस्थ, सुसंस्कृत एवं सभ्य समाज की स्थापना में सहायक हों जिससे नारी के प्रति बढ़ते अत्याचारों का एकजुट होकर विरोध व उन्मूलन कर सकें और नारी को दलित के स्थान पर पूजिता का सम्मान लौटा सकें। नारी ही शक्ति है, ऊर्जा है, सृष्टिकर्ता है। उसको सम्मानित स्थान दिलाकर हम अपने देश का मस्तक विश्व में उँचा कर सकते हैं। नैतिक उत्थान में ही सामाजिक एवं राष्ट्रीय उत्थान निहित है।

संदर्भ सूची

मनीष मिश्रा (2007), महिलाओं पर बढ़ते अत्याचार-उत्तरदायी कौन, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, 2007,

अजीत रामजादा (2007), महिला उत्पीडन-समस्या और समाधान, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, 2007,

मोहन कुमार सरकार (2010), नारी की आजादी- पिंजड़े के बाहर की परवाज, धर्मयुग

एम.एम.लवानिया (2005), भारतीय महिलाओं का समाजशास्त्र, रिसर्च पब्लिकेशन, जयपुर, 2005, पृ0 51-58

दया प्रकाश रस्तौगी एवं रीनू जैन (2005), भारतीय समाज में नारी, साधना प्रकाशन सुवाश बाजार मेरठ, 2005,

अमर उजाला, मेरठ, 27 अप्रैल, 2008

तुलसीदास (2011),रामचरित मानस,गीता प्रैस गोरखपुर

तुलसीदास (2014), आयोध्यकाण्ड,रामचरित मानस,गीता प्रैस गोरखपुर

दैनिक जागरण, गोरखपुर -24 नवम्बर 2018

हिन्दुस्तान, गोरखपुर-14 अक्टूबर, 2018

जनसंचार माध्यमों में सत्याग्रह की समझ

डॉ. अमित राय*

सारांश

इस लेख में जनसंचार माध्यमों खासकर सोशल मीडिया नेटवर्किंग के प्रतिरोधी चरित्र को समझने की कोशिश की गयी है जहाँ वैश्विक लामबंदी के पर्याप्त अवसर नज़र आते हैं,बस देखना यह है कि इसकी दिशा क्या होगी। प्रश्न है कि कानून व्यवस्था बनाने वाले,जनसमूह की लामबंदी के पूर्व,उसके दौरान और उसके बाद में मीडिया एक्टिविस्टों को क्यों लक्षित करते हैं ? सामान्यतया वह स्वतंत्र मीडिया से भय क्यों खाते हैं ? एक तरफ विश्व में कुछ सालों पहले 'इंडीमीडिया' और अन्य डिजिटल नेटवर्क ने खासकर वैकिल्पक सूचना और समाचारों को वितरित करने में,कई सौ हजार लोगों को एंटी कारपोरेट, ग्लोबलाज्ड बनाने में मदद की है । इसका व्यवहारिक प्रभाव काफी पड़ा है । एक तरफ मीडिया एक्टिविज्म और डिजिटल नेटवर्किंग ने समकालीन एंटी कारपोरेट मूवमेंट के तौर पर लोगों के सामने महत्वपूर्ण बिंदु रखे हैं | यह एक तरह से कम्युनिकेशन अंतरराष्ट्रीयतावाद को जन्म दे रहा है। इस लेख में जनसंचार माध्यमों के खासकर न्यू मीडिया (इंटरनेट) के माध्यम से किये जा रहे सत्याग्रहों के वैश्विक चरित्र को समझने की कोशिश की गयी है।

बीज शब्द: जनसंचार माध्यम, सत्याग्रह, डिजिटल नेटवर्क, एंटी कॉरपोरेट मूवमेंट

भूमिका

सांस्कृतिक मनोविज्ञान यह मानता है कि मनुष्य का आचरण और भावनाएं संस्कृति-सापेक्ष होने के कारण उनके बारे में कोई सार्वभौमिक सिद्धांत नहीं बनाए जा सकते। किसी व्यक्ति का हिंसक होना या न होना उस सांस्कृतिक मानसिकता पर निर्भर करता है, जिसमें उसका पालन-पोषण हुआ है। मानव-प्रकृति के रुप में आक्रामकता का अध्ययन इस मान्यता की पुष्टि करता है। मनोवैज्ञानिकों में आक्रामकता की परिभाषा और व्याख्या को लेकर कुछ मतभेद रहे हैं और कुछ लोग आत्मरक्षात्मक आक्रामकता को आक्रामकता के रुप में स्वीकार नहीं करते लेकिन आत्मरक्षात्मक आक्रामकता भी यह तो सिद्ध करती ही है कि यह आक्रामकता अंतर्जात नहीं बल्कि स्थिति सापेक्ष है और एक स्थिति में दो भिन्न संस्कृतियों में दीक्षित व्यक्ति भिन्न आचरण कर सकते हैं। इस लेख में इन्हीं स्थितियों को विश्लेषित करते हुए जनसंचार माध्यमों से प्रतिरोध के संबंधों को अहिंसक माध्यमों के

* लेखक महात्मा गांधी अन्तर्राष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा में सह-प्राध्यापक हैं |

प्रतिरोधों से समझने की कोशिश की गयी है।

प्रिंट क्रांति से पूर्व सत्ता संरचना पर नजर डालें तो पता चलता है कि जिस आध्यात्मिक ज्ञान के आधार पर अभिजात्य वर्ग ने अपनी इजारेदारी कायम की थी, प्रिंट क्रांति के पश्चात जब वही ज्ञान लोगों के हाथों में पहुँचा तो आध्यात्मिक ज्ञान के भय की सत्ता की इजारेदारी खत्म हो गयी | तब एक तरह से प्रिंट ने प्रतिरोध की भूमिका का निर्वहन किया | कहा जा सकता है कि प्रिंट क्रांति अपने जन्म से ही प्रतिरोधी रही है। इस इजारेदारी के खत्म होने के साथ ही अभिजात्य ताकतों ने इलेक्ट्रानिक मीडिया का विकास किया और आज संसार के समस्त साधनों पर वैश्विक रूप से उन्हीं का एकाधिकार है और अब यह स्थिति है कि उस एकाधिकार को खत्म करने के लिए नागरिक समाज के सामने कोई विकल्प नहीं है | तब प्रश्न उठता है कि क्या हमें पूंजीवाद के अपनी कमजोरियों से ढह जाने का इंतजार करना चाहिए या फिर प्रतिरोध के स्वरूपों में भी बदलाव किया जाना चाहिए ताकि इन साधनों का प्रयोग प्रतिरोध के लिए किया जा सके? न्यू मीडिया के आने के बाद प्रतिरोध के नये तरीके क्या-क्या हो सकते हैं, पारंपरिक प्रतिरोधों से वह किस प्रकार भिन्न हो सकते हैं, क्या ये प्रतिरोध पारंपरिक तरीके से प्रतिरोधों की तरह प्रभावी हैं या क्या इन प्रतिरोधों ने पूरी तरह पारंपरिक प्रतिरोधों का स्थान ले लिया है। यह जानना काफी दिलचस्प है।

"सफल प्रदर्शन आवश्यक रूप से वही नहीं होते जिनमें बहुत बड़ी संख्या में लोग भाग लेते हों, बल्कि वह होते हैं जो पत्रकारों के बीच कौतुक का विषय बन सकें। थोड़ी सी अतिशयोक्ति के साथ यह कहा जा सकता है कि पचास चतुर व्यक्ति यदि ऐसा कुछ कर पाते हैं जिसे टेलीविजन पर पांच मिनट का समय मिल सके तो उनका राजनैतिक प्रभाव पांच लाख प्रदर्शनकारियों से कहीं अधिक होता है" (पियरे बोरदियू 1994) |

पियरे बोरदियू (1994) की इस टिप्पणी को आज 21 वीं सदी के नये मीडिया के संदर्भ में वैश्विक रूप से देखें तो निश्चित तौर पर प्रतिरोध के ग्लैमराइजेशन की वैधता खासकर नग्न प्रतिरोधों, मानव श्रृंखला आदि नये प्रतिरोधों के संदर्भ में समझा जा सकता है।

दरअसल मीडिया तकनीकी के आने से भी सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तन हुए जो अलग किस्म के थे। 18 वीं और 19 वीं सदी में प्रेस का विस्तार हुआ, 20 वीं सदी में इलेक्ट्रानिक मीडिया का और 20 वीं सदी के अंत में न्यू डिजिटल तकनीकी का उदय हुआ। डिजिटल तकनीकी के आने से प्रतिरोधों के चरित्र में भी वैश्विक स्तर पर काफी बदलाव आया है। अहिंसक क्रांतियों के प्रतीकों में भी एक खास तरह की भिन्नता आयी है। प्रतीकों के रूप में अब राष्ट्र के विशिष्ट प्रतीकों के रंगों का इस्तेमाल भी इन प्रदर्शनों के आकर्षण को बढ़ाने और अपने राजनैतिक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए किया जाने लगा है । इस दौर में अहिंसक क्रांतियों का स्थान अब रंगीन क्रांतियों ने ले लिया है जैसे जार्जिया की गुलाबी

क्रांति (रोज़ रिवहल्यूशन), यूक्रेन की आरेंज क्रांति, मध्यपूर्व के लेबनान की सीडार क्रांति, बेलारूस की बनाना क्रांति, माल्दोआ की ग्रेप रिवहल्यूशन आदि और हाल ही में ट्युनीशिया और मिस्र में हुई जास्मीन क्रांति। इन क्रांतियों के पीछे भले ही एक खास एकाधिकार या सामरिक नीति की बात हो किंतु निश्चित तौर पर कहा जा सकता है कि इन क्रांतियों ने एक खास तरह के उद्देश्यों को लेकर लोगों को लामबंद करने का महत्वपूर्ण कार्य किया है। एक बड़े विवाद का विषय है कि अधिकतर विद्वान इन्हें मुख्यधारा के प्रतिरोध या कहें कि प्रतिरोध ही मानने से इंकार करते हैं और उच्छृंखलता या देह प्रदर्शन को सांस्कृतिक नैतिकता से जोड़कर देखते हैं। खासकर वह जो साधन और साध्य की शुचिता की बात को देखते हैं।

एक अहिंसक क्रांति वह क्रांति है जिनमें सरकार को अहिंसक प्रतिरोध के जरिए निरंकुशता के खिलाफ लोकतंत्र को स्थापित करने या उनके देश की स्वतंत्रता के लिए घेरा जाना ही अहिंसक क्रांति है जो प्रदर्शनकारियों के विरूद्ध सरकार द्वारा नियंत्रण के लिए दमन के बावजूद संभव होती है। साधारणतया माना जाता है कि अधिकतर क्रांतियां जो तानाशाही के विरूद्ध की गई हैं वह खूनी क्रांति थीं या ऐतिहासिक विश्लेषण से हिंसा का जन्म नहीं हुआ है।

20 वीं शताब्दी में अहिंसक क्रांति अधिक सफल हुई है, खासकर शीत युद्ध के समय राजनैतिक सहयोगिता ने सहसरकारी लहर को सहयोग किया। 1970 और 1980 में सोवियत संघ के और अन्य समाजवादी तानाशाही में नागरिक प्रतिरोध को मजबूत किया और समिजडैट (राज्य द्वारा प्रतिबंधित साहित्य की नकल और वितरण) का विस्तार किया। 1980 में दो बड़ी क्रांतियों ने राजनैतिक आंदोलन का अनुकरण किया। पहली अहिंसक क्रांति 1986 की पीपुल पावर शब्द क्रांति थी जो फिलीपीन्स में हुई जिससे 'पीपुल पावर' शब्द आया वहीं तीन साल बाद हिस्पेनिक और एशियाई देशों के पूर्वी ब्लाक में 1989 में सामंतवादी तानाशाही के विरूद्ध क्रांति में इसका व्यापक रूप से उपयोग हुआ (Jeffrey A. Turner,2010)। यह विचार जब पुनः सशक्त हो रहा था तब वह वर्ष पुलिस विधानसभा चुनाव में एकता की विजय की शुरूआत था। 1989 की क्रांति ने रंगीन क्रांतियों के लिए विशेषकर प्रो-कम्युनिस्ट स्टेट में एक महत्वपूर्ण आधार दिया। इसमें एक रंग या फूल का इस्तेमाल एक प्रतीक के बतौर किया जाने लगा और इस तरह इसे चेकोस्लोवाकिया में बेल्वेट क्रांति के बाद नाम दिया जाने लगा।

दिसंबर 1989 में पूर्वी ब्लॉक की क्रांतियों से प्रेरणा पाकर मंगोलियन डेमोक्रेटिक यूनियन (एम.डी.यू.) ने समाजवादी तानाशाही के खिलाफ प्रसिद्ध स्ट्रीट प्रतिरोध और भूख हड़ताल का आयोजन किया। 1990 में विचारकों ने तानाशाही के विरूद्ध एजटवहजान

सोवियत समाजवादी रिपब्लिक ने नागरिक प्रतिरोध शुरू किया। परंतु यह ब्लैक जनवरी नरसंहार में रेड आर्मी के द्वारा कुचलने की शुरूआत था। वर्तमान अहिंसक क्रांतियाँ जिनमें आरेंज रिवहल्यूशन शामिल हैं जिसने नागरिक अवज्ञा, धरना और हड़तालों की श्रृंखला के द्वारा प्रकाशित किया गया है, ऐसा आंदोलन विपक्षियों द्वारा संगठित होकर किया गया है।

अहिंसक आंदोलन की शुरूआत महात्मा गांधी के सत्याग्रह के दर्शन में निहित है जिन्होंने ब्रिटेन से भारत को स्वतंत्रत कराने के लिए लोगों का नेतृत्व किया। भारत के विभाजन की हिंसा के बावजूद एवं कई क्रांतियों के उदय जो गांधी के नियंत्रण में नहीं थीं, के बावजूद भारत ने वैध प्रक्रिया के तहत बजाय सैनिक क्रांति के एक राष्ट्रीय प्रतिरोध के माध्यम से आजादी प्राप्त की। चौथा समाजवादी अंतरराष्ट्रीय लेख के अनुसार कार्ल मार्क्स ने 'शांतिपूर्ण' क्रांति की संभावना के सिद्धांत को स्वीकार किया। परंतु चौथा अंतरराष्ट्रीय लेख यह भी कहता है "सैनिक शक्ति के साथ विकास और अच्छे संबंधों का संरक्षण एक निश्चित क्रांतिकारी कार्य के लिए तैयारी के लिए पर्याप्त है।" कुछ का मानना है कि एक अहिंसक क्रांति की आवश्यकता सैनिक शक्ति के साथ भाईचारा के विचार में निहित है, जैसे सापेक्षिक रूप से अहिंसक पुर्तगाली कार्नेशन क्रांति में हुआ था (Arsenault, Raymond,2006).।

अहिंसात्मक आंदोलनों का प्रचार-प्रसार राजनैतिक जीवन का एक हिस्सा है जिसे पूरी शताब्दी में अथॉरिटी द्वारा चुनौती का सामना करना पड़ा है। इससे सामाजिक सुधार हुए हैं और दमन समाप्त हुआ है। हाल के वर्षों में यद्यपि इस तरह के आंदोलनों में वृद्धि हुई है और इन्होंने न केवल राजनैतिक और सामाजिक सुधार किए हैं बल्कि सरकारों को भी सत्ता से उखाड़ फेंका है और सत्ता संरचना की प्रकृति में भी परिवर्तन किया है। 20वीं सदी में अहिंसा सामाजिक परिवर्तन का एक महत्वपूर्ण साधन बनकर उभरा है।

वास्तव में पिछले 60 साल अहिंसक आंदोलन इतिहास के गवाह रहे हैं। कई व्यक्तिगत क्रांतियों ने व्यापक रूप से मीडिया को आकर्षित किया है और बड़े लोकतांत्रिक आंदोलनों का परीक्षण भी किया है। यद्यपि ऐसी जगहों पर जहां गुरिल्ला युद्ध तकनीक का इस्तेमाल होता था वहां भी अब स्वतंत्रता प्राप्ति के संघर्ष और सांस्कृतिक आंदोलन का स्थान अहिंसा ने ले लिया है। हाल के दशकों में इसके व्यापक प्रसार के बावजूद और 20वीं सदी के जियोपॉलिटिक्स के शिफ्टिंग में केंद्रीय भूमिका के अहिंसा को, सामाजिक परिवर्तन को महत्वपूर्ण तकनीकी के बतौर हम कम ही जान पाये हैं। अहिंसा अब भी मुख्यधारा की अकादमिक श्रेणी में नहीं है।

बहुत सारे लोग जो अहिंसक कार्य में भाग लेते हैं वह वास्तव में इसके दर्शन से जुड़े हुए नहीं होते और अपने कार्यों को अहिंसक कहना भी नहीं जानते। बहुत लोगों को यह

जानकर आश्चर्य होगा कि रणनीतिक अहिंसा में पूर्णतः प्रवीण हैं या ऐसा अहिंसा के दायरे में उन्होंने हमेशा किया है, जब वह हड़ताल पर गये, याचिका पर दस्तखत किए, बॉयकाट में भागीदारी की, मोमबत्ती जलाकर खड़े हुए या रात्रि जागरण में भागीदारी की। जहां एक तरफ हवा में बम फोड़ने को राष्ट्रगीतों, मुख्य समाचारों और राष्ट्रीय बजट में मुख्य स्थान दिया जाता है तथा लोक कथाओं और बॉक्स ऑफिस के गीतों में प्रतिशोध की भावना का गुणगान किया जाता है, वहीं दूसरी तरफ अहिंसक रणनीतियों का प्रयोग व्यवहार में अधिकतर किया जाता है और यह हिंसक गतिविधियों से अधिक सफल रहीं हैं। अधिकांश लोग जिन्होंने अहिंसक विधियों पर सफलतापूर्वक विश्वास किया है वह सरल रूप से समझ गए हैं कि इसे अन्यायमुक्त परिस्थितियों के विरोध में सीधी मनःस्थिति या सहभागिता से इनकार होना चाहिए।

सिद्धांतकार जीन शार्प ने अहिंसात्मक क्रियाओं की तीन मूलभूत श्रेणियां बताईं। प्रथम अहिंसक विरोध और प्रबोधन, इस वर्ग में याचिका दायर करना, प्रदर्शन करना और संगठन बनाना आदि को सम्मिलित किया जा सकता है। दूसरा वर्ग है 'अहिंसक असहयोग' इस वर्ग में बहिष्कार करना, हड़ताल करना और टैक्स न चुकाना आदि शामिल है। तीसरी श्रेणी है 'अहिंसक हस्तक्षेप', इस वर्ग में शारीरिक रूप से हिस्सेदारी कर अहिंसक तरीकों से बाधा डालना, अवरोध बनाना, सविनय अवज्ञा और धरना प्रदर्शन आदि आते हैं।

जनसंचार माध्यम और अहिंसक आंदोलन

भारत के इतिहास में कई आंदोलनों जिन्होंने अहिंसक (Non-Violence) या शांतिवाद (Pacifism) के दर्शन को आगे बढ़ाया और अहिंसक कार्यों को अपनाया है उन्होंने सफलतापूर्वक सामाजिक और राजनैतिक लक्ष्यों को पाया है। उन्होंने अहिंसक प्रतिरोध की रणनीतियों से एक पूरी पीढ़ी को प्रशिक्षित किया है जैसे- सूचना बारफेयर (Warfare), पिकेटिंग (Pickets), विजिल्स (Vigils), लीफलेट्स (Leaflets), समिजडेट (Samizdat), मैंगनीटिज्ड (Magnetize), सत्याग्रह, प्रोटेस्ट आर्ट (Protest Art), प्रोटेस्ट संगीत (Protest Music) और कविताएं, सामुदायिक शिक्षा और चेतनावर्धन, लामबंदी (Mobilization), कर न चुकाना, सिविल अवज्ञा (Civil Disobedience), बॉयकाट (Boycott) या कानून तोड़ना, वैध/कूटनीतिक रेसलिंग, सबोटेज भूमिगत रेल रोड, सैद्धांतिक रूप से पुरस्कार या सम्मान ग्रहण न करना, धरना देना (Dharana), सामान्य हड़ताल (Strikes)आदि लेकिन आज इनके स्वरूप में एक ख़ास तरह का बदलाव राष्ट्रीय स्तर से लेकर अंतर्राष्ट्रीय स्तर तक देखने में आ रहा है।

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद हुए सांस्कृतिक परिवर्तनों और तकनीकी परिवर्तनों के

चलते नग्न प्रतिरोधों (Naked Protest) का प्रचलन बढ़ा है | हालांकि सार्वजनिक नग्नता कभी-कभी प्रदर्शन को अधिक आकर्षित बनाने के लिए एक रणनीति के बतौर दुखोबोर्स के द्वारा सबसे पहले 20 वीं शताब्दी में उपयोग में लायी गई। बाद में (खासकर 1909 के बाद) इसका व्यापक प्रसार हुआ। आधुनिक नारे इसमें शामिल हुए 'निशस्त्रीकरण के लिए कपड़े उतारना' 'शांति के लिए नग्नता' Less Gas More Ass' 'फर पहनने की बजाय मैं नग्न रहूंगा' आदि-आदि। विश्व में कई तरह की संस्थाएं हैं जो नग्न प्रदर्शनों के माध्यम से अहिंसक प्रतिरोध करती हैं जैसे - पेटा (PETA,पीपुल फॉर इथिकल ट्रीटमेंट ऑफ एनीमल्स)। यह जानवरों के अधिकारों के लिए लड़ने वाला समूह है और अपने नग्न प्रदर्शनों के लिए मशहूर है | प्रत्येक वर्ष पेटा के कार्यकर्ता पूरे पेंपलोना में नग्न होकर दौड़ते हैं ताकि स्पेन में बैलों को लड़ाने की परंपरा समाप्त हो। कई समूह और व्यक्तियों ने नग्नता को 'Breast Not Bombs' 'Assist For Peace /Artists Against War' युद्ध विरोधी प्रदर्शनों के लिए उपयोग किया, कुछ समूह इस तरह के नारों का समावेश करते हैं।

भारत में 2004 में मणिपुर में भी सैनिक दमन के खिलाफ महिलाओं ने मिलिट्री ऑफिस के सामने नग्न प्रदर्शन किया। इसके अलावा सर मुड़वाकर प्रदर्शन करना, जल सत्याग्रह (Water Satyagrah), सांस्कृतिक प्रतिरोधों (Cultural Resistance) मसलन वृत्तचित्रों (Documentary), कार्टूनों के माध्यम से किये जाने वाले प्रतिरोध,मोमबत्ती जलाकर किये जाने वाले प्रतिरोध, मानव श्रृंखला (Human Chain) बनाकर किये जाने वाले प्रतिरोध आदि तरीकों का इस्तेमाल लगातार प्रचलन में आ रहा है। इसके अलावा विभिन्न एसएमएस माध्यमों और सोशल नेटवर्किंग साइट्स (Social Networking Sites) भी जैसे फेसबुक (Facebook), ट्विटर (Twitter), व्हाट्स एप (Whatsapp) आदि पर लोग स्वयं को अभिव्यक्त कर पा रहे हैं और आंदोलन या प्रदर्शन के स्वरूप को एक वैश्विक पटल पर रख पा रहे हैं।

अधिक संख्या में उभरे नग्न प्रतिरोध में पश्चिमी महिलाएं प्रभावी रहीं | कईयों ने ईराक में यूएस मिलिट्री के खिलाफ प्रतिरोध किया, युद्ध विरोधी नारों को अपनी देह पर लिखा। पूर्ण स्वरूप में लेने पर यद्यपि नग्न प्रतिरोध नस्ल, राष्ट्रीयता और जेंडर से परे सभी प्रकार के प्रतिरोधों को अपने में समाहित करता है। उनमें सभी क्षेत्रों के भूमंडलीकरण विरोधी सक्रियतावादी (Activist) शामिल हैं ; ब्रिटिश पुरुष और महिलाएं लोमड़ी के शिकार के खिलाफ प्रतिरोध कर रहीं हैं। द. अफ्रीकी महिलाएं गंदी बस्तियों की सफाई और भारतीय महिलाएं पुलिस, फौज की कठोरता के खिलाफ प्रतिरोध कर रही हैं | यहां तक कि युद्ध विरोधी आंदोलन मार्च 2003 के एक सप्ताहांत में काफी फैला | कैलिफोर्निया की महिलाएं (60 नग्न महिलाएं जो 'शांति'(Peace) शब्द उच्चारित कर रही थीं) और आस्ट्रेलियन

महिलाएं (250 'नो वार' No War अपनी देह पर लिखकर) प्रदर्शन कर रही थीं (आर बारकन 2001)। ऐसे कई प्रदर्शनों के उदाहरण देखे जा सकते हैं। यह काफी दिलचस्प है कि इस तरह के प्रतिरोधों की कोई खास विचारधारा नहीं है और हर तरह की विचारधाराओं से मुक्त एक विचारधारा भी है इसलिए एक नये तरह की गुंजाइश भी प्रतिरोध के स्तर पर बनती नजर आ रही है।

न्यू मीडिया और नेटवर्क सपोर्टेड प्रतिरोध

सामाजिक नेटवर्क के संबंध में बेरी वहलमैंन का मानना है कि कम्प्यूटर सपोर्टेड सोशल नेटवर्क (CSSN) समुदाय सामाजिकी और वैयक्तिक संबंधों को रूपांतरित कर रहा है: यद्यपि वैयक्तिकता के बढ़ने के साथ लोगों के बीच के आपकी संबंधों में दूरियां आई हैं और समुदाय बिखरे हैं किंतु कम्प्यूटर मेडिएटेड संचार व्यवस्था ने इनको खत्म किया है और इन्हें नयी ऊर्जा प्रदान की है (बेरी वहलमैंन 2001)

इंटरनेट ने भी दैनिक सामाजिक जीवन के सभी पक्षों को बतौर आभासी और भौतिक कार्यकलापों को बढ़ाया है। दुर्भेद्य डिजिटल भेदों के ह्रास के बावजूद इंटरनेट ने वैश्विक जुड़ाव को स्थानीय स्तर पर आस-पड़ोस से जोड़ा है और "ग्लोकलाइजेशन" को बढ़ाने में नेतृत्व किया है (वैलमैंन 2001, 236ब. राबर्टसन 1995)। इसी प्रकार राजनैतिक गतिविधियों के स्तर पर भी एक समान जुड़ाव देखा गया है,जहां इंटरनेट के उपयोग (इसमें ई-मेल लिस्ट, आकर्षक वेब पेज और चैट रूम शामिल है) ने समाज के लिए नए तरह के उद्देश्यों का नया पैटर्न स्थापित किया है। एंटी कारपोरेट मूवमेंट इसी तरह का 'कम्प्यूटर सपोर्टेड सोशल नेटवर्क" का उदाहरण है। इंटरनेट के माध्यम से यह आंदोलन स्थानीय, क्षेत्रीय और वैश्विक स्तर पर अपने को संचालित करता है।

क्षैतिज नेटवर्किंग के तर्क जो कि डिजिटल मीडिया तकनीकी ने उपलब्ध कराया है,इसने न केवल नेटवर्क सामाजिक आंदोलन की प्रक्रिया को प्रभावी ढंग से संगठित करना सुलभ कराया है बल्कि सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक संगठनों के वैकल्पिक रूपों के व्यापक मॉडल भी उपलब्ध कराये हैं।

सिएटल में वर्ल्ड ट्रेड आर्गेनाइजेशन के खिलाफ प्रदर्शनों के बाद से ही मीडिया एक्टिविज्म और एंटी कारपोरेट मूवमेंट की शुरूआत हो चुकी थी और बाद में पेरूग्वे, क्यूबेक, जेनेवा, बार्सिलोना, पोर्ट अलेग्री और अन्य शहरों में सक्रियतावादियों ने ई-मेल लिस्ट, वेब पेज और खुला संपादकीय सॉफ्टवहयर के माध्यम से संगठित कार्य किये, अपनी सूचनाओं को शेयर किया, सामूहिक दस्तावहजों का प्रस्तुतिकरण किया और वैश्विक स्तर पर प्रतिरोध को दर्ज किया। अराजकतावाद से प्रेरणा पाकर और पीयर टू पीयर नेटवर्किंग, एंटी कारपोरेट ग्लोबलाइजेशन कार्यकर्ताओं ने न केवल न्यू मीडिया तकनीकियों का उपयोग

सुदृढ़ नेटवर्किंग साधनों के लिए किया बल्कि उभरते नेटवर्किंग आधार पर वैकल्पिक राजनीतिक यूटोपिया की संभावनाएं भी तलाशीं। प्रतिरोध के नए माध्यमों की लोकतांत्रिक और सांगठनिक क्षमता के संदर्भ में मीडिया सक्रियतावाद, स्वतंत्र मीडिया, सांस्कृतिक जैमिंग और इलेक्ट्रॉनिक्स सविनय अवज्ञा को समझने की आवश्यकता है।

निष्कर्ष

सारांशतः यह कह सकते हैं कि एक्टिविस्ट सूचनात्मक यूटोपिक्स के व्यवहार के द्वारा एक न्यू डिजिटल मीडिया संस्कृति को बना रहे हैं जिसमें नेटवर्क स्पेस के उदय हो रहे विभिन्न रूपों के क्षैतिज गठबंधन और खुली सहभागिता संबंधित यूरोपियन आदर्श शामिल हैं जिसमें नयी तकनीकी के प्रयोगों का प्रादुर्भाव भी हुआ है।

यद्यपि कारपोरेट ग्लोबलाइजेशन के विरूद्ध पूरे विश्व में नयी डिजिटल तकनीकी के उपयोग ने कई सौ हजार लोगों को लामबंद करने में सहायता की है और अब देखना यह है कि भविष्य में नयी क्षैतिज नेटवर्किंग व्यवहार जीवन में कितनी सहायता कर सकती है। यह साफ तौर पर बार्सिलोना में एंटी कारपोरेट ग्लोबलाइजेशन के खिलाफ हुए न्यू मीडिया प्रोजेक्ट से ही प्रेरणा पाकर शुरूआत हुई है जिसे "इनफोस्पेस" कहा गया। यह भौतिक औजारों जिसमें इंटरनेट सर्वर,सामाजिक आंदोलन,डायरेक्टरी,प्रकाशन और संपादन भी शामिल हैं सबको जोड़ती है,भौतिक और आभासी इसलिए इसमें अंतरग्रंथित हैं| उदाहरण के लिए सक्रियतावादी सामूहिक रूप से दस्तावहजों को जो वास्तविक विश्व से संबंधित है जैसे इंटरनेट आधारित गठबंधन सॉफ्टवहयर (ट्वीकी) का उपयोग करते हैं जबकि आभासी परियोजनाएं ऑनलाइन और ऑफ़लाइन दोनों ही तरह के आपसी व्यवहार के माध्यम से कोआर्डीनेट होतीं हैं। इस परियोजना के भविष्य के लक्ष्य के संबंध में पाओ कहते है कि "हम नेटवर्किंग आन्दोलनों के द्वारा और सरकार का इंतजार किये बगैर स्वयं की वैकल्पिक व्यवस्था बनाकर और अन्यों की अपने लक्ष्यों को पाने में सहायता करके स्वायत्त प्रतिशक्ति का निर्माण कर रहे हैं,बार्सिलोना और अन्य जगहों में सक्रियतावादी तकनीक में परिवर्तन के साथ ही सामाजिक रूपांतरण को भी आगे बढ़ा रहे हैं"। राजनीतिक स्तर पर इलेक्ट्रॉनिक्स लोकतंत्र की वकालत करने वाले इस बात में रूचि ले रहे हैं कि साइबर स्पेस की तकनीकी संभावनाएं न केवल इंटरनेट के द्वारा बल्कि सामूहिक रूप से ऐसी समस्याओं जिनसे लोग सीधे प्रभावित हो रहे हैं उनके स्पष्ट समाधान के द्वारा भी व्यापक पैमाने पर प्रत्यक्ष लोकतंत्र के नये रूपों को बनातीं हैं। (लेवी 2001, 176) | एंटी कारपोरेट ग्लोबलाइजेशन के सक्रियतावादियों ने यूरोपियन सामाजिक कंसलटेंस को भी डिजिटल नेटवर्क के माध्यम से बनाया है जहां स्थानीय असेंबली को क्षेत्रीयता से जोड़कर राजनैतिक विकल्पों और संसाधनों के वितरण का कार्य कर रहे हैं।

यद्यपि यह लंबी प्रक्रिया एक परियोजना की तरह है जो सूचनात्मक यूटोपिक्स के व्यवहार में लगीं हैं | सामान्यतः इसके परिणाम जल्दी ही नहीं मिलने वाले, इसलिए इन्हें अन्य दृष्टि से भी देखा जाना चाहिए। वास्तव में अल्बरतो मेंलुकी (1989 ए 75) मानते हैं कि नये सामाजिक आंदोलन सांस्कृतिक नवाचारी हैं जो प्रभावी सांस्कृतिक कोड को चुनौती देते हैं जबकि लगातार व्यवहार और सामाजिक संबंधों के नये-नये प्रारूप हमारे जीवन में रोज ही सामने आ रहे हैं । समकालीन एंटी कारपोरेट, ग्लोबलाइजेशन आंदोलनों को वैकल्पिक मूल्यों, विमर्शों और अस्मिताओं के उदय से परे सामाजिक प्रयोगशाला, नये सांस्कृतिक व्यवहार और डिजिटल समय के लिए राजनैतिक स्वप्न की तरह समझा जा सकता है।

संदर्भ सूची

Waterman,P. (2001). Globalization, Social Movements and The New Internationalism, Continuum Publisher.

(Bourdieu (1994). Pierre Bourdieu, La Distinction:critique Sociale du Fugement (paris,1979), English trs: Dstinction: a social critique of the fugement of Taste (Cmbridge,MA,1984)

Jeffrey, A. T. (2010).Sitting in speaking out, University of Georgia Press.

Arsenault, R. (2006). Freedom Riders.Oxford University Press.

बारकन आर. (2001). 'द मोरल बाथ ऑफ बॉडिली अनकान्शसनेस': फीमेल न्यूडिज्म, बॉडिली एक्सपोजर एंड द गेज कंटीनुअम: जर्नल ऑफ मीडिया एंड कल्चरल स्टडीज, पेज 303-317

Wellman, B. (2001). Physical place and cyber place, International Journal of Urban and Regional Research) p 27-52

(Robertson, R. (1995). Globalization in Global Modernity, ed. Mike Featherstone. Sage Publication.

Levy, P. (2001). Cyberculture, Minnepolis:University of Minnesota Press.

(Melucci A. (1989).Nomads of the present Philadelphia : Temple University Press.

इंटरजनरेशनल जस्टिस और इको फेमिनिज्म

डॉ. चित्रा माली*

सारांश

प्रस्तुत लेख में इंटर जनरेशनल जस्टिस जिसे सनातन न्याय कहा जाता है। व्यापक परिदृश्यों में विशेषकर विकास बनाम आंदोलनों के संदर्भ में समझने का प्रयास किया गया है । साथ ही पर्यावरण को लेकर वैश्विक स्तर पर किये जाने वाले प्रयासों को भी सम्मिलित किया गया है जिसमें कुछ प्रमुख आंदोलनों जैसे श्री काकुलम आंदोलन, बोध गया का भूमि आंदोलन, गन्धमर्दन आंदोलन,अप्पिको आंदोलन,चिलका झील आंदोलन,झारखंड का पोटका आंदोलन,महाराष्ट्र के जैतपुर में आणविक संयंत्र के लिए भूमि अधिग्रहण के खिलाफ,उड़ीसा में वहदांता कंपनी द्वारा बॉक्साइट खनन के खिलाफ,बंगाल के नंदीग्राम में सेज के खिलाफ आंदोलन एवं बड़े आन्दोलन जैसे नर्मदा बचाओ आंदोलन,चिपको आंदोलन के माध्यम से जल,जंगल और जमीन के प्रश्नों पर विचार किया गया है । इसमें पर्यावरणीय नैतिकता के मूल्यों की आवश्यकता पर विशेष रूप से बल दिया गया है।

बीज शब्द : सनातन न्याय, इको फेमिनिस्म, पापुलर आन्दोलन, सतत विकास

भूमिका

इंटरजनरेशनल जस्टिस जिसे 'सनातन न्याय' कहा जाता हैं (आचार्य नंदकिशोर,2013) । यह प्रकृति के साथ मनुष्य के संबंधों को और मनुष्य के व्यवहार को पर्यावरणीय नैतिकता से जोड़ने का कार्य करता है,जिससे आने वाली पीढ़ियों के लिए पर्यावरण को संरक्षित रखा जा सके। पर्यावरण का जो संरक्षण हमें प्राप्त है,उसे आने वाली पीढ़ियों के लिए भी संरक्षित और संवर्धित रखने का जिम्मा भी हम सभी का है । इंटरजनरेशनल जस्टिस को वर्तमान समय में मानवाधिकारों से भी जोड़ा गया है जिसमें प्रत्येक बच्चे को स्वच्छ जल, वायु और भूमि का अधिकार है जो उनके स्वास्थ्य के विकास के अनुकूल हो। पूंजीवादी विकास की होड़ में लगातार पर्यावरण की अनदेखी की जाती रही है। वर्तमान समय में सर्वाधिक जोर विकास पर दिया जा रहा है। विकास की यह प्रक्रिया प्राकृतिक संसाधनों के अधिक शोषण से ही संभव है लेकिन वर्तमान समय में प्राकृतिक संसाधनों की लगातार कमी पुनः विचार करने पर मजबूर कर रही है। विकास की इस प्रक्रिया ने यह भी प्रचारित किया था कि इससे सभी वर्गों के लोगों का लाभ होगा। विकास की यह विशालकाय परियोजनाएं जिसमें रेलवह ट्रैकों,सड़कों, बांधों, स्पेशल इकोनॉमी जोन का

* लेखिका महात्मा गांधी अन्तर्राष्ट्रीय विश्वविद्यालय, वर्धा में सहायक प्राध्यापक हैं |

निर्माण किया गया है। इस प्रक्रिया ने लोगों को उनके घरों से विस्थापित और रोजगार के स्रोतों से अलग कर दिया है,साथ ही पर्यावरण का क्षरण अधिक मात्रा में हो रहा है जो चिंता का विषय है। इस उक्ति पर कि विकास के लिए थोड़ा विनाश आवश्यक है विकास के कार्य हो रहे हैं लेकिन इस थोड़े से विनाश ने हम सभी को एक ऐसे मोड़ पर लाकर खड़ा कर दिया है जहां स्वच्छ पानी और हवा के लिए भी कीमत चुकानी पड़ रही है, जो कि पहले सबके लिए मुफ्त में उपलब्ध था। प्रकृति किसी के साथ भेदभाव नहीं करती, वह सभी के लिए सहज उपलब्ध है।

अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पर्यावरण विमर्श की शुरुआत 14 अगस्त 1970 को पृथ्वी दिवस मनाने के साथ शुरू हुई | बाद मैं इस पर अनेक सवालखड़े हुए। 1979 में यूजीनसी हारग्रोव ने 'एनवायरनमेंट एथिक्स' नाम का एक पत्र निकाला जिसमें मानव-प्रकृति के संबंधों पर विस्तार से चर्चा की गई। इसके फलस्वरूप दार्शनिक जगत में भी पर्यावरण और नैतिकी पर विमर्श आरंभ हुआ है (आचार्य नंदकिशोर, 2013)। अकादमिक जगत ने भी पर्यावरण को सत्तर के दशक के बाद ही विमर्श में शामिल किया और इस पर गहन अध्ययन किया जाने लगा। इसी दशक में हरित आंदोलनों (ग्रीन मूवमेंट),पर्यावरणीय आंदोलनों की शुरुआत भी होती है और यही समय नारीवाद की दूसरी लहर का भी है जिसमें पर्यावरण और स्त्री के संबंधों पर विचार-विमर्श का आरंभ हुआ और यह माना गया कि पर्यावरण और स्त्री एक दूसरे की सहचर हैं,साथ ही दोनों का एक जैसा शोषण और उत्पीड़न का इतिहास है जो पूंजीवादी पितृसत्तात्मक व्यवस्था के द्वारा ही किया जा रहा है। फ्रेंच नारीवादी फ्रैंकोइस डी यूबोन ने 'इकोफेमिनिज्म' शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग किया था जो 1970 से 1980 तक लोकप्रिय बना रहा (शिवा,1999)। ईको फेमिनिज्म प्रकृति के वर्चस्व और महिलाओं के साथ होने वाले शोषण के बीच एक महत्वपूर्ण संबंध को देखता है। प्रकृति और महिलाओं दोनों का एक जैसा इतिहास है जो कि पितृसत्तात्मक समाज द्वारा दोनों से जुड़ा है। सैली मैंक फैग जो अमेरिकी पर्यावरणीय नारीवादी हैं उनका मानना है कि "भगवान के शरीर के रूप में पृथ्वी की देखभाल की जानी चाहिए"। (परमार, 2015) चीन की मेई एन.जी ने चीन के विभिन्न हिस्सों में पर्यावरण के प्रति जागरूकता लाने का प्रयास किया है साथ ही पर्यावरण शिक्षा में महिलाओं को सहभागी बनाने में वह सदैव तत्पर रहीं हैं (परमार, 2015)। मारिया मिएस जर्मन सामाजिक आलोचक हैं और वह स्थानीय और वैश्विक स्तर पर पर्यावरण,पितृसत्ता और गरीबी के साथ कई अन्य मुद्दों पर कार्य कर रहीं हैं। 1979 में मारिया ने नीदरलैंड व हेग में सामाजिक अध्ययन संस्थान में महिला एवं विकास कार्यक्रम की स्थापना की है। वह 1960 से ही महिला आंदोलन और महिला अध्ययन में सक्रिय रहीं हैं,उन्होंने पारिस्थितिकीय नारीवाद और तीसरी दुनिया के देशों पर कई महत्वपूर्ण लेख और पुस्तकें लिखीं हैं।

वर्ष 2002 में विश्व पर्यावरण दिवस पर मेई को संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा ग्लोबल 500 रोल सम्मान के लिए भी चुना गया था। ग्रीन बेल्ट आंदोलन महिलाओं और पर्यावरण के इतिहास में सबसे बड़े आंदोलन के रूप में उभरा, नोबल पुरस्कार से सम्मानित और ग्रीन बेल्ट आंदोलन की जनक केन्या की वंगारी मथाई ने पर्यावरण संरक्षण और सामुदायिक विकास के लिए 1977 से लगातार प्रयास किए। इस सन्दर्भ में तीस हजार महिलाओं को वन रोपण हेतु प्रशिक्षित भी किया गया जिन्होंने निजी और सार्वजनिक क्षेत्रों में लाखों वृक्ष लगाने का कार्य किया है (मथाई, 2006)। इस प्रशिक्षण ने महिलाओं को पर्यावरणीय शिक्षा के साथ साथ व्यवसायिक रूप से वन संबंधी तकनीकी के संचालन में भी सक्षम बनाया है जिससे महिलाओं की आर्थिक स्थिति में भी सुधार आया है। बंगारी मथाई के नेतृत्व में इस आंदोलन ने स्वदेशी पौधे लगाने पर विशेष बल देने के साथ कीनिया में तेजी से हो रही कमी और पर्यावरण के संरक्षण के माध्यम से ग्रामीण महिलाओं को सशक्त बनाने पर जोर दिया।

अंतरराष्ट्रीय फलक पर अन्य कई नारीवादी पर्यावरणविदों ने पर्यावरण के संरक्षण और संवर्धन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। भारत के संदर्भ में हम पर्यावरण आंदोलन या विमर्श की शुरुआत को चिपको आंदोलन के रूप में देख सकते हैं। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के बाद सबसे बड़ी संख्या में महिलाओं ने इसमें भागीदारी के साथ-साथ नेतृत्व भी किया था। पर्यावरणीय आंदोलन की खास बात यह है कि यह अहिंसक प्रतिरोध में यकीन करते हैं तथा इन आंदोलनों में महिलाओं की संख्या अधिक रहती है। इसी के साथ यह अहिंसक आंदोलन नए नारों और प्रतिरोध के नए तरीकों को ईजाद कर लेते हैं। चिपको आंदोलन का नेतृत्व गौरा देवी और बचनी देवी के द्वारा किया गया था। इस आंदोलन के माध्यम से पर्यावरण का सामान्य जनजीवन पर क्या प्रभाव पड़ता है और हमारी दैनिक जीवनचर्या का यह कैसे अभिन्न हिस्सा है यह बताने का प्रयास किया गया था। वनों के संरक्षण के लिए महिलाओं ने वृक्षों का आलिंगन कर बचाया था, इसी से इस आंदोलन का नाम चिपको आंदोलन पड़ा था।

भारत में इसके पूर्व भी पर्यावरण संरक्षण के लिए 1730 में अमृता देवी ने खेजड़ी के वृक्षों को बचाने के लिए अपने प्राणों की आहुति दी थी,उनके साथ-साथ उनकी दो बेटियों ने भी प्राणों का बलिदान दिया था। इस आंदोलन में 69 महिलाओं ने वृक्षों को बचाने के लिए अपने प्राणों की आहुति दी थी। चिपको आंदोलन में महिलाओं ने अधिकारियों को दिन के उजाले में लालटेन दिखलाई थी। यह प्रतीकात्मक था कि उन्हें जंगल के उपकार नज़र नहीं आ रहे हैं जो सभी के जीवनदाता हैं।इस आंदोलन में कई नारों का प्रयोग किया गया था जिसमें से एक था "क्या है जंगल के उपकार मिट्टी, पानी और बयार"| इसी तरह हर शांतिमय प्रतिरोध नए नए नारों और तरीकों को अपने आंदोलन में शामिल कर लेता है

(शिवा,1999)। वंदना शिवा देश-विदेश की जानी-मानी इको फेमिनिस्ट हैं |आप चिपको आंदोलन से जुड़ी रहीं हैं और दशकों से पर्यावरणीय आंदोलनों को जानने-समझने की कोशिश कर रहीं हैं। इसी क्रम में कई महत्वपूर्ण किताबों का लेखन भी किया है। वंदना शिवा के अनुसार वर्तमान समय में एक नए तरह का युद्ध चल रहा है जो जमीन और उसकी उर्वरता के विरुद्ध है। इसके अस्त्र उर्वरकता को बढ़ाने वाले रसायन और कीटनाशक हैं जो जन - विनाशक हैं। ग्रीन इकोनॉमी की अवधारणा हमें प्रकृति के बाजारीकरण की ओर ले जा रही है,फिर चाहे जमीन का ऊपरी भाग हो या जमीन का भीतरी भाग,पानी या खनिज संपदा। इसी क्रम में भारत में पर्यावरण संसाधनों पर कॉरपोरेट जगत के वर्चस्व को देखा जा सकता है। वंदना शिवा के अनुसार "महिलाओं में पृथ्वी के समान ही उत्पन्न करने की सृजनात्मक क्षमता होती है। वह पर्यावरणीय संरक्षण और संवर्धन के संसाधनों,नीतियों और प्राकृतिक तरीकों का ज्ञान सहज ही प्राप्त कर लेती हैं" (शिवा,1999)। वर्तमान में वंदना शिवा नवदान्य आंदोलन में सक्रिय हैं और जैविक खेती,जैविक खाद व जैविक बीजों के साथ-साथ जमीन के संरक्षण के लिए प्रयासरत हैं। इसमें महिलाओं को भी प्रशिक्षित करने का कार्य किया जा रहा है जिससे वह आर्थिक रूप से सक्षम बन सकें (शिवा,1999)।

नर्मदा नदी भारत की प्रमुख नदियों में से एक है। यह नदी भारतवासियों की आस्था और विश्वास का प्रतीक है जो अपनी पूरी लंबाई में एक हज़ार किलोमीटर तक सतपुड़ा पर्वतमाला की घाटियों के बीच होकर गुजरती हैं। सतपुड़ा की पहाड़ियां पूरब से पश्चिम तक भारत को उत्तर भारत और दक्षिण भारत ऐसे दो भागों में विभाजित करती है। नर्मदा के उद्गम स्थल अमरकंटक समेत इस पर्वतमाला की दुर्गम घाटियों में अनेक मंदिर और तीर्थ स्थल हैं जो सदियों से भारत के अन्य क्षेत्रों से तीर्थयात्रियों को आकर्षित करते रहे हैं। आज़ादी के बाद जब बांधों को विकास के पर्याय के रूप में देखा जाने लगा तो देश की 30 बड़ी नदियों पर बड़े बांधों की परियोजनाओं का प्रारंभ हुआ जिसमें नर्मदा नदी की पूरी घाटी में 100 से अधिक छोटे-बड़े बांधों के निर्माण की विशालकाय परियोजनाएं बनाई गईं।

मध्यप्रदेश में सबसे अधिक नर्मदा नदी पर बांधों का निर्माण किया गया है। इन बांधों के विरोध तथा पर्यावरण और विस्थापन की समस्या से बचने के लिए नर्मदा बचाओ आंदोलन का जन्म हुआ था। नर्मदा बचाओ आंदोलन द्वारा विकास की इस अवधारणा के खिलाफ 250 जनसंगठनों के प्रमुखों ने 1989 में एकजुट होकर मानव श्रृंखला बनाकर बड़े बांधों के विरोध में प्रदर्शन किया था तथा कुछ वर्ष पूर्व 'जल सत्याग्रह' भी किया गया था। इस आंदोलन में आदिवासी समुदाय के लोगों ने अधिक संख्या में भाग लिया तथा मध्यप्रदेश से लेकर दिल्ली तक वह हर प्रदर्शन में शामिल रहे। उनका कहना था कि हम नर्मदा नदी के किनारे के किसान पीढ़ियों से इसी जमीन, जंगल, जल के सहारे जीते आए हैं,यह हमारी

संस्कृति परंपरा का अभिन्न हिस्सा है जिससे हम अलग नहीं हो सकते हैं (गुहा,1999)। इसी संस्कृति अधिकार के संबंध में जब भारतीय संविधान में 44 वाँ संविधान संशोधन किया गया जिसमें संपत्ति के अधिकार को हटा दिया गया था जिसका तात्कालिक विरोध विद्वान छत्रपति सिंह के द्वारा किया गया था | उनका यह मानना था कि यह कदम आदिवासी समूहों के पक्ष में नहीं है क्योंकि अब सरकार द्वारा अपनी ज़मीन या संसाधन के अधिग्रहण को वह अपने मौलिक अधिकारों के उल्लंघन के रूप में नहीं पेश कर सकते हैं (सिंह,1986)। इन विशालकाय परियोजनाओं का यह परिणाम है कि इनसे विस्थापित लोगों की कुल संख्या में चालीस प्रतिशत केवल आदिवासी समुदाय के लोग हैं जो अपनी संस्कृति, परंपरा और जीविका के साधनों से विमुख होकर जीवन जीने को विवश हैं। नर्मदा बचाओ आंदोलन द्वारा विश्व बांध आयोग की रिपोर्ट का हवाला भी दिया गया था कि भारत और चीन की जलवायु बड़े बांधों के अनुकूल नहीं है। लेकिन हमारे एक बड़े तबके ने इन सब तर्कों को अनसुना करते हुए नर्मदा बचाओ आंदोलन को ही विकास विरोधी ठहरा दिया जबकि मेधा पाटकर लगातार छोटे बांधों को बिजली उत्पादन के विकल्प के रूप में प्रस्तुत कर रही थीं जो पर्यावरण और मानवों के अनुकूल है (दुबे, 2013)।

उत्तराखंड में भी बिजली उत्पादन के लिए छोटे बांधों और पनबिजली का उपयोग किया जाता रहा है। ऐसे और भी कई आंदोलन हैं जो लगातार जल,जंगल और जमीन के लिए संघर्षरत हैं। इन्हें पीपुल्स मूवमेंट और पापुलर मूवमेंट के नाम से भी जाना जाता है। इनमें कुछ प्रमुख आंदोलन श्री काकुलम आंदोलन, बोध गया का भूमि आंदोलन, गन्धमर्दन आंदोलन, अप्पिको आंदोलन, चिलका झील आंदोलन, झारखंड का पोटका आंदोलन,महाराष्ट्र के जैतपुर में आणविक संयंत्र के लिए भूमि अधिग्रहण के खिलाफ, उड़ीसा में वेदांता कंपनी द्वारा बॉक्साइट खनन के खिलाफ, बंगाल के नंदीग्राम में सेज के खिलाफ आंदोलन। इसमें और भी कई छोटे बड़े आंदोलनों को जोड़ा जा सकता है। इन सभी आंदोलनों की खासियत यह थी कि इनमें महिलाओं का प्रतिनिधित्व व संख्या अधिक थी तथा यह अहिंसक गांधीवादी आंदोलन कहे जाते हैं (शिवा, 1986)। नारीवाद की दूसरी लहर वैश्विक बहनापे (Sister Hood) की बात करती है | इन आंदोलनों ने स्थानीय स्तर पर बहनापे को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। आंदोलनों को आगे बढ़ाने में मीडिया की भी महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। इसी के चलते जब इन आंदोलनों से कोई सेलिब्रिटी जुड़ती है तो वह मेन स्ट्रीम में आ जाते हैं बाकी धीमी गति से संचालित होते रहते हैं। इकोफेमिनिज्म की पूरी धारा पर्यावरण के संरक्षण के लिए परंपरागत संस्कृति के अनुरूप आने वाली पीढ़ियों के लिए पर्यावरण को संजोने का कार्य करती है, ठीक उसी तरह जिस तरह वह अपने परिवार की धरोहर को अपनी पीढ़ी को सौंपती है। ईकोफेमिनिज्म विभिन्न हितों,समाजों,समुदायों में

अपने पर्यावरणीय उद्देश्य के रूप में नजर आया। इको फेमिनिज्म व्यापक दुनिया के लिए एक व्यापक विषय के रूप में उभरा। नारीवादी दृष्टिकोण के फलस्वरूप ईकोफेमिनिज्म सीधे समस्याओं को हल करने के लिए व्यक्तिगत और स्थानीय स्तर पर नजर आया। ईको फेमिनिज्म की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वह हमेशा स्थानीय प्रत्यक्ष कार्यवाही और पारंपरिक सामूहिक कार्यवाही के सबसे निकट रहा है। इको फेमिनिज्म की यह धारा भी आलोचना से परे नहीं है जो पर्यावरण और स्त्री के गुणों में जैसे प्रेम,सद्भाव, सहयोग, सहनशीलता,त्याग,व स्वभाव की समानता बात करती है। इसी आधार पर इकोफेमिनिज्म की आलोचना की जाती है कि यह गुण सिर्फ स्त्रियों में ही नहीं होते पुरुषों में भी होते है क्योंकि यह मानव स्वभाव हैं, यह गुण कम या ज्यादा हो सकते हैं (परमार, 2015)।

गांधी जी ने इस उपभोक्तावादी पाश्चात्य संस्कृति का लगातार विरोध किया | वह हमेशा अपरिग्रह के सिद्धांत पर चलने के लिए लोगों को प्रेरित करते रहे। गांधी जी ने प्रकृति और मनुष्य के रिश्तों को परस्पर सहयोग के रूप में देखने की दृष्टि प्रदान की जिसमें गांधी जी ने कहा कि 'प्रकृति हर मनुष्य की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकती है लेकिन किसी भी एक मनुष्य के लालच को पूरा करने में वह असमर्थ है' (हार्डीमन, 2003)। इसलिए प्रकृति से आवश्यकतानुसार ग्रहण किया जाना चाहिए और इसके एवज में हमें प्रकृति का संवर्धन और संरक्षण करना चाहिए जो हमारे परस्पर सहयोग और प्रेम पर टिकी व्यवस्था है। गांधी जी के अनुसार सृष्टि के प्रेम का नियम ही ईश्वर का नियम है जो हमें पर्यावरण और जीवजगत से जोड़कर एक दूसरे का सहचर बनाता है। अभी वर्तमान में मध्यप्रदेश में बक्सवाहा हीरा खदान के लिए 2.15 लाख पेड़ों को काटा जाएगा जिसमें 40 हजार सागौन के वृक्ष भी शामिल हैं। क्या इंटरजनरेशनल जस्टिस (सनातन न्याय) के लिए आने वाली पीढ़ियों के लिए कोई मुहिम चलाई जाएगी या हम इस उपभोक्तावादी संस्कृति के पराधीन होकर विनाश के इस जश्न में शामिल रहेंगें या हर वर्ष हमारे द्वारा विश्व पर्यावरण दिवस पर सोशल मीडिया प्लेटफार्म पर फ़ोटो शेयर कर पर्यावरण का संरक्षण किया जाएगा।

निष्कर्ष

सारांशतः हम कह सकते हैं कि आने वाली पीढ़ियों के लिए हम किस तरह की पर्यावरणिक परिस्थितियों को छोड़ जायेंगे यह सवाल आज जल,जंगल,जमीन से जुड़ा महत्वपूर्ण सवाल है। आज जमीनी स्तर पर कार्यरत विभिन्न समाज सेवियों को इन प्रश्नों से टकराने की जरुरत है और विकास बनाम विस्थापन या विकास बनाम पर्यावरण की बहसों पर गंभीर रूप से विचार करने की जरुरत है। पर्यावरण विषय के अनुशासनों को शैक्षणिक स्तर पर पाठ्यक्रमों में शामिल तो किया गया है लेकिन अभी तक राजनीतिक,सामाजिक,आर्थिक और सांस्कृतिक स्तर पर पर्यावरणीय नैतिकता पर चर्चा की

आवश्यकता है ताकि मानवीय सभ्यता के एक सुनहरे भविष्य के लिए और मानवीय अस्तित्व को बचाने के लिए छोटे से स्तर से लेकर वैश्विक स्तर तक पर ईमानदारी से प्रयास किये जाएँ।

संदर्भ सूची

(आचार्य नंदकिशोर, 2010).अहिंसा विश्वकोश,प्राकृत भारती अकादमी,जयपुर.पेज 392

(शिवा वंदना,1999).कोलोनियलिज्म एंड द इवहल्यूशन ऑफ़ मैंसिमिस्ट फोरेस्ट्री,पेज 41

(परमार शुभ्रा, 2015).नारवादी सिद्धांत और व्यवहार. ओरियंट ब्लैकस्वान प्राइवहट लिमिटेड.पेज 50

(मथाई बंगारी, 2006).अन्बोव्ड: ए मेमॉयर,अल्फ्रेड नोफ़्फ़

https://www.tadkabright.com/2020/08/khejarli-andolan-or-chipko-andolan-kya-hai-aur-kaise-shuru-hua.html?m=1

(गुहा सुमित,1999).एनवायरमेंट ऐंड ऐथनिसिटी इन इंडिया. कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस.कैम्ब्रिज.

(सिंह छत्रपति,1986).कॉमन प्रोपर्टी ऐंड कॉमन पॉवर्टी : इंडियाज़ फॉरेस्ट्स ,फ़ॉरेस्ट डवहलर्स ऐंड द लॉ. ऑक्सफ़र्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.नयी दिल्ली.

(दुबे अभय कुमार, 2013).समाज विज्ञान विश्वकोश, खंड 4,राजकमल प्रकाशन ,पेज 1262

(शिवा वंदना,बंधोपाध्याय जयंती,1986).चिपको :इंडियाज सिविलाइजेशन रिस्पोंसेज टू द फ़ॉरेस्ट क्राइसिस. नटराज.नयी दिल्ली.

https://www.downtoearth.org.in/hindistory//

https://www.bbc.com/hindi/india-49542472

(हार्डीमन डेविड,2003).गांधी इन हिज टाइम्स ऐंड आवर्स.पर्मानेंट ब्लैक. नयी दिल्ली.

राजस्थानी लघु चित्रों में लोक जीवन : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ शैलेंद्र कुमार*

सारांश

जिस प्रकार साहित्य अपने समय का दर्पण होता है उसी प्रकार चित्रकला के माध्यम से चित्रकार अपने समय के दृश्यमान भाव जगत को कैनवास पर उतारकर तत्कालीन सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक जीवन को प्रकाश में लाता है। राजस्थानी चित्र शैलियाँ अपने लघु चित्रों के लिये प्रसिद्ध हैं। इन चित्र शैलियों में मेवाड़, जयपुर, मारवाड़, जोधपुरा, बूँदी, कोटा, किशनगढ़, और नाथद्वारा शैलियाँ महत्वपूर्ण हैं। इन शैलियों में मुख्यरूप से रागमाला, रसिकप्रिया, रामायण, कृष्णलीला, बारहमासा के दृश्यों का चित्रांकन बहुतायत मात्रा में किया गया है। सभी राजस्थानी चित्र शैलियों में राज दरबार के दृश्य चित्रकारों का मुख्य विषय था। ऐसा प्रतीत होता है कि इन दरबारी चित्रों से राजस्थानी चित्रों की संस्कृति का क्षितिज अवरुद्ध सा है। उपरोक्त वर्णित विषयों के अलावा हमें लोक जीवन से संबंधित चित्र भी मिले हैं जिनमें चित्रकारों ने स्वच्छन्दता के साथ बड़े ही स्वाभाविक रूप से चित्रण किया है। यहाँ चित्रकार परंपरा या राजा के आदेश से बंधा नहीं था। यहाँ उसकी तूलिका स्वतंत्र रूप से अंकन कर रही थी। इन चित्रों में गाँव का दृश्य, कृषि सम्बंधी दृश्य, धोबी, लोहार, दर्जी इत्यादि के चित्र मिलते हैं। प्रस्तुत शोध पत्र में इन्हीं लोक जीवन से सम्बंधित चित्रों का कलात्मक अध्ययन करने का प्रयास किया गया है।

बीज शब्द – राजस्थान, लोक , चित्रकार, नाथद्वारा, मेवड़ा, रसिकप्रिया, कविप्रिया, भटियारिन

भारतीय चित्रकला के परिदृश्य में राजस्थानी चित्रकला का अपना महत्वपूर्ण स्थान है। राजस्थानी शैली का उद्भव 16वीं शती में हो गया था। राजस्थानी शैली एक नये युग का प्रतिनिधित्व करती है। अपभ्रंश शैली के अंतर्गत हमें देवशाना पाडा ज्ञान भंडार कल्पसूत्र प्रति में, बालगोपाल्स्तुति, देविमाहतम और भारत कला भवन लौरचंदा प्रतियों के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि पंद्रहवीं शती में राजस्थानी शैली के बीज पड़ गये थे और वही 16वीं शती में फलते-फूलते नजर आए | राजस्थानी चित्रकला में मुख्यरुप से मेवड़ा, जयपुर, मारवाड़, जोधपुरा, बूँदी, कोटा, किशनगढ़, और नाथद्वारा शैलियाँ महत्वपूर्ण हैं। इन शैलियों का मुख्य विषय रागमाला, रसिकप्रिया, रामायण, कृष्णलीला, बारहमासा, बालगोपाल्स्तुति, देविमाहतम इत्यादि हैं। सामान्य रूप से राजस्थानी चित्रों की संस्कृति का

* लेखक कला इतिहास प्रभाग, महिला महाविद्यालय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी में सहायक प्राध्यापक हैं |

क्षितिज दरबारी संस्कृति से अवरुद्ध सा है, फिर भी यथास्थान लोक जीवन के दृश्य मिलते रहते हैं। उदाहरण के लिए उपाख्यानों के चित्रों में जैसे पंचाख्यान में जुलाहा, धोबी आदि। कभी-कभी बिहारी सतसई के दृश्यों में भी ऐसे प्रसंग आ जाते हैं जैसे ('....बहू छोट हथी जानि') आदि अथवा बारहमासा चित्रों की पृष्ठभूमि में, परन्तु हम इन्हें सामान्य जीवन का स्वतन्त्र चित्रण नहीं मान सकते हैं। कुछ मेले, तमाशों के अंकनों में भी जैसे मेवाड़ी चित्रों के बड़े आकार वाले दृश्यों में त्योहारों के चित्रण के प्रसंग में मुख्य दृश्य से हटकर, ऐसे अंकन मिल जाते हैं। एक विशेष प्रकार का अंकन मिलता है जिसे हम भटियारिन का चित्र कह सकते हैं | यहाँ हास्य रस की प्रधानता है (चित्र सं0 1)।

(चित्र सं0 1) (भटियारिन और रहगीर, बूंदी,ल०,1880 ई0, राज्य संग्रहालय, लखनऊ)

परन्तु इन चित्रों में स्वच्छन्दता अधिक है और वह जीवन से थोड़े बहुत जुड़े हुए भी हैं। इनके द्वारा चित्रकार की प्रतिभा प्रकट होती है, परन्तु इनकी संख्या बहुत अधिक नहीं है। कुछ युवतियों और सखियों के स्वतन्त्र चित्रण भी हैं जो विशेष रूप से बीकानेर शैली में मिलते हैं। यह चित्रकार द्वारा प्रतिपालक राजा को विशेष त्योहारों पर भेंट किए जाते थे। इन्हें भी हम इसी वर्ग में रख सकते हैं। सामान्य रूप से यह कहा जा सकता है कि राजस्थानी शैली में इस वर्ग का बहुत सीमित चित्रण है।

बीकानेर शैली का एक चित्र जो प्रायः 1700ई0 का है। इसमें एक गांव का दृश्य चित्रकार ने दिखलाया है। यह चित्र किसी कथा से सम्बन्धित जान पड़ता है जिसे सुप्रसिद्ध विद्वान हरमन गोएट्स ने प्रकाशित किया था। कई दृष्टियों से यह चित्र अनोखा है क्योंकि इसमें वास्तविकता का भी पूरा चित्रण हुआ है। ऐसा प्रतीत होता है कि यह दो पड़ोसी गांव का दृश्य है जिन्हें अलग-अलग घेरों में दिखलाया गया है। नगरों को वृत्ताकार घेरे में दिखलाने की परम्परा अपभ्रंश शैली के ग्रन्थ चित्रों में बहुतायत से मिलती है। सम्भवतः यही परम्परा प्रस्तुत चित्र में भी चली आ रही है। इन दोनों घेरों को एक दूसरे को काटते हुए दिखलाया गया है और एक वृत्त की स्त्रियाँ दूसरे वृत्त की स्त्रियों से वार्तालाप में मगन हैं। परन्तु

यह अधिक उपयुक्त जान पड़ता है कि सामाजिक स्तर की दृष्टि से यह दो भिन्न-भिन्न स्तर की बस्तियाँ हैं। एक में घास-फूस की झोपड़ियाँ हैं। अर्थात् रहने के स्थान हैं, वह संपन्न स्थिति का द्योतक है। दूसरे घेरे में सम्भवतः ऊँट वालों की बस्ती है जहाँ ऊँटों के खेड़ हैं। यहीं से एक पुरुष हाथ में कुछ लिए हुए बाहर जा रहा है जो कथा से सम्बन्धित होगा। इस घेरे के बाहर सभवतः रहट्टो से बनी हुई एक बहुत बड़ी डोलची सदृश्य कोई वस्तु दिखलायी गयी है। ध्यान देने योग्य है कि ग्राम समाजों की रक्षा करने के लिए उनके घेरे भी रहट्टों जैसी सामग्री से बनाये गये हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि कथा के अनुसार संभ्रान्त स्त्री का सन्देश या उपहार लेकर यह व्यक्ति कहीं यात्रा पर जा रहा है। वह सीधे उस स्त्री से बात करने योग्य नहीं था, इसलिए बीच में एक और स्त्री का माध्यम लिया गया है। इससे मिलते-जुलते कुछ दृश्य रसिकप्रिया के चित्रणों में मिलते हैं जहाँ अपनी प्रजा को लेकर गोकुल से प्रस्थान करते हैं। इसके उदाहरण मुख्यतः मेवाड़ शैली में मिलते हैं। नेशनल गैलरी ऑफ़ विक्टोरिया, आस्ट्रेलिया संग्रह में वृक्ष शास्त्र का एक पृष्ठ संग्रहित है (टाप्सफील्ड 1980) जो मेवाड़ शैली का प्रायः 1715-20 ई0 का है (चित्र सं0 2)।

(चित्र सं0 2)

(वृक्ष शास्त्र का एक पृष्ठ, मेवाड़, 1715-20 ई0, नेशनल गैलरी ऑफ विक्टोरिया, आस्ट्रेलिया)

प्रस्तुत दृश्य की कुंजी इसके ऊपरी हाशिये में दिये हुए ब्रजभाषा कविता में है जिससे पता चलता है कि वृक्षों को लगाने-बढ़ाने और बचाने आदि की क्या-क्या परम्पराएं थीं। क्रमानुसार ये वृक्षशास्त्र का 60वां पन्ना है। अतएव यह विस्तृत चित्रावली रही होगी परन्तु इस सम्बन्ध के दृश्य मुख्य रूप से ऊपरी हाशिये में अथवा बस्तियों के बीच में बड़े-बड़े उद्यानों तक ही सीमित हैं। ऊपरी भाग में लोग तत्सम्बन्धी कार्यों में व्यस्त हैं और एक ओर रहट चलता हुआ भी दिखलाया गया है। इसी प्रकार बीच वाले एक बड़े उद्यान में भी लोग व्यस्त हैं। एक भाग में पहाड़ी के सामने एक राजा या राजकुमार बैठा है। ऐसा जान पड़ता है कि उसको पैदावार के नमूने दिखलाए जा रहे हैं जिनके ढेर सम्मुख पड़े हैं और हाथी-घोड़े भी खड़े हैं। सम्भव है कि यह उनकी खाद्य सामग्रियों के ढेर हैं जिनको परखा जा रहा है। इसके

बाद क्यारियों में खड़ी एक स्त्री है जो सम्भवतः रखवाली कर रही है आदि अनेक प्रकार के तत्सम्बन्धी दृश्य हैं। दाहिनी ओर कक्षों में कुछ संभ्रान्त व्यक्ति सोये हैं और उनके आस-पास उनके मुसाहब बैठे हैं। इसके ऊपर भी एक-एक कक्ष में साधारण लोग सोये हैं। एक किनारे कक्ष के अन्दर दो व्यक्ति वार्तालाप कर रहे हैं। यह सब जीवन के दृश्य हैं। क्यारियाँ बहुत सुन्दर ढंग से बनायी गयी हैं| पूरे चित्र में चारों तरफ क्यारियाँ बनी हुई हैं। चित्र में छोटी-छोटी घास-फूस की झोपड़ी दिखाई गयी हैं और खेतों में बैल लिए व्यक्ति भी दिखलाये गये हैं। कुछ व्यक्ति खेत में बीज बोते भी दिखलाये गये हैं। चित्र के एक तरफ किले के अन्दर कुछ घर और लोग दिखाये गये हैं और दूसरी ओर सेना और कुछ घरों को चित्रित किया गया है। चित्र के मुख्य भाग में राजा को बैठे तथा सेवक को चंवर चलाते चित्रित किया गया है। बाहर कुछ लोग खड़े हैं और दूसरे परकोटे में लोगों को खाना खाते हुए चित्रित किया गया है।

सामान्य जन-जीवन में राजस्थान में झाड़-फूँक द्वारा व्याधियाँ भगाई जाती थीं। ऐसा ही एक चित्र बच्चे की झाड़-फूँक से सम्बन्धित है जो प्रायः 1700ई0 का बीकानेर शैली का है। उत्तर मुगल काल से अनेक प्रान्तीय शैलियों में योगियों-योगनियों, झाड़-फूँक करने वाले या अन्य तान्त्रिक उपायों के चित्र मिलने लगते हैं। इनमें एक उद्देश्य इन सुन्दरियों का रूप प्रदर्शन करना होता है। बीकानेर शैली के एक चित्र में एक सुन्दर नवयुवती अपने बालक को किसी जोगी से झड़वाने के लिए अर्थात उस पर आई हुई आपत्ति को दूर करने के लिए लाई है। सामने जोगी का आश्रम है और उसके सामने दुबला-पतला मुस्लिम जोगी (सामान्य रूप से कहा जाने वाला साई) एक मोरछल से झाड़कर व्याधि भगा रहा है। उसके दूसरे हाथ में एक बड़े आकार की तशबीह (सुमेरिनी) है। सामने उसका निवास स्थान घास-फूस का बना बहुत साधारण कोटि का है और पार्श्व में दाढ़ीयुक्त एक चेला भी चुपचाप बैठा है। यह स्त्री बहुत संभ्रान्त कुल की है जैसा उसके एवं उसकी परिवर्तिनी के वस्त्र-विन्यास से स्पष्ट होता है। वह कीमती फल भी चढ़ाने के लिए लाई है जो सामने रखे हैं। इस चित्र से उस काल के धार्मिक विश्वासों पर भी प्रकाश पड़ता है। इससे मिलते-जुलते उदाहरण बूँदी और मुगल आदि शैलियों से मिले हैं।

महाराणा संग्राम सिंह (द्वितीय) के समय में एक अद्भुत पुस्तक की रचना हुई जिसका विषय मुल्ला दो प्याजा नाम का एक कल्पित व्यक्ति था। इस काल के मुगल शैली के दो चित्रों में एक दाढ़ी वाला कल्पित मुल्ला इस हास्य का पात्र है जिसकी अंग-भंगी ही नहीं वाहन अर्थात् टुटहा मर्तंग घोड़ा हास्य के उपादान हैं। मेवाड़ी गद्य में इस विषय को लेकर एक पाठ्य सामग्री तैयार की गई, बड़े आकार की पुस्तिका के रूप में इस पुस्तक में बड़ी संख्या में दृश्य चित्रित हुए जिनमें ऊपर पाठ्य अंश (टेक्स्ट) एक दो पंक्तियों में लिखे गये हैं जिनके आधार पर चित्र बने हैं। दुर्भाग्यवश इसके अधिकांश चित्र घोर अश्लीलता दिखलाते हैं

अर्थात् हास्य का वह एक उपादान माना गया है। दृश्यों की पृष्ठभूमि वर्तमान अफगानिस्तान और ईरान के "बल्ख और बुखारा" पर आश्रित है जैसा पाठ्य सामग्री से ज्ञात होता है। इसके अतिरिक्त शेष समूचा वातावरण 18वीं शती की मेवाड़ चित्र शैली पर आधारित है। केवल एक कोने में एक-दो मुल्ले दिखलाए गए हैं। प्रस्तुत विवरण श्री अन्धारे के द्वारा प्रकाशित दो चित्रों पर आधारित है। यह दोनों चित्र राजकीय संग्रहालय उदयपुर में संग्रहीत हैं। यह मेवाड़ शैली का है और इस पर 1720ई0 तिथि दी हुई है (अन्धारे, 1987) | दोनों ही चित्रों में दूर पृष्ठभूमि में एक बरामदे तक छोटे से वास्तु में काजी मुल्ला दो प्याजा और उनके साथी को हम वार्तालाप करते हुए पाते हैं। दृश्यों के इस पैबन्द को यदि हम निकाल दें तो उसमें मेवाड़ी जीवन पद्धति और तत्कालीन चित्र शैली का पूरा-पूरा प्रभाव दिखलायी पड़ता है जिसकी तुलना हम तत्कालीन चित्रण से कर सकते हैं।

इसके पहले चित्र में हम राजपूत मुगल शैली का एक सुसज्जित उद्यान पाते हैं जिसमें शान-शौकत से एक मुंशी कागज पत्र लिख रहा है, वह ओहदेदार जान पड़ता है जैसा कि उसके पीछे बड़ी तकिया से प्रगट होता है। उसके सामने राजकीय गायक, वादक अपनी कला का प्रदर्शन कर रहे हैं। मुंशी जी के सम्मुख रजिस्टर कागज, कलम, दवात इत्यादि लिखने की सामग्री करीने से रखी है। ऊपर दिये हुए लेख से ज्ञात होता है कि मुंशी जी लोगों के कागज पत्र तैयार करते थे। अतः उनका बड़ा सम्मानजनक ओहदा था, जैसा कि उनके चारों ओर के वैभव से स्पष्ट है

तत्कालीन जीवन से बहुत अधिक जुड़ा हुआ एक चित्र हावर्ड यूनिवर्सिटी म्यूजियम यूएसए में संग्रहीत है। इसमें व्याभिचारिणी स्त्री के वध का दृश्य है (चित्र सं0 3)।(वशिष्ठ, 1995)

(चित्र सं0 3) (व्याभिचारिणी स्त्री की हत्या, मेवाड़, 1745 ई0, हावर्ड यूनिवर्सिटी म्यूजियम, यूएसए)

यह चित्र 1745ई0 में चित्रित हुआ। ऐसे बहुत कम उदाहरण देखने को मिलते हैं। इसका चित्रकार गंगा राम केलवा है। यह मेवाड़ के केलवा नामक ठिकाने के दरबार में था

और उसकी शैली में स्वाभावहक्तिवाद का सुन्दर उपयोग हुआ है। इसका एक अन्य उदाहरण पूववर्ती है जो पहले सुप्रसिद्ध मोतीचन्द खजांची संग्रह में था परन्तु वर्तमान समय में भारत कला भवन संग्रह में है। कला भवन वाला चित्र और भी हृदय विदारक है। इसमें किसी महल के भीतरी भाग में अभागिन दासी को बाँध कर कोड़े से पीटते हुए एक वरिष्ठ औरत दिखलायी गयी है। कोड़े की कल्पना मात्र से अभागिन स्त्री सिहर रही है जबकि अन्तःपुर की दो स्त्रियाँ इस दृश्य का आनन्द ले रही हैं। उपर्युक्त वक्तव्य का उद्देश्य यह है कि गंगा राम चित्रकार को ऐसे पीड़ादायक चित्रों को अंकित करने में सम्भवतः मजा आता था और इसलिए उसे यह काम सौंपा जाता था।

हावर्ड यूनिवर्सिटी म्यूजियम वाला दृश्य भी अनोखे प्रकार का है। इस श्रेणी के दृश्य कथाओं के प्रसंग में भी मिलते हैं और सम्भवतः अकबरकालीन तूतीनामा के चित्रण में भी एक ऐसा दृश्य है। परन्तु गंगा राम के इस चित्र में ऐसा काल्पनिक लोक नहीं है बल्कि हमारे समाज और जनजीवन से जुड़ा हुआ अनुभव है। प्रस्तुत दृश्य एक मध्यमवर्गीय घर से प्रभावित है जिसमें घिरा हुआ सहन है। दृश्य का केन्द्रबिंदु घर के अन्दर की छाजन है जिसके नीचे आसन्न मृत्यु की प्रतीक्षा करते हुए अर्द्धनग्न व्याभिचारिणी स्त्री लेटी हुई है और साक्षात काल बनकर पहुँचा उसका पति तलवार से दो टुकड़े करने को उद्यत है। इन दोनों चित्रों में सशक्त अभिव्यक्तियों के द्वारा प्रतिहिंसा युक्त क्रोध से लेकर प्रायः पाप से जनित भयाक्रान्त दोनों छोरों को प्रदर्शित करने में चित्रकार गंगाराम ने अद्भुत प्रतिभा का प्रदर्शन किया। इसके पूर्व स्त्री का प्रेमी तलवार से दो टुकड़े किया जा चुका है जिससे दृश्य की भयानकता और बढ़ जाती है। इससे दो अन्य दृश्य भी जुड़े हुए हैं। उनमें एक तो पड़ोसियों का है जो ऊपर खिड़की से देख रहे हैं और दूसरा सहन में भीतर आने वाले दरवाजे पर घबराई हुई और कुछ-कुछ पीड़ित वृद्धा है जो दरवाजा खुलवाने में असमर्थ है और उसे पीट रही है। संभवतः वह इस अभागिनी दुराचारिणी को बचाने के लिए प्रयासरत और हताश है। पर वह बेबस है जैसा इस परिप्रेक्ष्य में देखा जाता है। सम्भव है वह कूटनी हो जो अवैध सम्बन्ध में सहायक रही हो। इस प्रकार यह दृश्य बहुत ही हृदय विदारक और तत्कालीन जीवन की झांकीयुक्त है। साधारण प्रकार के दो व्यक्ति सोते से जागकर एक दरवाजा खोलकर चौंक कर देख रहे हैं | इससे ज्ञात होता है कि यह देर रात का दृश्य है एवं पेड़ों के पीछे खिड़की से झाँकता हुआ व्यक्ति भी चौंका हुआ है। सम्भवतः चित्रकार ने अलग-अलग वर्णों के पड़ोसियों का सफलतापूर्वक चित्रण किया है। वर्णभेद के अनुसार उनकी प्रतिक्रियाएं भी दिखलाई है। पृष्ठभूमि में रसोईघर का दृश्य है जहाँ एक हुक्का भी रखा है एवं आँच पर चढ़ा हुआ कोई भोज्य पदार्थ पक रहा है। इस प्रकार विभिन्न स्तरों के और परिस्थितियों के चित्रण में यह कमाल का चित्र है। इसके बराबरी के बहुत कम उदाहरण मिलते हैं। नेशनल म्यूजियम, नई दिल्ली संग्रह में एक चित्र

बूँदी शैली का 1772ई0 का है । इस चित्र में कपट के द्वारा हत्या दिखलायी गयी है (बीच,1974)|

18वीं शती में लौकिक दृष्टि से एक विषय प्रायः मिलता है जिसे भटियारिन या भटियार खाने का चित्र कह सकते हैं (देखिये चित्र संख्या 1)| मुख्य रूप से यह चित्र बूँदी-कोटा शैली ,अजमेर क्षेत्र की उपशैलियों एवं मारवाड़ क्षेत्र से मिलते हैं, चित्र की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण हैं । यह हास्य रस के चित्र हैं जिनमें लौकिक संस्कृति की झाँकी मिलती है । सुप्रसिद्ध विद्वान माइलो क्लीवलैण्ड बीच ने इस वर्ग का रेखाचित्र प्रकाशित किया है। यह चित्र 1705 ई0 का कोटा शैली का है। यह प्राइवहट कलेक्शन में है (टाप्सफील्ड, 1980)| बीच ने इसे ज्योनार का एक दृश्य बताया है और इसे 18वीं शती के प्रारम्भ में रखा है। यह रेखाचित्र किसी बड़े चित्र का अंश है जिसके बांयें भाग का कुछ अंश गायब हैं। इस सम्बन्ध में हम यह पाते है कि इन चित्रों में हास्य रस का पुट कुछ अधिक ही रहता है, कहीं-कहीं अश्लीलता भी दिखलाई पड़ती है। सामान्य रुप से इसे अत्यन्त सामान्य प्रकार का अंकन कहा जा सकता है, परन्तु प्रस्तुत चित्र किसी अच्छे चित्रकार की कृति जान पड़ती है। इस चित्र को चरबे का काम कहा जा सकता है। इसके ऊपर-नीचे के कुछ अंश अत्यन्त अधूरे हैं और कुछ अंश जोड़े भी गये हैं जिनमें किसी एक बाहरी व्यक्ति का चेहरा, एक घोड़ा आदि हैं। यह दृश्य जीवन शैली या संस्कृति से बहुत जुड़े हुए हैं । अतः वर्तमान स्थिति में भी यह महत्वपूर्ण हैं। चित्र की दूर पृष्ठभूमि में मार्ग में स्थित एक झोपड़ी सी है जो विश्राम स्थली हो सकती है। इसमें बारीक कपड़े से ढ़ँका हुआ पानी का एक घड़ा है। इसके पार्श्व में एक व्यक्ति ने लकड़ी के चूल्हे पर किसी बर्तन में भोजन चढ़ा दिया है जिसे फर्चा भोजन कह सकते हैं (व्यक्ति दूसरे का पकाया या छुआ भोजन नहीं करता और अपना स्वयं पकाता है) । उससे निश्चित होकर वह दूसरी ओर देखकर कुछ सोच रहा है। शायद यह उसका रोज का काम था। बीच में कुछ संभ्रान्त व्यक्ति मद्यपान कर रहे हैं| एक टोंटीदार बर्तन से सेवक प्याला में परोस रहा है। कुछ लोग उत्सुकता से हाथ बढ़ा रहे हैं। सम्भवतः सामने की ओर सींक कबाब भी बन रहा है और पास में ही एक हुक्का भी रखा है। इस व्यक्ति के बगल में एक खाली बर्तन लुढ़का सा पड़ा है । सबसे हास्यास्पद दृश्यों में इस मंडली के ऊपरी सिरे पर दो व्यक्ति हाथापाई करते दिखलाए गए हैं और निचली ओर एक तरफ थकान और नशे में चूर एक राही अचेत होकर पड़ा है। उसके सामने हथियार और पगड़ी छितराए पड़े हैं, उसी पंक्ति में आगे की ओर सम्भवतः अत्यधिक मद्यपान करने से एक व्यक्ति उल्टी कर रहा है, उसकी पगड़ी भी खुलकर पीछे की ओर लटक रही है । मुख्यः दृश्य की पृष्ठभूमि में पुरुष वहषधारी एक स्त्री भागने का उपक्रम कर रही है और एक राही उसे पकड़कर रोकने की चेष्टा कर रहा है।

नेशनल म्यूजियम संग्रह, नई दिल्ली में पंचाख्यान का एक पत्रा मेवाड़ शैली का

संग्रहीत है (चैतन्य1982) जिसकी तिथि 1725 ई0 है। इस पत्रे की संख्या 126 है। इस पत्रे की ऊपरी पट्टी पर स्थानीय मेवाड़ी भाषा में गद्य लेख से ज्ञात होता है कि वानर के नेतृत्व में जंगल में जाकर लोगों को वापस लाने का प्रयत्न किया जा रहा है। स्वाभावतः यह एक बड़ी चित्रमाला का पृष्ठ है

इस काल में मेवाड़ शैली में चित्रों को कई खण्डों में बाँट दिया जाता था जिससे कथा का प्रवाह बना रहे, इसके लिए छोटे-छोटे वास्तु, वृक्ष, अमरी हुई गेलेदार भूमि और कभी-कभी जल के टुकड़ों का प्रयोग किया जाता था । प्रायः इनमें पृष्ठभूमि का रंग भी बदलता रहता था। यहाँ चित्र को तीन भागों में बाँटा गया है। एक दृश्य में शुष्क प्रकार के वृक्ष पर बैठा एक बन्दर उपदेश सा दे रहा है। दूसरे दृश्य में वही बन्दर राजा के सामने एक कक्ष में बैठा है। वही उपदेश दे रहा है जो उपर्युक्त लेख में प्रस्तुत है। तीसरा बन्दर लोगों को नेतृत्व देता हुआ घोड़े पर सवार है। चित्र का मुख्य भाग वन को जाते हुए लोगों का समूह राजसी यात्रा का एक दृश्य है। यहाँ हम राजा को छत्र के नीचे घोड़े पर सवार पाते हैं। उनके साथ सेवक चल रहे हैं। पीछे उनके राजकुमार भी घोड़े पर सवार हैं। आगे-आगे एक हाथी चल रहा है अर्थात यह मुख्य समूह है। इसका नेता बन्दर है जो घोड़े पर आगे-आगे चल रहा है जिसके पीछे राजा का एक पैदल सेवक है। इसी प्रकार राजा के पीछे भी एक पैदल सैनिक चल रहा है। दूसरे शब्दों में यह एक सामान्य राजकीय जुलूस की तरह है। यहाँ विशिष्ट यह है कि लोगों को वापस लाने के लिए भी प्रबन्ध है जैसे खाली हाथी, खाली घोड़े से चलने वाला रथ एवं स्त्रियों को ले आने के लिए पर्देदार डोली। इनके माध्यम से राजकीय यात्रा के विवरणों का पता चलता है जो उस समय की संस्कृति का दिग्दर्शक है।

राजस्थानी चित्रों में सामान्य जनजीवन का चित्रण बहुत कम मिलता है। फिर भी जो उदाहरण प्राप्त हैं उससे ज्ञात होता है कि सामान्य पुरुष जामा का व्यवहार आवश्यक रूप में करते हों यह जरुरी नहीं था। अर्थात् भारतीय परम्परा में वह बिना कपड़े के दिखलाए जाते हैं। इसका चित्रकारों ने ध्यान रखा है जैसे- मेवाड़ शैली के गोवर्धन धारण के सुप्रसिद्ध चित्र में (कला भवन संग्रह) हम गोवर्धन पर्वत की छाया में उपर्युक्त दोनों श्रेणियों की पुरुष आकृति पाते हैं अर्थात यह वर्ग भेद स्पष्ट रुप से दिखलाया गया है । यही स्थिति इसी संग्रह के दवानलपान वाले चित्र में है। उदाहरण के लिए एक अन्य दृश्य है जिसमें वृन्दावन छोड़कर जाते हुए सारे ब्रजवासी महाराज नन्द के नेतृत्व में जाते हुए दिखलाए गए हैं| यह रसिकप्रिया का दृश्य है। सर्वोपरि कभी-कभी इन दृश्यों में जनसामान्य बहुत तंग मोहरी के नाटे पायजामे पहने हुए दिखलाए गए हैं। इस प्रकार चित्रकार ने वर्ग भेद प्रगट किया है जो तत्कालीन जीवन का प्रतिबिम्बन करते हैं।

निष्कर्ष

उपर्युक्त विवरणों से हमें यह निष्कर्ष मिलता है कि सैर सपाटे और यात्रा एक स्वाभाविक प्रक्रिया थी। तत्कालीन समाज में युद्ध, आखेट, देवदर्शन, प्रेम पथिक, देश-दर्शन, आमोद-प्रमोद आदि मानवीय क्रियाओं के द्वारा तत्सम्बन्धी दृश्य मिलते हैं। इनके माध्यम से तत्कालीन संस्कृति के विभिन्न अंगों पर प्रकाश पड़ता है। साथ ही पृष्ठभूमि में राजस्थान की चित्रगत विशेषताओं और सौन्दर्य का भी दर्शन होता है। यह चित्र स्पष्ट करते हैं कि दरबार के चित्रण के साथ ही लोकजीवन भी चित्रकला का प्रमुख वर्ण्य विषय रहा है| इस प्रकार कला की यह मधुर स्मृति लोकसंस्कृति से भी जुड़ी दृष्टिगोचर होती है|

संदर्भ सूची

टाप्सफील्ड, ऐण्ड्र (1980), पेंटिंग फ्रॉम राजस्थान इन द नेशनल गैलरी ऑफ विक्टोरिया: कलेक्शन एक्वायर्ड थ्रू दी फेल्टन बेक्वेस्ट कमेटी, मेलबर्न, प्लेट- 107

अन्धारे, श्रीधर (1987), क्रोनोलॉजी ऑफ मेवाड़ पेंटिंग, दिल्ली, प्लेट-92, 93

वशिष्ठ, आर0के0 (1995), आर्ट ऐण्ड आर्टिस्ट ऑफ राजस्थान, नई दिल्ली, प्लेट-29

बीच, माइलो क्लीवलैण्ड (1974), राजपूत पेंटिंग एट बूंदी ऐण्ड कोटा, स्वीटजरलैण्ड, प्लेट नं0 43

टाप्सफील्ड, ऐण्ड्र (1980), उपर्युक्त, प्लेट- 83

चैतन्य, कृष्ण (1982), हिस्ट्री ऑफ इण्डियन पेंटिंगः राजस्थानी टे*डिशन्स, नई दिल्ली, प्लेट- 72

भारतीय जाति व्यवस्था - गांधी एवं अम्बेडकर

डा. राजीव कुमार सिंह*
डा. नरेश कुमार सोनकर**

सारांश

प्रस्तुत शोध पत्र गांधी एवं डॉ. अम्बेडकर के जाति के प्रति उनके विचारों का एक तुलनात्मक विश्लेषण करने का प्रयास है, साथ ही भारतीय दर्शन की दो समानान्तर विभूतियों के मतों के वास्तविक प्रभाव का मूल्यांकन करने की चेष्टा है। भारतीय राष्ट्रीय चेतना का विकास किसी निश्चित वैचारिकी तक सीमित नहीं था, बल्कि इसके विकास में विभिन्न वैचारिकी का सम्मिश्रण नज़र आता है। गांधी एवं अम्बेडकर के मध्य का वैचारिक दुराव 'धर्म' के प्रति उनकी दृष्टि और उनके विचार के सन्दर्भ में परिलक्षित होता है। प्रस्तुत शोधपत्र में यह स्पष्ट किया गया है कि सामाजिक सुधारों विशेषकर जाति व्यवस्था के खिलाफ भी भारतीय सामाजिक दर्शन में भिन्न एवं समानान्तर मत देखने को मिलता है। डॉ. अम्बेडकर ने अपनी लेखनी एवं विचारों में जातिप्रथा तथा वर्ण व्यवस्था के उन सभी मूल आधारों को सैद्धांतिक रूप से शामिल किया है। जबकि गांधीजी अस्पृश्यता को एक नैतिक और धार्मिक समस्या मानते थे और उसके उन्मूलन के लिए वैधानिक साधनों को अपनाने के बजाय व्यापक जनजागृति एवं मानसिक परिवर्तन पर जोर देते थे। प्रस्तुत शोध प्रपत्र में गांधी एवं अम्बेडकर के जाति के प्रति उनके विचारों का एक तुलनात्मक विश्लेषण करने का प्रयास है। साथ ही भारतीय दर्शन की दो समानान्तर विभूतियों के मतों का वास्तविक प्रभाव का मूल्यांकन करने की चेष्टा है।

बीज शब्द - जाति, वर्ण, सामाजिक व्यवस्था

परिचय:

बीसवीं शताब्दी का उत्तरार्ध, भारतीय सामाजिक व्यवस्था एवं राजनैतिक परिप्रेक्ष्य में नवचेतना के स्थापना का चरण रहा है, जिसमें जहां एक ओर औपनिवेशिक शासन से मुक्ति का प्रयास संगठित रूप से परिणत होता है, वहीँ दूसरी ओर भारतीय सामाजिक व्यवस्था में व्याप्त कुरीतियों को भी दूर करने का प्रयास किया गया। जाति आधारित विभेद एवं अस्पृश्यता का प्रचलन ऐसे ही कुरीति थी जिसके खिलाफ कई

* लेखक राजनीति विज्ञान विभाग, हरियाणा केन्द्रीय विश्वविद्यालय में सहायक प्राध्यापक हैं।
** लेखक समाजशास्त्र एवं सामाजिक मानवशास्त्र विभाग, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय, अमरकंटक में सहायक प्राध्यापक हैं।

सामाजिक चिंतकों ने समय-समय पर अपनी आवाज को मुखर किया | हालाँकि सामाजिक सुधारों के सम्बन्ध में कोई एक ही दीर्घकालिक नीति या रणनीति देखने को नहीं मिलती है। भारतीय राष्ट्रीय चेतना का विकास किसी निश्चित वैचारिकी तक सीमित नहीं था बल्कि इसके विकास में विभिन्न वैचारिकी का सम्मिश्रण नज़र आता है। यही कारण रहा की लक्ष्य एक होते हुए भी विभिन्न वैचारिक धाराएं समानान्तर रूप से भारतीय राजनैतिक परिदृश्य में देखने को मिलती हैं। इसी प्रकार से सामाजिक सुधारों विशेषकर जाति व्यवस्था के खिलाफ भी भारतीय सामाजिक दर्शन में भिन्न एवं समानान्तर मत देखने को मिलता है। महात्मा गांधी और डॉ. भीम राव अम्बेडकर बीसवीं शताब्दी के ऐसे ही दो सामाजिक एवं राजनैतिक विचारक रहे जिनके ध्येय में तो एकरूपता है किन्तु जाति व्यवस्था के उन्मूलन के लिए इनके विचार एवं प्रयासों में काफी भिन्नता पायी जाती है। यह भिन्नता उनके सामाजिक-राजनैतिक जीवन के अनुभवों एवं ध्येय के प्रति उनकी दृष्टि में अंतर से उत्पन्न होती है।

वर्तमान भारत में गांधी एवं अम्बेडकर दोनों के विचारो के मध्य का अंतर, उनके अनुनायियों को दो विपरीत धड़ो में विभाजित करता हुआ प्रतीत होता है (बरुआ, 2019) | हालाँकि दोनों ही गुट जाति-व्यवस्था या उससे जुडी कुरीतियों के उन्मूलन के लिए प्रयासरत हैं। इनके विचारों के मध्य के भेद को विभिन्न विद्वानों ने आधुनिक राज्य, संवैधानिक सुधारों, राष्ट्रवाद, सामाजिक पुनर्संरचना एवं ब्रिटिश औपनिवेशवाद की परिस्थियों के आयामों पर विश्लेषित किया है | यह लेख इनके विचारों को एक समग्रता में देखने का प्रयास करता है |

भारत में जाति व्यवस्था भारतीय उपमहाद्वीप में सामाजिक वर्गीकरण और सामाजिक प्रतिबंधों का वर्णन करती है, जिसमें सामाजिक वर्गों को अन्तः समूहों के वंशानुगत विकासक्रम में परिभाषित किया जाता है। इसमें दो अलग-अलग अवधारणाएं 'वर्ण' एवं 'जाति' शामिल हैं। हालाँकि जाति व्यवस्था को सामान्यतः हिन्दू धर्म से जोड़ककर देखा जाता है, किन्तु इसका प्रभाव यहाँ प्रचलित अन्य धर्मों जैसे कि इस्लाम, ईसाई, बौद्ध एवं सिख धर्म पर भी देखा जा सकता है, अर्थात जातीय संरचना ने अधिकांश धर्मों की सामाजिक संरचना पर प्रभाव डाला है और सामाजिक पदानुक्रम के निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती नज़र आती है (सिंह, 2019) |

गांधीजी का जन्म एक वैष्णव परिवार में हुआ और उनके लालन-पालन में उनकी माँ की धार्मिक प्रवृति का महत्वपूर्ण प्रभाव दिखता है। उनके दर्शन में धर्म विशेषकर हिन्दू एवं जैन धर्म का विशेष प्रभाव रहा है। वह हिन्दू धर्म ग्रंथों में निहित नैतिकता से अत्यधिक प्रभावित नजर आते हैं। जाति उत्पत्ति के विभिन्न सिद्धांतों में प्रजातीय सिद्धांत (Racial Theory) एवं वर्ण या आर्य सिद्धांत बीसवीं शताब्दी में अत्यधिक प्रभावी रहा है। गांधीजी हिन्दू धर्म और आर्य संस्कृति के मूल स्वरुप के पक्षधर थे और वह वर्ण व्यवस्था को समाज में

कार्यों के विभाजन के रूप में देखते थे, जिसमें पदसोपान का लोप होता है, अर्थात उनके अनुसार वर्णाश्रम में कोई भी व्यक्ति बड़ा या छोटा नहीं होता है। भीखू पारेख का मानना है कि गांधीजी ने वर्ण व्यवस्था को एक नैतिक द्रष्टिकोण से देखा है जिसमें गांधीजी के अनुसार मानवता की सेवा करने वाला और उससे प्राप्त मोक्ष प्राप्त करने वाला ही ब्राह्मण है। ब्राह्मण जैसे स्थान लिए किसी विशिष्ट जाति या स्थान पर जन्म प्राप्त करने की कोई आवश्यकता नहीं है (पारेख, 1999)। इसके साथ ही अस्पृश्यता का अंत इनके प्रमुख ध्येयों में से एक था। अपने विभिन्न भाषणों एवं लेखनी में उन्होंने अस्पृश्यता पर जमकर प्रहार किया। 2 फ़रवरी 1934 के अपने एक वक्तव्य में उन्होंने कहा कि एक सवर्ण हिन्दू होने के नाते जब मैं यह देखता हूँ कि कुछ हिन्दुओं को अवर्ण कहा जाता है तो यह मेरे सत्य एवं न्याय की अवधारणा को आघात पहुँचाता है और यदि मेरे संज्ञान में हिन्दू शास्त्र में यह आता है और कोई इसको बनाये रखने की वकालत करता है तो मैं हिन्दू धर्म को त्याग दूंगा एवं उसकी निंदा एवं भर्त्सना करूँगा (हरिजन, 1934)। अपने राजनीतिक-सामाजिक जीवन के प्रारम्भ में भी उनका कहना था कि यदि यह साबित हो जाये कि अश्पृश्यता हिन्दू धर्म का मूल तत्त्व है, तो मैं हिन्दू धर्म के खिलाफ खुला विद्रोह करूँगा (द हिन्दू, 1915)। किन्तु इसके साथ ही 1933 में गांधीजी कहते है, मैं धर्म को छोड़ नहीं सकता और इसलिए हिन्दू धर्म को भी नहीं छोड़ सकता हूँ (हरिजन, 1935)।

गांधीजी अपने जीवन में धर्म विशेषकर हिन्दू धर्म को अत्यंत महत्वपूर्ण मानते हैं किन्तु धर्म की उनकी व्याख्या एवं सन्दर्भ, एक नैतिक मानवीय जीवन की स्थापना के लिए था जो एक आदर्श व्यक्ति एवं समाज की स्थापना की ओर प्रेरित करता है। वह धर्म या उसकी अपनी कुरीतियों को सिरे से नकारते हैं। गांधीजी के राजनैतिक जीवन का आरम्भ ही नस्लवाद एवं रंगभेद के विरोध से होता है। दक्षिण अफ्रीका के अपने एक दशक के आंदोलन से उन्होंने स्वंत्रतता, न्याय एवं बंधुत्व की स्थापना का प्रयास किया। गांधीजी एक व्यावहारिक राजनीतिज्ञ थे, इसीलिए उन्होंने न केवल अस्पृश्यता का सैद्धांतिक एवं वैचारिक स्तर पर विरोध किया वरन इन कुप्रथाओं के विरुद्ध जनमानस के बीच रहकर कार्य किया।

डा. अम्बेडकर का जन्म महाराष्ट्र के एक दलित परिवार में हुआ था तथा उन्होंने बाल्यकाल से ही अस्पृश्यता के दंश को महसूस किया था। उच्च शिक्षा के प्रभाव ने उनके विचारों में आधुनिकता का मूल तत्व 'विवेक एवं तर्क' आधार स्तम्भ के रूप में स्थापित किया। उन्होंने भारत में जाति व्यवस्था के 'आर्य सिद्धांत' की आलोचना प्रस्तुत करते हुए कहा कि, नृजाति विज्ञानियों के अनुसार, भारतीय समाज, द्रविड़ो ,मंगोलों एवं शकों का सम्मिश्रण है और इनके परस्पर सतत सम्पर्कों और सम्बन्धों के कारण एक सम्मिश्रित

संस्कृति का विकास एवं सूत्रपात हुआ है (अम्बेडकर:संपूर्ण वाङग्मय-16)।

अम्बेडकर ने सेनार्ट, नेसफील्ड, रिसले और डॉ. केतकर के जाति सम्बन्धी सिद्धांतों का विश्लेषण करने के पश्चात यह स्थापित करने का प्रयास किया कि 'यहाँ गोत्र बहिर्विवाह का विधान अंततः जाति अर्थात सजातीय विधान से भी जुड़ा है।' बहरहाल, मूल रूप से बहिर्गोत्री समाज में सजातीय विवाह विधान का सरलता से पालन संभव है, जातिप्रथा का मूल है और गंभीर समस्या है। इसी विधान के माध्यम से गोत्र बहिर्विवाहों के रहते सजातीय विवाह होता रहता है (अम्बेडकर:संपूर्ण वाङग्मय-21-22)।

डॉ. अम्बेडकर मनु स्मृति के कठोर आलोचक थे। इनका कहना था कि मनुस्मृति तात्कालिक समय में प्रभावशाली व्यक्तियों के द्वारा प्रभुत्व को विधिक एवं नैतिक रूप से स्थापित करने का प्रयास था। मनुस्मृति में निहित नैतिकता को वर्तमान की नैतिकता से भिन्न मानते थे। डॉ. अम्बेडकर के शब्दों में 'अकल्पनीय जाति विधान की संरचना की गई, यह कहना कोई अतिश्योक्ति नहीं है कि मनु ने कोई विधान नहीं बनाया। एक वर्ण को इतना रसातल में पहुंचा दिया कि उसे पशुवत बना दिया और उसको प्रताड़ित करने के लिए एक-वर्ण में बाँट दिया। वह अपना आधिपत्य ज़माने के लिए इतने अभावपूर्ण विधान की संरचना करता है जो इसकी व्यवस्था' में साफ झलकता है (अम्बेडकर:संपूर्ण वाङग्मय-28-29)। अम्बेडकर के अनुसार जाति व्यवस्था मनु के पूर्व भी प्रचलित थी। मनु ने उसे वैधानिक स्वरुप प्रदान किया। अपने विश्लेषण में डॉ. अम्बेडकर यह मानते हैं कि जाति व्यवस्था इतनी विराट है कि यह किसी एक व्यक्ति या एक वर्ग द्वारा स्थापित नहीं की जा सकती। अपने निष्कर्ष में उनका यह मानना था कि जाति व्यवस्था ब्राम्हणों द्वारा स्थापित व्यवस्था है'। अपनी कृति 'द अनटचेबल' में अम्बेडकर ने माना है कि जब स्थानीय व्यक्तियों पर विदेशी आक्रान्ताओं ने विजय प्राप्त की तथा उन पर अपना शासन स्थापित किया तब एक शोषित वर्ग (depressed class) की स्थापना होती है। यदि उनके विचारों को संक्षेपित किया जाय तो यह कहा जा सकता है कि वर्ण व्यवस्था से ही जाति व्यवस्था की आधारशिला रखी जाती है। वर्ण व्यवस्था एक निश्चित वर्ग (ब्राम्हणों) द्वारा अपने प्रभुत्व को स्थापित करने तथा उसे बनाये रखने का प्रयास है। इस प्रकार समाज जब वंशानुगत रूप से स्थापित होता है तो वह 'एक वर्ग' द्वारा शोषण का विशिष्ट स्वरुप प्रस्तुत करता है जो वास्तविकता में काफी भयावह है|

धर्म एवं जाति

गांधी एवं अम्बेडकर के मध्य का वैचारिक दुराव 'धर्म' के प्रति उनकी दृष्टि और उनके विचार के सन्दर्भ में परिलक्षित होता है। गांधीजी धर्म को मानव जीवन की आधारशीला मानते थे। उनकी आस्था प्रारम्भकाल से हिन्दू धर्म के प्रति रही है। वह धर्म को

मानव जीवन का एक अभिन्न हिस्सा मानते थे जिसका प्रभाव मानवीय जीवन के अन्य आयामों जैसे कि राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक आदि पर भी महत्वपूर्ण रूप से है। वह कहते हैं कि 'धर्म से मेरा मतलब सिर्फ हिन्दू धर्म से नहीं है, जिसे मैं निश्चित रूप से अन्य धर्मों के ऊपर रखता हूँ, बल्कि वह धर्म है जो हिन्दू धर्म से परे है ,जो किसी के स्वभाव को बदलकर उसे सत्य से अटूट रूप से बांधता है और उसे शुद्ध रखता है। वह आगे कहते है कि 'कोई धर्म के बिना नहीं रह सकता' (यंग इंडिया, 1920)। जाति व्यवस्था उत्पत्ति के सम्बन्ध में उनका कोई स्पष्ट मत नहीं था और वह कहते हैं कि यह एक ऐसी प्रथा है जिसके मूल का मुझे पता नहीं और न ही अपनी आध्यात्मिक क्षुधा की तृप्ति के लिए मुझे कोई जानने की आवश्यकता है। उनका मानना था कि जब समाज अज्ञानता का शिकार हुआ तब वर्ण के अनुचित उपयोग के कारण अनगिनत जातियांबनीं। उनके मतानुसार जाति व्यवस्था शरीर के विकृत अंग की तरह या फसल के साथ उपजे हुए खरपतवार की तरह अनुपयोगी वस्तु है अतः जाति व्यवस्था न तो ईश्वरीय है और न ही मानव जनित। इसीलिए गांधीजी लिखते हैं कि 'ईश्वर कभी भी ऐसी घातक रचना नहीं कर सकते (यंग इंडिया, 1920) | गांधीजी के वक्तव्यों एवं लेखनी से यह स्पष्ट होता है कि 'वह धर्म को जाति व्यवस्था से जोड़कर नहीं देखते थे। धर्म का वास्तविक स्वरुप इस तरह के विकारों को अस्वीकार्य करता है।' जाति आधारित विभेद एवं छुआछूत हिन्दूधर्म का अंग न होकर समाज में प्रचलित ऊँच -नीच की भावना से उत्पन्न हुआ है। वेद, उपनिषद, गीता आदि हिन्दू ग्रंथ इसका समर्थन नहीं करते हैं | उनके अनुसार "जिस धर्म में गऊ पूजा की स्थापना की गयी है, वह किसी मनुष्य के निष्ठुर एवं अमानुषिक बहिष्कार का समर्थन करे यह संभव नहीं है। कोई व्यक्ति जन्म-जात से अछूत नहीं माना जा सकता"(यंग इंडिया, 1921)। इसके साथ ही उन्होंने वर्ण व्यवस्था को एक आर्थिक प्रकार्यात्मक विभेद माना है। भारतीय परिदृश्य में गांधीजी का मानना था कि जीवन निर्वाह तथा लोक मर्यादा की रक्षा के लिए वर्ण सिद्धान्त बनाया गया है। यह व्यक्तियों को समाज में जीविकोपार्जन हेतु निपुण बनाने में सहायक है और सबसे महत्वपूर्ण यह है कि यह व्यक्ति के कर्मों के आधार पर निर्धारित होना चाहिए न कि आनुवंशिकी के आधार पर। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि गांधीजी धर्म और जाति-व्यवस्था में कोई सम्बन्ध नहीं स्थापित करते थे | उनके लिए धर्म मनुष्य के नैतिक एवं कार्मिक शुद्धि का एक साधन है।

डॉ. अम्बेडकर अपने जीवन काल में उनके साथ हुई 'छुआ-छूत' की कई घटनाओं के साथ ही आधुनिक सामाजिक एवं राजनैतिक अवस्थाओं के नए प्रतिमानों एवं मूल्यों से अत्यधिक प्रभावित रहे। वह विश्व में हो रहे वैचारिक परिवर्तन को भारतीय समाज में आरोपित करने हेतु प्रयासरत थे और साथ ही सामाजिक व्यवस्था की अतीतोन्मुखी सोच के कट्टर आलोचक भी थे। उनका कहना था कि "इस देश का धर्म आदिम है और इसके आदिम

संकेत इस आधुनिक काल में भी पूरे जोर-शोर से हावी हैं। यह कहना असंगत नहीं होगा कि आज दुनिया का कोई अन्य सभ्य देश ऐसा नहीं है जो आदिम मान्यताओं में लिपटा न हो (अम्बेडकर,संपूर्ण वाङ्ग्मय, 21)। उनका मानना था कि दलित वर्ग कभी भी हिन्दू धर्म का हिस्सा नहीं रहे हैं और इसलिए उन्हें हिन्दू रीति-रिवाजों एवं मान्यताओं का पालन नहीं करना चाहिए। वह अपनी लेखनी में हिन्दू एवं दलित शब्द का प्रयोग इस विभेद को दर्शाने के लिए निरंतर करते रहे हैं।

इसके साथ ही वह प्रचलित मान्यताओं जैसे कि सजातीय विवाह को जातीय व्यवस्था की उत्पत्ति का एक प्रमुख कारण मानते थे। उनका मानना था कि 'इन प्रथाओं के उद्भव की कोई वैज्ञानिक व्याख्या सामने नहीं आयी है। डॉ.अंबेडकर जाति व्यवस्था की उत्पत्ति के विभिन्न सिद्धांतों के अवलोकन के बाद यह तर्क देते हैं कि 'जाति व्यवस्था का जन्म वर्ण व्यवस्था से ही हुआ है, और यह एक प्रकार की 'श्रेणीबद्ध असमानता 'को स्थापित करती है (गांधी, 2015)। अम्बेडकर इस श्रेणीबद्ध असमानता को ब्राह्मणों का समाज पर प्रभुत्व बनाये रखने की एक युक्ति मानते थे और उनका मानना था कि इस व्यवस्था का विरोध समग्रता से होना चाहिए किन्तु वंचित जातियों द्वारा एकजुट होकर सामाजिक परिवर्तन के लिए प्रयास नहीं किया जाता है क्योंकि वह इस व्यवस्था से प्राप्त अपनी विशिष्ट सुविधाओं को बनाये रखने के लिए ही प्रयासरत रहते हैं। कोई भी वर्ण/जाति इसको नष्ट करने का प्रयास नहीं करता है। डॉ. अम्बेडकर वर्ण व्यवस्था एवं वर्ण नियमों (जैसा कि मनुस्मृति में प्रदत्त है) हिन्दू धर्म का अभिन्न अंग मानते थे और अपनी लेखनी में कई जगह वह 'हिन्दू धर्म' के अवैध नियमों 'जैसे वाक्यांशों का प्रयोग करते हैं (राव, 2010)। अम्बेडकर यह भी मानते थे कि विश्व के अन्य समाज की भांति प्रारंभिक दक्षता एवं कार्य के अनुसार समाज वर्गों में विभक्त था और इसीलिए वर्गों में व्यक्तियों के कार्य की परिवर्तनशीलता स्वीकार्य थी। किन्तु समय के साथ स्वजातीय विवाह एवं उसके नस्ल ने इस गतिशीलता को समाप्त किया। वह कहते हैं कि "दरअसल, जाति कुछ है ही नहीं, बल्कि जातिप्रथा है। मैं इसका उदाहरण देता हूँ। अपने लिए जाति संरचना करते समय ब्राह्मणों ने ब्राह्मण इतर जातियाँ बना डालीं। अपने तरीके से मैं कहूंगा कि अपने आपको एक बाड़े में बंद करके दूसरों को बाहर रहने के लिए विवश किया" (अन्निहिलेशन ऑफ़ कास्ट, 33-34)। इस प्रकार से लुई ड्यूमा की 'पवित्रता एवं अपवित्रता' की संकल्पना के आधार पर डॉ. अम्बेडकर का मानना था कि शूद्रों को स्थायी रूप से 'अपवित्र' प्रस्थिति में स्थापित कर दिया गया और इनसे अलगाव लिए अन्य जातियों को पवित्र घोषित कर दिया गया। डॉ. अम्बेडकर का मानना था कि वर्ण व्यवस्था हिन्दू धर्म का अभिन्न अंग है। इसीलिए संरचनाओं को नष्ट किये बिना जाति की व्यवस्था को नहीं तोड़ा जा सकता है और यही कारण रहा कि डॉ. अम्बेडकर ने हिन्दू धर्म को त्याग कर 'बौद्ध धर्म' को अपनाया|

सुधारात्मक दृष्टिकोण

जाति व्यवस्था एवं उससे उपजी 'स्वच्छता एवं अस्वच्छता की संकल्पना' तथा उस आधार पर अस्पृश्यता का प्रचलन भारतीय सामाजिक व्यवस्था की एक प्रमुख व्याधि रही है। गांधीजी एवं डॉ. अम्बेडकर दोनों ही इसके विरुद्ध सैद्धांतिक एवं व्यावहारिक रूप से प्रयासरत रहे। हालाँकि दोनों ही विभूतियों की जाति व्यवस्था के बारे में समझ भिन्न रही है किन्तु इनका मंतव्य एक जैसा ही रहा है। उदाहरणतः दोनों ही अस्पृश्यता को सामाजिक बुराई मानते थे और साथ ही इनका मानना था कि इसके रहते समानता एवं स्वतंत्रता के लक्ष्य की प्राप्ति नहीं हो सकती है।

गांधीजी का संपूर्ण राजनैतिक-सामाजिक दर्शन, मानव चरित्र में असीम विश्वास पर आधारित था। उनका मानना था कि निरन्तर प्रयास से व्यक्ति सत्य को पहचान सकता है तथा उस सत्य की प्राप्ति में आने वाली बाधाओं को भी दूर भी कर सकता है। व्यक्तियों की नैतिकता से दूरी सामाजिक व्यवस्थाओं में कई प्रकार की व्याधियों को जन्म देती है। जाति के आधार पर छुआ-छूत इसी प्रकार की ही एक समस्या है जिसको एक उच्च नैतिक बल से ही दूर किया जा सकता है। वह अस्पृश्यता को एक नैतिक और धार्मिक समस्या मानते थे और उसके उन्मूलन के लिए वैधानिक साधनों को अपनाने के बजाय व्यापक जनजागृति एवं मानसिक परिवर्तन लाने पर जोर देने की बात करते हैं। उनका मानना था कि सनातनी हिन्दू जब तक अपने कलुषित धार्मिक विचार परिवर्तित नहीं करते और जब तक अपने में मानवीय नैतिकता बोध जागृत नहीं करते हैं तब तक केवल कानून के जोर से उन्हें अस्पृश्यता विरोधी नहीं बनाया जा सकता है। अतः सबसे पहले यह सवर्ण हिन्दुओं को समझना होगा कि अस्पृश्यता की वर्तमान दशा के लिए वह ही उत्तरदायी हैं और इसीलिए यह उनका कर्तव्य है कि वह स्वंय चलकर अस्पृश्यों के पास जाएं और उनके सुधार का हर संभव प्रयास करें। गांधीजी "भारतीय समाज में सुधार लाने हेतु वैधानिक उपागम को अपर्याप्त मानते थे। वह इस समस्या का निदान 'सत्य एवं अहिंसा' पर आधारित हिंदू धर्म के दायरे के अंतर्गत 'एक सुधारात्मक क्रांति 'के माध्यम से करना चाहते थे जिसमें समाज के सभी वर्गों की सामान रूप से भागीदारी हो" (बिश्वास, 2016)।

इसके साथ ही गांधीजी का यह भी मानना था कि जिन आधारों पर स्वच्छ-अस्वच्छ को संदर्भित कर विभेद को स्थापित किया जाता है उन्हें भी दूर करना आवश्यक है। अछूत भी अपना सुधार करे यह आवश्यक है। वह पवित्र और स्वच्छ जीवन व्यतीत करे, बुराइयाँ और गन्दी आदतें छोड़कर अपने आप को साफ-सुथरा रखे। गांधीजी ने पवित्रता से जुड़े कथात्मकता को भी चुनौती दी। भंगी जाति जो उस दौरान साफ-सफाई के कार्यो में संलग्न थे, का उदाहरण देते हुए उनका कहना था कि जिस प्रकार अपने बच्चों का मल-मूत्र

साफ करके एक माँ हाथ-पैर शुद्ध कर लेने पर पवित्र हो सकती है और अशुद्ध नहीं रहती है, उसी प्रकार से एक भंगी भी अपने कार्य के बाद हाथ-पैर शुद्ध कर लेने पर अछूत नहीं होता है।

इसके अतिरिक्त मंदिर में प्रवेश को लेकर भी गांधीजी का मत सुधारात्मक रहा। हालाँकि वह खुद मंदिर जाने को लेकर उत्साही नहीं थे इसके बावजूद उन्होंने कल्लपन्न में तब तक अनशन किया जब तक की केरल के गुरुवायूर मंदिर के द्वार अछूतों के लिए खोल नहीं दिये गए। गांधीजी ने कहा कि 'हिन्दू जनता जिसमें हरिजन भी शामिल हैं, का मानस किसी और बात से इतना प्रभावित नहीं होता है, जितना इससे कि उसे सवर्ण जातियों के समान स्तर पर मंदिर में प्रवेश का अधिकार हो। वह इसे एक प्रतीकात्मक समानता के रूप में देखते थे और इसीलिए मंदिर प्रवेश के मुद्दे पर इतना बल देते थे।

डॉ.अम्बेडकर अपनी लेखनी एवं विचारों में जातिप्रथा तथा वर्ण व्यवस्था के उन सभी मूल आधारों को सैद्धांतिक रूप से शामिल करते हैं। उनका मानना था कि जातिप्रथा केवल श्रम का विभाजन नहीं है, यह श्रमिकों का विभाजन है (अम्बेडकर, संपूर्ण वाङ्गमय, 66)। किसी भी सभ्य समाज में श्रम के विभाजन के साथ इस प्रकार के पूर्णतः अलग वर्गों में श्रमिकों का अप्राकृतिक विभाजन नहीं होता है। यह एक श्रेणीबद्ध व्यवस्था है, जिसमें श्रमिकों का विभाजन बिल्कुल भिन्न है और यह विभाजन स्वतः नहीं होता है (अम्बेडकर, संपूर्ण वाङ्गमय, 66)। डॉ. अम्बेडकर ने वंचित वर्ग से जुडी कथनात्मकता को बढ़ाने का प्रयास किया जिसके कारण उनमें एक आत्माविश्वास एवं सम्मान की भावना जागृत हो सके (क्रिस्टोफर, 2009)।

अपने इन प्रयासों से उन्होंने न केवल जाति उत्पत्ति के सिद्धांत एवं उससे उपजी 'श्रेणी असमानता को नकारा बल्कि उसके साथ उन्होंने इस व्यवस्था से इतर भूमि-पुत्र की संकल्पना (Son of the Soil) के माध्यम से 'दलितों' में एक नई चेतना का सूत्रपात किया। डॉ. अम्बेडकर का मानना था कि यदि 'दलित' अपने आप को इस धरती का 'मूल निवासी' और 'बौद्ध' मानने लगेंगे तो वह वर्तमान में विभिन्न जातियों के बँटवारे से बाहर आने में सक्षम होंगे तथा इस अन्यायपूर्ण व्यवस्था के खिलाफ एकजुट होकर खड़े हो सकेंगे । डॉ. अम्बेडकर लोकतांत्रिक राजनीतिक व्यवस्था के माध्यम से सुधारों के प्रबल समर्थक थे। उनको लोकतांत्रिक व्यवस्था में संख्या बल का महत्व भली-भांति से ज्ञात था। वह भारत में प्रादेशिक निर्वाचन प्रणाली के खिलाफ थे। उनका मानना था कि यह भारतीय समाज में छूत एवं अछूत के वृहद् विभाजन को बनाये रखेगी क्योकि प्रादेशिक निर्वाचन प्रणाली में 'अछूत' अल्पसंख्यक रहेंगे।

1928 में साइमन कमीशन को 'बहिष्कृत हितकारिणी सभा' की ओर से दिए गए अपने ज्ञापन में अम्बेडकर ने 'सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार' के साथ अस्पृश्यों के लिए

एक पृथक निर्वाचन की भी माँग की थी (वह दलितों को हिन्दू धर्म का हिस्सा नहीं मानते थे)। 1932 के 'कम्युनल अवार्ड 'में दलितों के लिए 71 पृथक निर्वाचन क्षेत्रों प्रावधान किया गया था, जिसका गांधी ने पुरजोर विरोध किया। कुछ दिनों बाद जब गांधीजी ने यह प्रस्ताव रखा कि दलितों को 'कम्युनल अवार्ड' प्रस्तावित संख्या से अधिक प्रतिनिधि प्रदान किया जाये किन्तु उनको पृथक निर्वाचन न दिया जाये। इसके बाद डॉ. अम्बेडकर ने द्वितीय गोलमेज सम्मलेन में अपना त्यागपत्र दे दिया। 'पूनापैक्ट' के तहत एक आरक्षण की व्यवस्था स्थापित हुई जिसमें विधान परिषद् में 148 निर्वाचन क्षेत्रों को आरक्षित रखा गया किन्तु इन आरक्षित क्षेत्रों में वह सभी जाति एवं धर्म के व्यक्तियों का प्रतिनिधित्व करेंगे। इस पृथक निर्वाचन प्रणाली की व्यवस्था नहीं हो सकी। वर्ष 1936 में उन्होंने 'स्वतंत्र मजदूर पार्टी' की स्थापना की जिसका मंतव्य 'ब्राह्मणशाही एवं 'भांडवलशाही' से शिक्षित वर्ग को मुक्ति दिलाना था। हालाँकि डॉ. अम्बेडकर आर्थिक शोषण के विरुद्ध थे किन्तु वह मार्क्सवाद के निकट नहीं आते हैं। उनके लिए जाति पदक्रम ही केंद्र बिंदु रहा है।

वर्ष 1942 उन्होंने 'शेड्यूल कास्ट फेडरेशन' की स्थापना की तथा इसकी कार्यकारी समिति ने कहा कि 'भारतीय राष्ट्रीय जीवन में अनुसूचित जाति एक पृथक तत्त्व है, और यह एक धार्मिक अल्पसंख्यक है, जैसा कि सिख एवं मुसलमानों के लिए प्रस्ताव में कहा गया है (Report of AISCF)।

जाति पर विमर्श डॉ. अम्बेडकर के विचारों एवं प्रयासों के केंद्र में रहा है। वह शायद पहले विद्वान थे जिन्होंने इतने विस्तृत रूप में जाति व्यवस्था का एक तार्किक विश्लेषण प्रस्तुत किया और साथ ही धार्मिक कुरीतियों पर इतने खुले रूप से प्रहार किया। हालाँकि वह जाति व्यवस्था एवं उससे जुड़े भेदभाव को दूर करने के लिए एक दीर्घकालिक योजना को प्रस्तुत नहीं करते हैं, किन्तु उनकी लेखनी समाजवादी, सुधारवादी, संवैधानिक, लोकतान्त्रिक मूल्यों के मध्य में नजर आती है।

समानान्तरता एवं वैभिन्य

गांधीजी और डॉ. अम्बेडकर के विचारों तथा कई घटनाक्रम में उनका एक-दूसरे के विपरीत मतों का होना विशेषकर जातीय समस्या को लेकर विद्वानों द्वारा भिन्न-भिन्न परिप्रेक्ष्य में विश्लेषित किया गया है, दोनों ही विद्वान अपने दर्शन को दो विभिन्न आयामों पर स्थापित करते हैं। गांधी के दर्शन का आधार एक आदर्शवादी समाज की संकल्पना से शुरू होता है जिसमें धर्म विशेषकर हिन्दू धर्म का प्रभाव साफ तौर से परिलक्षित होता है। एक आदर्श मानव समाज का आधार परमार्थवाद के द्वारा ही संभव है। उनका मानना था कि यदि व्यक्ति जीवन के इन आदर्शों को अपनाता है तो निश्चित ही वह आदर्श समाज की स्थापना करने में सफल होगा। डॉ. अम्बेडकर के विचार यथार्थवादी एवं आधुनिकता को पूरा

समाहित किये हुए नजर आते हैं। मानव समाज का एक स्वरुप उनकी लेखनी का विषय नहीं रहा है, बल्कि वह अपने समय के यथार्थ की समस्याओं के विश्लेषण पर अधिक बल देते हुए नजर आते हैं।

किन्तु यह कहना कि दोनों का दर्शन एक-दूसरे के विपरीत है उचित प्रतीत नहीं होता है। पन्थम (Pantham) का मानना है कि अपनी सच्ची उदारवादी, हालाँकि अलग-अलग तरीकों से गांधी और अम्बेडकर दोनों अस्पृश्यता उन्मूलन के प्रति एक सच्ची एवं गहरी प्रतिबद्धता साझा करते हैं (सिंह, 2010)। इसी सन्दर्भ में एक अन्य विद्वान् सुहास पसलिकर का भी मानना है कि "गांधी एवं अम्बेडकर का संवाद एक दूसरे के विपरीत नहीं है" (पसलिकर, 1996)।

गांधी एवं अम्बेडकर दोनों ही जाति व्यवस्था से उपजी अस्पृश्यता को दूर करने के लिए प्रयासरत थे किन्तु इस सन्दर्भ में उनकी समझ एक दूसरे से भिन्न थी। जहाँ गांधी अस्पृश्यता को हिन्दू धर्म में उपजे एक विकार के रूप में देखते थे और इसके निवारण हेतु सामाजिक सुधारवादी दृष्टिकोण एवं व्यक्तिगत सत्याग्रह पर बल देते थे वही डॉ. अम्बेडकर इसे हिंदू धर्म के ब्राह्मणवादी स्वरुप का एक अभिन्न अंग मानते थे। उनके अनुसार, 'दलित' हिन्दू धर्म में समानता का भाव प्राप्त नहीं कर सकते हैं इसलिए उन्हें ब्राह्मणो द्वारा बनाई गयी इस धार्मिक व्यवस्था को त्याग देना चाहिए। गांधीजी एक 'दार्शनिक अराजकतावादी' थे, जिनका मानना था की "समाज अपने नैतिक परिष्करण को हासिल करने में सक्षम है और यह उद्देश्य व्यक्तिगत भी है और सामूहिक भी। यदि दोनों ही स्तरों पर ऐसा होता है तो किसी वाह्य बाध्यकारी शक्ति (जैसे की राज्य) की आवश्यकता नहीं रह जाएगी।" वही इससे इतर डॉ. अम्बेडकर सामाजिक सुधारों हेतु राज्य एवं संवैधानिक उपागमों में आस्था रखते थे। आधुनिक लोकतंत्र एवं उसके द्वारा स्थापित सत्ता समानता एवं स्वतंत्रता के भाव को समाहित किये हुए है। राज्य एवं संविधान का होना तथा इस दिशा में प्रयास अपरिहार्य है। गांधीजी एवं डॉ. अम्बेडकर के विचारों की तुलना करते हुए विचारक रामचंद्र गुहा लिखते हैं कि "गांधी अस्पृश्यता का अंत करके हिन्दुत्व को बचाना चाहते थे, वहीं अम्बेडकर अपने लोगों के लिए इस समस्या का समाधान भारतीयों के बाहर खोजते हैं। गांधी एक आदर्श ग्राम की संकल्पना प्रस्तुत करते हैं, जिसका आधार स्वशासन हो ,वहीं अम्बेडकर आधुनिक जीवन के प्रवर्तक रहे हैं जो आधुनिकता के माध्यम से ग्रामीण जीवन की असमानता को दूर करना चाहते हैं। गांधीजी एक प्रबल अराजकतावादी थे जिन्होंने राज्य के अवांछनीय आचरण के विरुद्ध अहिंसात्मक प्रदर्शन को बल दिया, वही अंबेडकर की संविधानवाद में निर्बाध आस्था रही है जो राज्य के अंदर रहकर सामाजिक निराकरण खोजने के लिए प्रयासरत रहे हैं (गुहा, 2010)।

निष्कर्ष

हालाँकि ऐतिहासिक सन्दर्भ में गांधी एवं अम्बेडकर को राजनैतिक प्रतिद्वन्दी के रूप में देखा जाता रहा है किन्तु इनके योगदान को एक-दूसरे के पूरक के रूप में भी देखा जा सकता है। दलितोद्धार और अस्पृश्यता का प्रश्न भारतीय समाज में व्याप्त है जिसके निवारण का प्रयास दोनों ही विद्वानों के विचारों में दिखाई देता है। दोनों के सन्दर्भ एवं सामाजिक विश्लेषण के उपागम की भिन्नता उनको दो विपरीत सिरों पर आरोपित करती प्रतीत होती है, हालाँकि दोनों एक ही उद्देश्य के लिए प्रयासरत रहे हैं|

संदर्भ सूची

अंकुर बरुआ (2019), 'रिविसिटिंग द गांधी-अम्बेडकर डिबेट ओवर 'कास्ट': द मल्टीपल रेजोनेंस ऑफ़ वर्ना', जर्नल ऑफ़ ह्यूमन वैल्यू 25(1)-25-80, सेज पब्लिकेशन.

राजीव कुमार सिंह (2019) ,'अस्पृश्यता का प्रश्न' ज्ञान गरिमा सिंधु, जनवरी – मार्च, अंक 21, ,मानव संसाधन विकास मंत्रालय, नई दिल्ली

भीकू पारेख (1999) " कोन्स्तीटूसन, ट्रेडिशन, एंड रिफार्म एनालिसिस" पोलिटिकल डिस्कोर्स, न्यू डेल्ही.

गांधी महात्मा, (1934) हरिजन साप्ताहिक समाचार पत्र

द हिन्दू मई 3, 1914

हरिजन बन्धु मार्च 121934

डा. अम्बेडकर -संपूर्ण वाङग्मय -भाग 1, डा. अम्बेडकर फाउंडेशन -सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता विभाग,भारत सरकार - नई दिल्ली

यंग इंडिया , साप्ताहिक समाचार पत्र -12/05/1920

यंग इंडिया साप्ताहिक समाचार पत्र 06/10/1921 स्रोत: https://www.gandhismriti.gov.in/sites/default/files/GSDS_MAG_83-min.pdf

डा. अम्बेडकर -संपूर्ण वाङग्मय -भाग 1, डा. अम्बेडकर फाउंडेशन -सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता विभाग,भारत सरकार - नई दिल्ली

सरद गांधी (2015): डॉ भीम राव अम्बेडकर एंड री-इंटरप्रिटेशन ऑफ़ अनटौचेबिल्टी: लेगिस्तिमातिंग अगेंस्ट कास्ट वायलेंस इन रूरल इंडिया : 1930-1974, रेत्रोस्पेक्टिव, वॉल्यूम-4, इशू-1, स्प्रिंग 2015

अनुपमा राव (2010), द कास्ट क्वेश्चन: दलित एंड पॉलिटिक्स ऑफ़ मॉडर्न इंडिया, रानीखेत: परमानेंट ब्लैक,

डा. अम्बेडकर ,(1935)अन्निहिलेशन ऑफ़ कास्ट, मैंपल प्रेस ,नई दिल्ली

संजय बिश्वास: गांधी एप्रोच तो कास्ट एंड अनटौचेबिल्टी: अ री-अप्प्रैसल", सोशल

साइंटिस्ट, वॉल्यूम 46, नं० 9-10, (544-545), सितम्बर-अक्टूबर 2016,

डा. अम्बेडकर -संपूर्ण वाङग्मय -भाग 1, डा. अम्बेडकर फाउंडेशन -सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता विभाग,भारत सरकार - नई दिल्ली

क्रिस्टोफर जैफेरोलोत (2009), "अम्बेद्कर्स स्ट्रेटेजी अगेंस्ट अनटौचेबिल्टी एंड कास्ट सिस्टम" वहर्किंग पेपर सेरिज, वॉल्यूम-III, नंबर- 4, 2009, इंडियन इंस्टिट्यूट ऑफ़ दलित स्टडीज

द पोलिटिकल डिमांड ऑफ़ शेदुल कास्ट-रेसोलूसन पास्ड बी द वहर्किंग कमेटी ऑफ़ आल इंडियास शेदुल कास्ट फेडरेशन: अपेंडिक्स-XI- टू डा. अम्बेडकर, व्हाट कांग्रेस एंड गांधी हैव डन तो टू अनटौचेबल

आकाश सिंह(2010) गांधी एंड अम्बेडकर: इररेकोंसिअब्ले डिफरेंस, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ़ हिन्दू स्टडीज, दिसम्बर 2014 , वॉल्यूम 18 पृष्ठ -3

सुहास पस्लिकर (1996), "गांधी एंड अम्बेडकर इंटरफेस: व्हेन शैल द ट्वेन मीट?" इकनोमिक एंड पोलिटिकल वीकली, 31:2070

रामचंद्र गुहा (2010) गांधी-अम्बेडकर, आकाश सिंह एवं सिलिका मोहपात्रा द्वारा सम्पादित- इंडियन पोलिटिकल थॉट: अ रीडर, रूटलेज, लन्दन

मध्य भारत में आदिवासी राजनीतिक नेतृत्व का स्वरूप : मध्यप्रदेश एवं छत्तीसगढ़ के विशेष संदर्भ में

डॉ.अनिल कुमार*
डॉ. मंजीता पटेल**

सारांश

लगभग 700 विविध समुदायों के साथ जनजातियाँ भारतीय जनसंख्या का 8.6 प्रतिशत हैं। आदिवासी आबादी का सबसे बड़ा हिस्सा मध्य भारत में रहता है। जीवन के हर क्षेत्र में उनके संस्कृति-सापेक्ष विकास के लिए विभिन्न संवैधानिक और कानूनी प्रावधान होने के बावजूद जनजातियों की वर्तमान स्थिति विकास के मापदंडों और संबंधित बातचीत की शक्ति से काफी पीछे है जो लोकतांत्रिक भारत के लिए चिंताजनक है। यह ऐतिहासिक रूप से स्पष्ट है कि राजनीतिक जागरूकता और सक्रियता ने समुदायों के लिए विकास का मार्ग खोल दिया है। इसलिए राजनीतिक सक्रियता भारत में एक विशिष्ट समुदाय के रूप में आदिवासी विकास के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। 1947 में स्वतंत्रता के बाद से और भारत में संघीय लोकतंत्र को अपनाने के बाद, आदिवासी समुदायों के कई प्रभावशाली और लंबे समय तक सेवारत राजनेता रहे हैं। मध्य भारत में, विशेष रूप से मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ में, दिलीप सिंह भूरिया, अजीत जोगी, हीरा सिंह मरकाम, हीरालाल के अलावा और कई अन्य नेताओं ने भारत में आदिवासी राजनीति में अपनी छाप छोड़ी है। यह पत्र मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ में आदिवासी राजनीतिक नेतृत्व पर केंद्रित है और आदिवासी नेतृत्व के उद्भव के पीछे के कारकों जैसे सवालों पर गौर करने का एक ईमानदार प्रयास है; जिन मुद्दों पर उन्होंने ध्यान केंद्रित किया है; सामाजिक-आर्थिक और राजनीतिक क्षेत्रों में जनजातीय उत्थान में उनकी भूमिका; उनके द्वारा किए गए बलिदान और समझौते दोनों; आदिवासी मुद्दों आदि को हल करने के लिए उनकी समझ और दृष्टिकोण आदि । यह भारत में आदिवासी नेतृत्व के माध्यम से आदिवासी राजनीति की संभावनाओं को भी देखता है।

बीज शब्द - आदिवासी नेतृत्व, आदिवासी राजनीति, आदिवासी विकास, पेसा अधिनियम, आदिवासी आयोग, आदिवासी संस्कृति

* लेखक राजनीति विज्ञान एवं मानवाधिकार विभाग, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय, अमरकंटक में सहायक प्राध्यापक हैं |

** लेखिका जि. पं. बा. इं. कॉलेज, ज्ञानपुर, भदोही में प्रवक्ता के पद पर कार्यरत हैं |

प्रस्तावना

सम्पूर्ण विश्व में अब तक उपलब्ध एवं अनुभव की गयी शासन पद्धतियों में लोकतन्त्र ही एकमात्र ऐसी शासन पद्धति के रुप में सर्वमान्य रूप से स्थापित है जो समस्त मानव समाज को उसकी विविधताओं के साथ समान अवसर एवं अधिकार सुनिश्चित करती है। इसी दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए भारतीय संविधान सभा ने भारत जैसे सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक रूप से विविधतापूर्ण देश के लिए लोकतान्त्रिक संघीय राजनीतिक व्यवस्था का अनुमोदन किया। सामान्यतः सम्पूर्ण भारतीय समाज अनुसूचित जनजाति, अनुसूचित जाति, अन्य पिछड़ा वर्ग एवं सामान्य वर्ग जैसे वर्गों में वर्गीकृत है जिनके सामाजिक सांस्कृतिक, आर्थिक एवं राजनैतिक सरोकार विभिन्नता से परिपूर्ण हैं। यह एक सामान्य धारणा है कि स्वतन्त्रता पश्चात राजनीतिक नियन्त्रण जिन वर्गों के हाथ में रहा है उनका सर्वांगीण विकास तुलनात्मक रूप से अधिक तेज हुआ है। अतः राजनीतिक नियन्त्रण, प्रभुत्व एवं स्वरूप सामाजिक एवं आर्थिक विकास का एक प्रमुख कारक है।

जनगणना 2011 (tribal.nic.in) के अनुसार भारत में आदिवासी जनसंख्या 8.6 प्रतिशत है जिसका अधिकांश हिस्सा मध्य भारत में निवास करता है। मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा एवं राजस्थान में क्रमशः 14.7 प्रतिशत, 10.1 प्रतिशत, 9.2 प्रतिशत एवं 8.3 प्रतिशत आदिवासी जनसंख्या निवास करती है। जबकि झारखण्ड में 8.3 प्रतिशत एवं छत्तीसगढ़ में 7.5 प्रतिशत आदिवासी निवासरत हैं। उत्तर-पूर्व को छोड़कर, मध्य-भारत के तीन राज्यों मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़ एवं झारखण्ड में आदिवासी जनसंख्या राज्य जनसंख्या की तुलना में क्रमशः 21.1 प्रतिशत, 30.6 प्रतिशत और 26.2 प्रतिशत है। विकास के अन्य पैमानों जैसे शिक्षा, स्वास्थ, रोजगार, व्यवसाय, परिवहन, बिजली, पानी, मकान, आदि पर भी यहां के आदिवासी अन्य भूखण्डों के आदिवासियों से पिछड़ी स्थिति में हैं।

लोकतन्त्र में मत संख्या के महत्व को देखते हुए इन तीन राज्यों में आदिवासियों की राजनीतिक भूमिका काफी महत्वपूर्ण हो जाती है। विभिन्न राजनीतिक दलों द्वारा उन्हें अपने मत-समूह के रूप में स्थापित करने के प्रयासों के साथ-साथ इन राज्यों में आदिवासी गतिशीलता एवं आदिवासी राजनीतिक नेतृत्व के उभार की सम्भावनायें प्रबल होती हैं। आदिवासी राजनीतिक नेतृत्व का उभार राज्य के साथ-साथ संघीय राजनीति में नये आयाम जोड़ सकता है। आदिवासी मुद्दों की समझ, उनका दृष्टिकोण, नीति एवं क्रियान्वयन आदि पर अभूतपूर्व असर होगा। जैसा कि भीमराव अम्बेडकर कहा करते थे कि "राजनीति ही सम्पूर्ण विकास की चाभी है" (बद्री नारायण, 2014)। अतः एक ईमानदार एवं समर्पित आदिवासी राजनीतिक नेतृत्व आदिवासियों के विकास के दरवाजे खोल सकता है।

मध्य प्रदेश

मध्य प्रदेश भारत की सर्वाधिक जनजातीय आबादी वाला प्रदेश है। इसकी 21 प्रतिशत आदिवासी जनसंख्या में 46 विभिन्न जनजातीय समूह शामिल हैं। इसमें एक तरफ जहाँ सर्वाधिक संख्या वाले भील एवं गोंड समुदाय हैं, तो दूसरी ओर पनिका, बैगा, सहरिया, अगरिया इत्यादि जैसे सर्वाधिक पिछड़े आदिवासी समूह निवास करते हैं। एक ओर जहाँ भील एवं गोंड राजनीतिक रूप से ज्यादा सशक्त, संगठित एवं सक्रिय हैं, तो दूसरी ओर विशेष रूप से कमजोर जनजातीय समूहों का राजनीतिक दखल लगभग शून्य है। ऐसे में आजादी से अब तक, मध्य प्रदेश में गिनती के राजनीतिज्ञों (आदिवासी) का उदय हुआ जिनमें प्रमुख तत्कालीन राजनीतिज्ञ निम्नलिखित हैं-

दिलीप सिंह भूरिया

इनका जन्म 12 जून 1944 को ग्राम मछलिया, जिला झाबुआ, मध्य प्रदेश में एक सामान्य परिवार में हुआ तथा मृत्यु 24 जून 2015 को गुरुग्राम हरियाणा में हुई। आपने हाईस्कूल तक शिक्षा ग्रहण की थी। पेशे से किसान दिलीप सिंह भूरिया का सक्रिय राजनीतिक जीवन 1972 से शुरू जब हुआ जब वह पहली बार विधायक एवं अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के सदस्य बने। 1975-77 के दौरान मध्य प्रदेश विधानसभा लोक लेखा समिति के सदस्य के रूप में महत्वपूर्ण कार्य किया। 1980 में पहली बार लोकसभा के लिए चुने जाने से लेकर राष्ट्रीय राजनीतिक यात्रा शुरू हुई। 1980 से 1998 तक पाँच बार लोक सभा सदस्य (कांग्रेस) रहे। इसी काल में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस में कई महत्वपूर्ण दायित्व जैसे संयोजक, कांग्रेस संसदीय दल, संयुक्त सचिव (राष्ट्रीय), उपाध्यक्ष, व्हिप, आदि के साथ-साथ कई संसदीय समितियों जैसे अनुसूचित जाति एवं जनजाति कल्याण समिति, सलाहकार समिति गृह मंत्रालय आदि के सदस्य एवं अध्यक्ष हाऊस समिति एवं संविधान (अनु० 73-74) संशोधन अधिनियम समिति आदि के रूप अनेक महत्वपूर्ण कार्य किये (loksabha Profile)।

1995 में आदिवासी मुख्यमन्त्री की मांग को लेकर तत्कालीन मुख्यमन्त्री श्री दिग्विजय सिंह से टकराव के कारण कांग्रेस से मोह भंग हुआ तथा 1998 लोकसभा का टिकट न मिलने के कारण वह भारतीय जनता पार्टी में शामिल हो गये। सन् 2002 में राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति आयोग के अध्यक्ष एवं भारतीय जनता पार्टी के राष्ट्रीय उपाध्यक्ष बनाये गये। 2014 में छठीं बार लोक सभा के लिए रतलाम से निर्वाचित हुए। 24 जून 2015 को उनकी मृत्यु हो गयी।

दिलीप सिंह भूरिया की पहचान एक ऐसे लोकप्रिय अदिवासी नेता के रूप में होती है जो आजीवन गरीबों, आदिवासियों एवं मजदूरों के उत्थान के साथ-साथ अनेक

सामाजिक बुराइयों जैसे दहेज प्रथा, नशाखोरी, जातीय भेदभाव एवं शोषण आदि के विरुद्ध संघर्षशील रहे। आदिवासी पहचान एवं नेतृत्व के उभार के लिए आदिवासी सेवा संघ एवं आदिवासी विकास परिषद के माध्यम से अनेक कार्यक्रम आयोजित किये। गरीबों एवं आदिवासियों के आर्थिक उत्थान के लिए किये गये सहकारिता आन्दोलन में उनकी भूमिका अन्तर्राष्ट्रीय पहचान रखती है। वह अनेक सहकारिक संगठनों जैसे भारतीय राष्ट्रीय सहकारिता संगठन, अन्तर्राष्ट्रीय सहकारिता संगठन, सहकारिता बैंक, सहकारिता प्रशिक्षण संस्थान आदि के सदस्य अथवा उपाध्यक्ष आदि रहे। परन्तु भारत में आदिवासी विकास में उनकी भूमिका निम्नलिखित दो कार्यों से अविस्मरणीय बन गयी है-

1. अध्यक्ष, संविधान (अनु० 73-44) संशोधन विधेयक अधिनियम समिति, 1994-95 एवं
2. अध्यक्ष, अनुसूचित क्षेत्र एवं अनुसूचित जनजातीय आयोग, 2002-04

पंचायतीराज व्यवस्था का अनुसूचित क्षेत्रों (5 वीं अनुसूची) में समुचित क्रियान्वयन एवं आदिवासी परम्परा एवं संस्कृति के अनुरूप सामन्जस्य बिठाने को लेकर भारत सरकार द्वारा स्थापित संविधान संशोधन समिति ने निम्नलिखित महत्वपूर्ण अनुमोदन (1995) किये (सी आर बिजोय, 2012) -

1. आदिवासियों के बीच परम्परागत रूप से प्रचलित स्वप्रबंधन व्यवहार एवं स्वायत्तता का नयी स्थानीय स्वशासन योजना के साथ जीवंत सामन्जस्य बिठाकर सहभागी लोकतन्त्र की स्थापना की जाए
2. ग्रामसभा परम्परागत रूप से अनुमोदित स्थानीय कार्य करती रहे, खासकर जल, जंगल, जमीन और हवा आदि का प्रबंधन एवं नियन्त्रण|
3. गाँव, ब्लाक एवं जिला सीमाओं का पुन: निर्धारण किया जाय जिससे कि आदिवासी वर्तमान परिधि से निकलकर मुख्य भाग में आ सकें|
4. आदिवासी अतिवाद, विद्रोह एवं असहमतियों को शान्त करने के लिए आदिवासी बहुल क्षेत्रों को उपराज्य एवं स्वायत जिला परिषद का दर्जा ५वीं अनुसूची के क्षेत्रों में भी लागू किया जाय|
5. वर्तमान जमीन अधिग्रहण अधिनियम आदिवासियों के परम्परागत सामूहिक स्वामित्व के सिद्धान्त को मान्यता नहीं देता। इसे दूर कर के स्थानीय ग्राम समुदाय की सहमति अनिवार्य किया जाय। पुनर्वास योजना का निर्धारण एवं कार्यान्वयन ग्रामवासियों की सहमति से किया जाय|

6. स्थानीय अधिकारियों एवं कर्मचारियों की आदिवासी हितों के प्रतिकूल अभिवृत्ति पर चिन्ता व्यक्त करते हुए समिति ने उनका नियंत्रण एवं निर्देशन स्थानीय स्वशासन संस्थानों को समर्पित करने को कहा।

7. प्राकृतिक संसाधन समृद्ध होने के बावजूद आदिवासी औद्योगीकरण एवं नगरीकरण से होने वाले लाभों में हाशिए पर रह गए हैं जिससे उनमें असंतोष पनपता है। अतः समिति में ग्राम समुदाय एवं बाहरी पूँजीपतियों के भागीदारी वाली संसाधन-आधारित उद्योग व्यवस्था लागू करने की अनुशंसा की।

भारत सरकार ने अधिकांश संस्तुतियों को मानकर 24 दिसम्बर 1996 को पेसा (PESA) अधिनियम लागू कर दिया। इस अधिनियम ने आदिवासियों के राजनीतिक प्रतिनिधित्व (50 प्रतिशत), सामाजिक सांस्कृतिक परम्पराओं, प्रकृति पर आर्थिक निर्भरता, सामूहिक संसाधन स्वामित्व, सतत् विकास, स्थानीय नियंत्रण एवं सहभागिता आदि चिंताओं को समग्र रूप से संबोधित किया। हालाँकि पेसा अधिनियम के क्रियान्वयन को लेकर अभी भी आदिवासी चिंतायें एवं शिकायतें आती रहती हैं।

आदिवासी राजनीति एवं विकास में दिलीप सिंह भूरिया का दूसरा महत्वपूर्ण योगदान अनुसूचित क्षेत्र एवं अनुसूचित जनजाति आयोग के अध्यक्ष (2002-04) के रूप में किये गये कार्य हैं। भारत की आजादी के बाद यह दूसरा आयोग (पहला 1960 में यूएन ढेबर की अध्यक्षता में) था जिसे भारत में अनुसूचित जनजातियों की समस्याओं का परीक्षण एवं प्रतिवेदन देने का काम सौंपा गया था। इस आयोग की प्रमुख संस्तुतियां निम्नलिखित हैं- (दिलीप सिंह भूरिया, 16 जुलाई 2004)

1. जारवा, सेन्टीनिलीज एवं शोम्पेन जैसी जनजातियां धरोहर समूह (heritage groups) मानी जाएं (Vol.1, p.2)।

2. आदिवासी पंचशील के प्रथम सिद्धान्त का अनुसरण करते हुए नीतियां इस प्रकार बनायी एवं लागू की जाएँ कि आदिवासियों का विकास उनकी परम्परा एवं संस्कृति के अनुरूप हो। (उक्त)

3.जंगल और जमीन आदिवासी जीवन दो मूलभूत व्यवस्थायें हैं। जमीन अनाधिग्रहण कानून नगरीय एवं कृषि क्षेत्रों के साथ-साथ गैर कृषि भूमि पर लागू किये जाएं (खंड.1, पृ.३)।

4. जंगल आदिवासियों के परम्परागत घर हैं। अतः ऐसी नीतियाँ न बनायी जायें जो आदिवासी-प्रकृति साम्य को छिन्न-भिन्न करें।

5. आदिवासी उप-नियोजन (Tribal Sub-Plan) व्यवस्था को प्रभावी एवं समयबद्ध तरीके से लागू किया जाए। (खंड.1, पृ.4)

6. आर्थिक उत्थान के लिए पंचायतों को मुख्य कर्त्ता माना जाए।
7. 1999 में निर्मित जनजातीय मंत्रालय को पेसा अधिनियम एवं जमीन अनाधिग्रहण कानून के क्रियान्वयन की प्रशासनिक जिम्मेदारी दी जाए। केन्द्र सरकार अपने संवैधानिक उपायों एवं अधिकारों का प्रभावी उपयोग कर के आदिवासी विकास सुनिश्चित करे (खंड.1, पृ.7)|
8. आदिवासी सदियों से समुदायवादी समरस जीवन जीता रहा है परन्तु तत्कालीन बाह्य उपभोग संस्कृति का शिकार होकर आदिवासी युवा व्यक्तिवाद की ओर दौड़ चला है। यदि ऐसा होता रहा तो आदिवासी अपनी 'आदिवासियत' से दूर हो जायेगा। इस पर पुनर्विचार की आवश्यकता है (खंड.1, पृ.7)|

ये सभी पर्यवेक्षण एवं अनुशंसाएं काफी सारगर्भित एवं दूरगामी प्रवृत्ति की हैं। यह जहां एक ओर अदिवासी जीवन की समस्याओं, असमंजस एवं विडम्बनाओं की ओर इंगित करती हैं, वहीं दूसरी ओर समग्र एवं सतत् विकास की एक नयी एवं अनोखी विश्व दृष्टि प्रस्तुत करती हैं।

कान्तिलाल भूरिया

इनका जन्म 01 जून 1950 को मोरदुनिया, जिला झाबुआ, मध्य प्रदेश में एक साधारण परिवार में हुआ। चन्द्रशेखर आजाद कालेज, झाबुआ से ही परास्नात्तक एवं कानून स्नात्तक की पढ़ाई पूरी की। पेशे से वकील, राजनीतिक-सामाजिक कार्यकर्ता कान्तिलाल भूरिया की महत्वपूर्ण राजनीतिक यात्रा अध्यक्ष, कांग्रेस सेवा दल, झाबुआ के रूप में शुरू हुई। 1977 में मध्य प्रदेश कांग्रेस कमेटी के सचिव नियुक्त हुए। 1980-1997 तक मध्य प्रदेश विधान सभा के सदस्य रहे। 1987-98 तक मध्य प्रदेश सरकार में मंत्री रहे। 1998-2014 तक लगातार लोक सभा सदस्य रहे। विभिन्न संसदीय समितियों के सदस्य के रूप में कार्य किया। मई 2004 में केन्द्रीय राज्य मन्त्री, कृषि एवं उपभोक्ता मामले एवं खाद्य एवं सार्वजनिक वितरण बनाये गये। मई 2009 से जुलाई 2011 तक जनजातीय मामलों के कैबिनेट मन्त्री के रूप में महत्वपूर्ण कार्य किया। 24 नवम्बर 2015 रतलाम लोकसभा उपचुनाव निर्वाचित होकर संसद पहुंचे। 01.09.2017 से सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता पर स्थायी समिति के सदस्य के रूप काम कर रहे हैं। इस प्रकार छात्र नेता के रूप में शुरू हुआ राजनीतिक सफर अनवरत जारी है (loksabha profile)|

कान्तिलाल भूरिया को निपुण वक्ता (स्थानीय भाषा में), जमीनी नेता, जनजातियों के बीच लगातार सम्पर्क बनाये रखने वाले एक ऐसे नेता के रूप में जाना जाता है जो छात्र राजनीति से निकलकर जन सम्पर्क एवं संवाद कला में दक्ष हुआ। जनजातीय मामलों के

केन्द्रीय कैबिनेट मंत्री के रूप में कान्तिलाल भूरिया का कार्य उल्लेखनीय रहा है। 26 अगस्त एवं 01 सितम्बर 2010 को भूरिया ने सभी मुख्यमन्त्रियों को दो पत्र लिखे जिनमें कहा गया कि राष्ट्रीय पार्कों एवं सैंक्चुरियों से किसी भी आदिवासी को तब तक बेदखल न किया जाय जब तक कि वनाधिकार कानून के तहत सारे मुद्दे हल न हो जायें तथा इस कानून को तेजी से एवं प्रभावी ढंग से लागू किया जाए। इस उद्देश्य हेतु 3 सितम्बर 2010 को राष्ट्रीय जनजातीय कल्याण परिषद (NCTW) का गठन प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में किया गया (Smita Gupta, 05.09.2010) । इसके अतिरिक्त, राज्यों को निर्देश दिये गये कि जनजातीय कल्याण के केन्द्र द्वारा दिये गये धन का उचित एवं समयबद्ध उपयोग किया जाए (पीटीआई, जन. 21, 2013)। सूखे की मार झेल रहे आदिवासी क्षेत्रों में भी सभी प्रकार की राहत सामग्री एवं सहायता राशि की व्यवस्था केन्द्र सरकार करेगी (पीटीआईI, 20 सि. 2009)|

फग्गन सिंह कुलस्ते

इनका जन्म 18 मई 1959 को बरबटी, मंडला, मध्य प्रदेश में हु आ। यह कानून स्नात्तक तथा परास्नात्तक तक शिक्षा ग्रहण करने के साथ-साथ खेलकूद में भी सक्रिय रहे। कबड्डी, खोखो तथा वालीबाल में राज्य का प्रतिनिधित्व किया। अपना सार्वजनिक जीवन सामाजिक-राजनीतिक कार्यकर्त्ता के रूप में आरम्भ किया। 1990 में पहली बार मध्य प्रदेश विधानसभा के लिए चुने गये तथा मध्य प्रदेश प्लानिंग बोर्ड सदस्य के रूप में कार्य किया। 1996 लोक सभा के लिए चुने गये एवं तब से अब तक केन्द्रीय राजनीति का सफर अनवरत जारी है । अनेक महत्वपूर्ण जिम्मेदारियां जैसे सदस्य, अनुसूचित जाति एवं जनजाति कल्याण समिति, सदस्य बाह्य मामलों की स्थायी समिति, सदस्य संवैधानिक (अजजा) आदेश (संशोधन) विधेयक 1996, राज्य मन्त्री, संसदीय मामले, आदिवासी मामले इत्यादि सफलतापूर्वक निभाई। वर्तमान में केन्द्रीय राज्य मन्त्री, इस्पात मंत्रालय के पद पर सुशोभित हैं। सरकार के साथ-साथ भारतीय जनता पार्टी में भी अनेक महत्त्वपूर्ण जिम्मेदारियां निभाईं जैसे महासचिव, म.प्र., राष्ट्रीय अध्यक्ष भाजपा अनुसूचित जनजाति मोर्चा, राष्ट्रीय महासचिव, भाजपा अ.जा./ज.जा. सेल, प्रान्तीय अध्यक्ष एवं महासचिव, अखिल भारतीय आदिवासी विकास परिषद, म.प्र. एवं संरक्षक अखिल भारतीय गोंड संघ आदि। शिक्षा एवं स्वास्थ्य उन्नयन में विशेष रुचि है (आईएएनएस, 05जुलाई 2016)|

दलपत सिंह परस्ते

इनका जन्म 30 मई 1950 को ग्राम टांकी टोला, जिला शहडोल, मध्य प्रदेश में हुआ। उन्होंने कानून स्नात्तक पास किया एवं वकालत का पेशा शुरू किया । इनका राजनीतिक जीवन जनता पार्टी से शुरू हुआ जिसमें यह मध्य प्रदेश के संयुक्त सचिव रहे।

लोक दल में राष्ट्रीय कार्यकारिणी सदस्य एवं म.प्र. इकाई के सचिव भी रहे। तत्पश्चात् जनता दल में राष्ट्रीय कार्य कारिणी सदस्य एवं मध्य प्रदेश ईकाई के उपाध्यक्ष पद पर भी आसीन रहे। संसदीय जीवन (लोकसभा) 1977 से शुरू होकर मृत्यु (01 जून 2016) तक चला जिसमें कई महत्वपूर्ण समितियों जैसे कृषि या स्थायी समिति, ऊर्जा, मानव संसाधन, श्रम, कोयला और इस्पात तथा निजी सदस्य विधेयक आदि की स्थायी एवं सलाहकार समितियों के सदस्य के रूप में कार्य किया। इसके अतिरिक्त, सामाजिक एवं सांस्कृतिक गतिविधियों में विशेष रुचि लेते थे। कोयला कामगार यूनियन म.प्र. इकाई के अध्यक्ष के रूप में भी काम किया (loksabha profile)|

दलबीर सिंह

दलबीर सिंह का जन्म 7 मई 1944 को कोइलारी, शहडोल, मध्य प्रदेश में हुआ था। उन्होंने जबलपुर से कानून स्नात्तक एवं परास्नात्तक की शिक्षा प्राप्त की। पेशे से वकील श्री दलबीर सिंह की रुचि राजनीतिक एवं सामाजिक कार्य में भी थी। परिणामतः उनकी सफल राजनीतिक यात्रा की शुरूआत अध्यक्ष, जनपद पंचायत पुष्पराजगढ़ के रूप में हुई। तत्पश्चात् 1970 में मध्य प्रदेश विधानसभा के लिए निर्वाचित हुए एवं 1980 में सातवीं लोकसभा के लिए चुने गये। 1984 एवं 1991 में पुनः लोकसभा के लिए निर्वाचित हुए एवं क्रमशः शहरी विकास मन्त्रालय एवं वित्त मन्त्रालय में राज्य मन्त्री के रूप में कार्य किया। इसके अतिरिक्त, योजना आयोग के हिन्दी सलाहकार बोर्ड के सदस्य, कांग्रेस के राष्ट्रीय संयुक्त सचिव, अखिल भारतीय आदिवासी विकास परिषद के महा सचिव, मध्य प्रदेश प्रशासनिक सेवा सुधार आयोग के सदस्य आदि दायित्वों का निर्वहन किया। पिछड़े वर्गों के उत्थान में उनकी विशेष रुचि थी (Loksabha profile)|

हीरालाल अलावा

इनका जन्म ग्राम भैसलाइ, पोस्ट तलवारा, तहसील कुक्षी, जिला धार, म.प्र. में हुआ। आप गजारा राजे मेडिकल कालेज ग्वालियर से जनरल मेडिसिन में परास्नात्तक हैं। एम्स, नई दिल्ली में चिकित्सक के रूप में काम किया (पिंगले, 2018)| साधारण भील परिवार में जन्मे हीरालाल अलावा की सामाजिक-राजनीतिक गतिविधि एवं समझ, उनके दिल्ली प्रवास से शुरू हुई जब वह 'दलित-आदिवासी दुनिया में छपे लेखों एवं घटनाओं को अपने फेसबुक पेज पर पोस्ट करके सामाजिक-राजनीतिक चेतना को विस्तार दिया करते थे। उनके द्वारा स्थापित जय आदिवासी युवा शक्ति संगठन (जयस) की शुरुआत सन 2012 में एक फेसबुक ग्रुप के रूप में हुई जिसे धीरे-धीरे एक सामाजिक-राजनीतिक आन्दोलन में परिवर्तित किया गया (कुमार, 2018)। शुरुआती अडचनों के बाद जयस ने आदिवासी,

मुख्यतः भील युवाओ को बड़ी संख्या में अपनी ओर आकर्षित किया तथा मध्य प्रदेश की राजनीति में खासकर मालवा क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण कारक के रूप में स्थापित हुआ। जयस न सिर्फ राजनीति में आदिवासियों की आवाज बनना चाहता है बल्कि उनकी सामाजिक-सांस्कृतिक एवं आर्थिक पहचान भी स्थापित करना चाहता है जिसके लिए उसने निम्नलिखित लक्ष्य तय किये हैं-

(1) आदिवासियों की अलग सामाजिक-सांस्कृतिक पहचान को पुनर्स्थापित करना। जयस यह मानता है कि आदिवासी न तो हिन्दू है, और न ही ईसाई । हालाँकि यह दोनों आदिवासियों को अपने में मिलाने के लिए प्रयासरत रहते हैं (पाठक, 01.11.2018)। (2) आदिवासी युवाओं को रोजगार (3) ग्रामीण विकास (4) शिक्षा (5) स्वास्थ्य सुविधायें (6) विकास परियोजनाओं में आदिवासियों की हिस्सेदारी एवं उचित पुनर्वास । पेसा, वन अधिकार अधिनियम, पाँचवी एवं छठी अनुसूचियों का पूर्ण क्रियान्वयन।

2016 में एक संगठन के रूप में औपचारिक स्थापना के पश्चात जयस ने प्रथम राजनीतिक प्रयोग छात्र राजनीति में किया। मध्य प्रदेश छात्र संघ के चुनाव में जयस समर्थित 162 प्रत्याशी विजयी हुए (महापात्रा, 2018)। इसके पश्चात् 2018 में विधानसभा की तैयारी में लगी जयस ने कई आदिवासी युवा सम्मेलन एवं किसान सभायें कीं जिनमें उपस्थित अनुमान से ज्यादा जनसंख्या ने दोनों प्रमुख राजनीतिक दलों, भाजपा एवं कांग्रेस को चिंता में डाल दिया। चुनाव परिणाम एवं सत्ता के खेल में आदिवासी वोट बैंक निर्णायक प्रतीत होने लगा। तीन साल बाद मुख्यमन्त्री शिवराज सिंह चौहान पूर्वी एवं पश्चिमी आदिवासी बहुल क्षेत्र के दौरे पर गये। अनेकानेक योजनाओं की घोषणा की। बिरसा मुण्डा की जयंती 15 नवंबर को 'आदिवासी सम्मान दिवस' के रूप में मनाये जाने की घोषणा की (नरोन्हा, 2020) | आदिम जाति कल्याण विभाग का नाम बदलकर 'जनजाति कल्याण विभाग' कर दिया गया । हीरालाल अलावा के जवाब में शिवराज सिंह ने सामाजिक एकजुटता (social cohesion) का नारा दिया। इसे तोड़ने वालों को चेतावनी दी।

2018 के विधानसभा चुनाव में कांग्रेस ने आदिवासी मतदाताओं पर निगाह बनाये रखी। उसके कार्यकर्त्ताओं एवं नेताओं ने भी आदिवासी क्षेत्रों का लगातार दौरा किया। अपने चुनावी नारे 'वक्त है बदलाव का' को आदिवासी लोगों के बीच में स्वीकार कराने की कोशिश की। जयस ने जब 80 चुनाव क्षेत्रों में स्वतन्त्र उम्मीदवार उतारने की घोषणा की तो कांग्रेस जयस के प्रभाव क्षेत्र मालवा में आदिवासी मतों को अपने पक्ष में करने के लिए जयस प्रमुख हीरालाल अलावा को अपना टिकट देने को तैयार हो गयी । परिणाम स्वरूप आदिवासी आरक्षित 47 सीटों में से 30 पर उसे विजय मिली और उसकी सरकार म.प्र. में 15

वर्ष बाद बनी (तिवारी, 2018)। हीरालाल अलावा पहली बार मनावर से चुनाव जीतकर म.प्र. विधान सभा पहुंचे। हालांकि मंत्री परिषद में शामिल न किये जाने से नाराज होकर उन्होंने 'भीलिस्तान' प्रदेश को अपनी अन्य मांगों में जोड़ दिया (द्वारी, 2019)।

मध्य प्रदेश की राजनीति में हीरालाल अलावा का एक ताकत और आदिवासी चेहरा बन कर उभरना और अचानक कांग्रेस के टिकट पर चुनाव लड़ना आदिवासी युवा उम्मीदों को अचानक लगने वाला तगड़ा झटका है। एक स्वतन्त्र सामाजिक कार्यकर्ता और राजनीतिक नेतृत्व की उनकी छवि को बड़ा आघात है। अब उन्हें कांग्रेस के एक कार्यकर्त्ता के रूप में उसकी नीतियों, कार्यक्रमों एवं उद्देश्यों के अनुसार काम करना होगा जो मध्यप्रदेश की राजनीति में तीसरी ताकत बनने की उनकी महत्वाकांक्षा की कीमत पर होगा। वह लाखों युवा जो भाजपा-कांग्रेस के द्वन्द से उबकर उनके पास आये थे वह अब पुनः निराश होंगे। यह जंगल के शेर का 'सर्कस के शेर' में बदल जाने जैसा है।

उनके प्रतिद्वन्दी एवं गोंडवाना गणतन्त्र पार्टी के संस्थापक स्वर्गीय हीरासिंह मरकाम पहले ही उन्हें 'कांग्रेस की उत्पत्ति' (पाठक, 01 नव. 2018) कह चुके थे। चुनाव से पहले उन्होंने 'अबकी बार, आदिवासी सरकार' का नारा देकर आदिवासी आकांक्षाओं को आसमान पर पहुंचा दिया था। फिर कांग्रेस का टिकट लेकर एक जुझारू नेता से पदलोभी नेता के रूप परिवर्तित हो गये। इससे उन्हें व्यक्तिगत लाभ चाहे जो हुआ हो किन्तु भविष्य का आदिवासी राजनीतिक विस्तार जरूर सीमित हो गया।

छत्तीसगढ़

इस राज्य की स्थापना 01 नवम्बर 2000 को मध्य प्रदेश को विभक्त कर के की गयी थी। इसकी जनसंख्या लगभग तीन करोड़ एवं क्षेत्रफल 1,35,192 वर्ग किमी. है। कुल जनसंख्या की 30.6 प्रतिशत आबादी आदिवासी है जो कि छत्तीसगढ़ की राजनीति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। अपने संक्षिप्त जीवनकाल में इस राज्य ने कुछ प्रमुख आदिवासी राजनीतिज्ञ दिये हैं जिनके कार्यक्रम और नीतियों ने यहां पर आदिवासी चेतना एवं विकास लाने में अहम भूमिका निभायी है। इनमें से कुछ प्रमुख हैं-

(1) अजीत जोगी - इनका जन्म 29 अप्रैल 1946 को वर्तमान गौरैला-पेण्ड्रा-मरवाही जिले के गौरेला में एक अत्यन्त गरीब आदिवासी परिवार में हुआ था। प्रारम्भिक जीवन की कठिनाइयों से पार पाते हुए यांत्रिक अभियांत्रिकी में स्नात्तक में स्वर्ण पदक प्राप्त किया। एक वर्ष पश्चात 1968 में प्रथम प्रयास में भारतीय पुलिस सेवा में पुनः 1970 में भारतीय प्रशासनिक सेवा में चयनित हुए। अपने सेवाकाल में वह कांग्रेसी नेता स्व. अर्जुन सिंह जी के करीबी माने जाते रहे। 1986 में प्रशासनिक सेवा से त्यागपत्र देकर कांग्रेस पार्टी की सदस्यता

ली। 1986 से 1998 तक राज्य सभा सदस्य एवं 1998 में लोक सभा के लिए चुने गये। छत्तीसगढ़ राज्य बनने तक अजीत जोगी अर्जुन सिंह के साथ-साथ गांधी परिवार के विश्वस्त एवं करीबी बन चुके थे (सिंह, 29 मई 2020)।

इसीलिए छत्तीसगढ़ बनने पर इस क्षेत्र में शुक्ला बन्धुओं (विद्या चरण एवं श्यामा चरण) के प्रभुत्व को कम करने के उद्देश्य से श्री अर्जन सिंह की वह पहली पसन्द बने एवं आदिवासी बहुल राज्य में आदिवासी पृष्ठभूमि का मुख्यमन्त्री होना गांधी परिवार के समर्थन का कारण बना। इस प्रकार अजीत जोगी नवीन छत्तीसगढ़ राज्य के प्रथम मुख्यमत्री बने। अपने लगभग तीन वर्ष के मुख्यमन्त्रित्व काल में उन्होने राजनीतिक एवं प्रशासनिक कुशलता का अद्भुत परिचय दिया। एक ओर जहाँ राजनीतिक प्रतिद्धन्दियों, खासकर शुक्ला बंधुओं के प्रभुत्व को कम किया वहीं राज्य संचालन में प्रशासनिक अधिकारियों पर मन्त्रियों की तुलना में ज्यादा भरोसा किया। इस प्रकार छत्तीसगढ़ में राजनीतिक एवं प्रशासनिक केन्द्रीयकरण का एक दौर चला।

छत्तीसगढ़ में जोगी राजनीति की प्रमुख विशेषतायें निम्नलिखित रहीं- (नरोन्हा, मई 2020)

(1) राजनीतिक एवं प्रशासनिक केन्द्रीयकरण
(2) पारिवारिक राजनीतिक विरासत का निर्माण
(3) ब्राहमण - अनुसूचित जाति (सतनामी) का गठजोड़
(4) छत्तीसगढ़ी सम्मान (छत्तीसगढ़िया, सबले बढ़िया) पर जोर
(5) आदिवासी पृष्ठभूमि विवाद
(6) आदिवासी केन्द्रित योजनाएं
(7) उच्च प्रशासनिक-राजनीतिक समन्वय

25 वर्षों से निर्माणाधीन हंसदेव बांगे नहर को एक ही निविदा से पूर्ण किया जिससे कि राज्य की सिंचित भूमि दो वर्षों के भीतर ही दोगुना हो गई। उपज पैदावार दोगुने से ज्यादा (20 से 45 लाख टन) हो गई। इसके अतिरिक्त ग्रामीण सम्पर्क सड़क, तालाब (डबरी) और जमीन (जंगल) पट्टा आदि पर अत्यधिक ध्यान केन्द्रित किया। मुख्यमन्त्री आवास में जाति पंचायत शुरू किया (मिश्रा, मई 2020)।

हीरासिंह मरकाम

इनका जन्म 14 जनवरी 1949 को वर्तमान कोरबा जिला छत्तीसगढ़ के तिवरता गाँव में एक खेतिहर मजदूर परिवार में हुआ था। प्रारम्भिक शिक्षा गाँव से शुरू हुई जो रूक-रुककर 1984 तक परास्नात्तक एवं कानून स्नात्तक तक चली। सार्वजनिक जीवन की

शुरुआत 1980 में एक जुझारू शिक्षक नेता के रूप में हुई। फिर 1980 में ही शिक्षक की नौकरी से त्यागपत्र देकर पाली - तानाजार विधान सभा क्षेत्र से निर्दलीय प्रत्याशी के रूप में चुनाव लड़ा और द्वितीय स्थान प्राप्त किया। 1985 में भारतीय जनता पार्टी के टिकट पर चुनाव जीतकर मध्य प्रदेश विधानसभा पहुंचे। 1990 में लोकसभा उम्मीदवारी को लेकर पार्टी से दूर हुए एवं 13 जनवरी 1991 को गोंडवाना गणतन्त्र पार्टी का गठन किया जिसका प्रमुख उद्देश्य गोंड जनजाति के लिए महाकौशल क्षेत्र में गोंड प्रदेश की स्थापना है। दूसरा उद्देश्य गोंडवाना धर्म, दर्शन, साहित्य एवं संस्कृति को पुनर्स्थापित करना है। इसके लिए अलग-अलग स्थानों जैसे अमरकंटक (फड़ापेन ठाना) कचारगढ़ आदि पर भव्य सांस्कृतिक मेलों का आयोजन किया जाता है। अमरकंटक में ही मोतीरावण कंगाली एवं सुन्हेर सिंह ताराम की मदद से गोंडवाना विकास मण्डल की नींव डाली गयी।

गोंडवाना साहित्य एवं दर्शन के प्रचार-प्रसार के लिए सुन्हेर सिंह ताराम के नेतृत्व में गोंडवाना दर्शन पत्रिका का प्रकाशन भोपाल से शुरू किया गया जो कालान्तर में राजनांद गाँव एवं नागपुर से भी प्रकाशित हुई। तीसरा उद्देश्य हिन्दू एवं ईसाई संस्कृतियों के द्वारा गोंड संस्कृति के अतिक्रमण से बचाव करना है। इस सन्दर्भ में जहां एक ओर कंगला मांझी से राजनीतिक (गोंडो का कांग्रेसीकरण) विरोध था तो दूसरी ओर ढोकल सिंह मरकाम से धार्मिक एवं सांस्कृतिक (गोंडो का हिन्दूकरण) विरोध था। ढोकल सिंह मरकाम ने रामवंशी गोंड एवं रावणवंशी गोड़ की वंशावली निकालकर पूरे गोंड समाज को कई गुटों में बाँट दिया। गोड़ लोगों का जनेऊ संस्कार, हिन्दू रीति रिवाज, देवी-देवता आदि की पूजा-अर्चना करवाना शुरू कर दिया (बाली, वितूंतकचतमेए 2019)। इसलिए गोंडवाना गणतन्त्र पार्टी ने लोगों को भगवान और भाग्य के चक्कर से निकालकर फड़ापेन (जल, अग्नि, वायु, आकाश एवं धरती) संस्कृति से जुड़ने का आह्वान किया।

चौथे उद्देश्य के रूप में प्रत्येक गाँव में गोंडवाना गणतन्त्र गोटुल (पाठशाला) एवं अंग्रेजी माध्यम स्कूल की स्थापना के माध्यम से गोंड समाज में सामाजिक-सांस्कृतिक जागृति एवं आर्थिक उन्नति लाना है। हीरासिंह मरकाम के अनुसार गोंड़ (कोईतूर) समाज की मुख्य समस्यायें भय, भूख, भ्रष्टाचार, भगवान व भाग्य एवं भटकाव हैं जिनसे लिंगो गुरू और कोया पुनेम (सच्चा मार्ग) दर्शन के माध्यम से मुक्ति पायी जा सकती है और एक निडर, समृद्ध, खुशहाल, स्वस्थ गोंडवाना समाज खड़ा किया जा सकता है (बाली, 18 अक्टूबर 2019)

निष्कर्ष

जहाँ एक ओर यह सर्वविदित है कि मध्य भारत में भारत की सर्वाधिक आदिवासी जनसंख्या निवास करती है वहीं दूसरी ओर यह भी सर्वमान्य है कि विकास के हर आधुनिक

पैमाने पर- शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, एवं आर्थिक समृद्धि, उपजाऊ जमीन, सम्पर्क मार्ग व साधन, तकनीकी कौशल, स्वच्छता, मकान, आधुनिक कृषि, राजनीतिक संस्कृति आदि में यह क्षेत्र व समुदाय भारत में सर्वाधिक पिछड़ा भी है। 1950 में संरचनात्मक एवं प्रक्रियात्मक लोकतन्त्र की स्थापना के साथ यह उम्मीद की गयी थी कि ईमानदार स्वशासन में समयचक्र के साथ तात्विक एवं नागरिक लोकतन्त्र भी तीव्र गति पकड़ेगा जिससे कि राजनीतिक लोकतन्त्र भारत में सामाजिक एवं आर्थिक लोकतन्त्र स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायेगा। परन्तु आजादी के सात दशक से ज्यादा वक्त बीत जाने के बाद भी आदिवासी समुदाय के तमाम आँकड़े निराश करने वाले हैं।

ऐतिहासिक तथ्यों ने इस बात को अच्छे से स्थापित किया है कि राजनीतिक चेतना के उभार ने विकास के दरवाजे अनिवार्य रूप से खोले हैं और आदिवासी राजनीतिक चेतना एवं नेतृत्व भी भारत में उभरा है किन्तु इसका स्वरूप प्रायः समावेशी एवं सर्वव्यापी न होकर राजनीतिक सामन्तवाद और भाई-भतीजावाद की तरफ झुका हुआ रहा है। परिणामस्वरूप सामाजिक आर्थिक विकास का वक्र (Curve) विकृत रूप में विद्यमान है।

मध्य भारत ने, विशेषकर मध्यप्रदेश और छत्तीसगढ़, आदिवासी राजनीतिक नेतृत्व उत्पन्न किये हैं जैसे दिलीप सिंह भूरिया, कान्तिलाल भूरिया, दलपत सिह परस्ते, फग्गन सिंह कुलस्ते, दलबीर सिंह, हीरालाल अलावा, अजीत जोगी, हीरा सिंह मरकाम इत्यादि। यह सभी नेता प्रायः बहुत ही साधारण आदिवासी परिवार में जन्मे, पढ़े-लिखे और अपने लिए राजनीतिक जमीन तैयार की। विधायक, सांसद, मन्त्री, पार्टी पदाधिकारी आदि सब बने। किन्तु स्वतन्त्र राजनीतिक-आर्थिक चेतना के विकास और विस्तार में, केवल दिलीप सिंह भूरिया, हीरासिंह मरकाम, अजीत जोगी एवं हीरालाल अलावा की भूमिका उल्लेखनीय रही है।

दिलीप सिंह भूरिया एक जनप्रिय, साहसी, आदिवासी विकास एवं भागीदारी के लिए समर्पित नेता थे। मध्यप्रदेश में आदिवासी मुख्यमन्त्री की मांग को लेकर आन्दोलन चलाना एवं पार्टी नेतृत्व से टकराना उनके साहस एवं सामाजिक सरोकार के लिए समर्पण का घोतक है। भूरिया समिति द्वारा अनुमोदित पेसा अधिनियम आदिवासी परम्परा, संस्कृति एवं वैधानिक ढाँचे का अद्भुत संगम है जिसे यदि अक्षरशः लागू कर दिया जाय तो भारत में एक नये आर्थिक राजनीतिक प्रारूप की शुरुआत हो जायेगी। जुझार शिक्षक नेता के रूप में सार्वजनिक जीवन की शुरुआत करने वाले हीरासिंह मरकाम एक ऐसे आदिवासी नेता के रूप में जाने जाते हैं जिन्होंने अलग गोंड़ जनजाति प्रदेश को लेकर राजनीतिक दल की स्थापना की और आन्दोलन चलाया। कालान्तर में गोंडवाना गणतन्त्र आन्दोलन राजनीतिक से ज्यादा सामाजिक-सांस्कृतिक एवं साहित्यिक आन्दोलन में परिवर्तित हो

गया जिसका प्रमुख उद्देश्य गोंडी साहित्य, भाषा, धर्म, कोया पुनेम, रीति-रिवाज आदि की पुनर्स्थापना हो गया। छत्तीसगढ़ राज्य के प्रथम एवं आदिवासी मुख्यमन्त्री के रूप में अजीत जोगी की एक विशिष्ठ पहचान है। उनके राजनीतिक एवं प्रशासनिक कौशल को सब स्वीकार करते हैं। उनकी विकास योजनायें जैसा पट्टा, तालाब निर्माण, नहर, सड़क, सिचाई आदि आज भी में छत्तीसगढ़ में प्रसिद्ध हैं किन्तु विवादित आदिवासी पृष्ठभूमि एवं विरासत (राजनीतिक) की जंग ने उनकी उपलब्धियों को धूमिल कर दिया। राजनीतिक परिवारवाद उनकी पहचान बन गया। मध्य प्रदेश एवं भारत की आदिवासी राजनीति में हीरालाल अलावा का उदय एक धूमकेतु की तरह रहा। 2012 में उनके द्वारा स्थापित जय आदिवासी युवा शक्ति (जयस) ने मध्य प्रदेश के शिक्षित युवाओं में नया जोश भरा। उनकी उम्मीदों को नयी हवा दी। शुरुआती राजनीतिक (छात्र) सफलतायें भी अर्जित की। किन्तु 2018 विधानसभा के चुनाव में कांग्रेस के टिकट पर प्रत्याशी व विधायक बनना आदिवासी युवा अरमानों के साथ-साथ मध्य प्रदेश में उनकी तीसरी राजनीतिक ताकत बनने के सपनों को सीमित कर गयी। हलाकि जयस पश्चिमी मध्य प्रदेश में अब भी प्रभावशाली है।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि मध्य भारत, खासकर मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़, में आदिवासी नेतृत्व की बुदबुदाहट तो है किन्तु विझोभ एवं ज्वार की स्थिति अभी दूर है। ऊपर से राजनीतिक परिवारवाद, अवसरवाद, लोभ एवं निरपेक्ष सामाजिक जीवटता, समर्पण एवं संघर्षशीलता की कमी आदि से उबरना सीखना अभी बाकी है।

संदर्भ सूची

अनुराग द्वारी (Jan 14, 2019). मध्यप्रदेश : इस कांग्रेस विधायक ने सरकार के सामने खड़ी की मुसीबत, 'भीलिस्तान' की मांग उठाई, taken from https://ndtv.in/mp-chhattisgarh-news/madhya-pradesh-congress-mla-demands-separate-state-for-tribals-1977614

बद्री नारायण (2014). सीकींग द मास्टर की, कांशीराम, पेंगुइन books इंडिया, गुडगांव, पृ.28.

सीआर बिजोय. (2012), पंचायती राज (एक्सटेंशन टू सेड्युल्ड एरिया) एक्ट ऑफ़ 1996: पालिसी ब्रीफ, यूएनडीपी, पृ.11-15.

Dileep Singh Bhuriya biography taken from http://loksabhaph.nic.in/writereaddata/biodata_1_12/2692.htm

Dileep Singh Bhuriya (16 July 2004), vol.1 Report of the Scheduled Areas and Scheduled Tribes Commission, Govt. of India, pp.1-7

IANS (July 05, 2016), Faggan Singh Kulaste: Tribal face of MP and BJP's man for all seasons (Profile) taken from https://www.business-standard.com/article/news-ians/faggan-singh-kulaste-tribal-face-of-mp-

and-bjp-s-man-for-all-seasons-profile-116070500455_1.html

Jayshree Pingle (Oct 11, 2018), AIIMS का एक डॉक्टर, जिसकी वजह से बदल गया MP की 47 आदिवासी सीटों का गणित, taken from https://hindi.news18.com/news/madhya-pradesh/bhopal-interview-with-dr-hiralal-alawa-mpsg-1544905.html

Neeraj Mishra (May 29, 2020), Ajit Jogi, the Man From Achanakmar Forest Who Became Chhattisgarh's First Elected Leader, taken from https://thewire.in/politics/ajit-jogi-chhattisgarh-first-cm-passes-away

Prirhviraj Singh (May 29, 2020), Ajit Jogi, ex-IAS officer who became Chhattisgarh's first CM, dies at 74, taken from https://theprint.in/politics/ajit-jogi-ex-ias-officer-who-became-chhattisgarhs-first-cm-dies-at-74/419492/

PTI (Jan. 21, 2013), Bhuria stresses proper utilisation of Govt funds for tribals, taken from https://www.business-standard.com/article/economy-policy/bhuria-stresses-proper-utilisation-of-govt-funds-for-tribals-109111400114_1.html

PTI (Sept. 20, 2009), Drought-hit tribal areas to get funds from Centre: Bhuria, taken from https://www.hindustantimes.com/india/drought-hit-tribal-areas-to-get-funds-from-centre-bhuria/story-aQziFoKXa99MAeFp8AxVKJ.html

Rahul Noronha (Dec. 21, 2020), Wooing the Tribals, taken from https://www.indiatoday.in/magazine/nation/story/20201221-wooing-thetribals-1748597-2020-12-11

Rahul Noronha (May 30, 2020), Ajit Jogi: One life, many accomplishments | Obituary, taken from https://www.indiatoday.in/india/story/ajit-jogi-obituary-biography-1683536-2020-05-30

Rajan Kumar (Nov. 21, 2018), Eyewitness account: The story of JAYS, taken from https://www.forwardpress.in/2018/11/eyewitness-the-story-of-jays/

Ruhi Tewari (Nov.18, 2018), The tribals of MP have the power to swing elections. Not much else, taken from https://theprint.in/politics/the-tribals-of-mp-have-the-power-to-swing-elections-not-much-else/151130/

Smita Gupta (Sept. 05, 2010), Dormant Tribal Affairs Ministry turns pro-

active, taken from https://www.thehindu.com/news/national/Dormant-Tribal-Affairs-Ministry-turns-pro-active/article15903037.ece

Surya Bali (Oct.18,2019), भगवान और भाग्य गोंड समुदाय के लोगों के विकास में बाधक : हीरा सिंह मरकाम, taken from http://www.forwardpress.in/2019/10/interview-hira-singh-markam-hindi

Sushil Kumar Mahapatra (Dec.12, 2018), AIIMS के इस आदिवासी डॉक्टर ने नौकरी छोड़ी, चुनाव में पूर्व मंत्री को पराजित किया, taken from https://ndtv.in/assembly-polls-2018/madhya-pradesh-assembly-elections-this-tribal-doctor-of-aiims-left-his-job-defeated-former-minister-1961786

Vikas Pathak (November 01,2018) The different shades of tribal politics in Madhya Pradesh taken from https://www.thehindu.com/elections/madhya-pradesh-assembly-elections-2018/the-different-shades-of-tribal-politics/article25393841.ece

https://tribal.nic.in/downloads/statistics/Statistics8518.pdf

http://loksabhaph.nic.in/writereaddata/biodata_1_12/2713.htm

http://loksabhaph.nic.in/Members/memberbioprofile.aspx?mpsno=291&lastls=16

शिक्षा एवं आदिवासी महिला सशक्तिकरण एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. कुशल जैन कोठारी*
अनिता चौहान**

सारांश

शिक्षा मानव के बौद्धिक विकास का महत्वपूर्ण माध्यम है। शिक्षा से व्यक्ति की जागरुकता, आत्मनिर्भरता, कुशलता, सामाजिक सहभागिता एवं निर्णय क्षमता में होती है। मानव समाज में शिक्षा पर बिना भेदभाव के सभी का समान अधिकार है। महिला शिक्षा समावेशी विकास के लिये महत्वपूर्ण है। महिलाओं को अशिक्षा के कारण सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, कानूनी आदि क्षेत्रों में अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। एक शिक्षित महिला पारम्परिक रुढ़िवादी मान्यताओं का विरोध करने में सक्षम होती है। वह अपने अधिकारों के प्रति अधिक जागरुक होती है। आदिवासी महिलाओं के संदर्भ में कहा जाय तो वह प्रायः समय के साथ होने वाले आधुनिक परिवर्तनों के प्रति उदासीन होती हैं एवं अपनी पारंपरिक रूढ़िवादी सोच से बाहर नहीं आ पाती हैं। वह शोषित एवं वंचित छवि को अपना भाग्य मानकर स्वीकार कर लेती हैं एवं इसका विरोध नहीं करती हैं। यह परंपरा पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलती रही है। वर्तमान समय में यह सर्वमान्य तथ्य है कि शिक्षा महिलाओं की पारंपरिक छवि में परिवर्तन लाने का महत्वपूर्ण साधन है। अतः हमें महिला सशक्तिकरण के प्रयासों में शिक्षा को प्राथमिकता देने की आवश्यकता है। विशेषकर आदिवासी समाज में महिलाओं को विकास प्रक्रिया में शामिल करने के लिये सर्वप्रथम उन्हें शिक्षित किया जाना आवश्यक है।

प्रस्तुत शोध में म.प्र. के खरगोन जिले की शिक्षित आदिवासी महिलाओं की आर्थिक आत्मनिर्भरता, राजनैतिक जागरुकता, निर्णय क्षमता एवं सामाजिक सशक्तता का अध्ययन किया गया है। शिक्षा के कारण आदिवासी महिलाएँ अपने अधिकारों, शासन द्वारा प्रदत्त सुविधाओं, स्वास्थ्य आदि के प्रति जागरुक हो रही हैं। वह उच्च शिक्षा प्राप्त कर आत्मनिर्भर होने लगी हैं एवं पारिवारिक आजीविका में सहयोग देने के साथ ही आधुनिकता की ओर बढ़ रही हैं। इस प्रकार शिक्षा रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने के साथ ही समाज में महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन लाने का सशक्त साधन है।

बीज शब्द - शिक्षा, आदिवासी महिलायें, महिला सशक्तिकरण,

* लेखिका अर्थशास्त्र विभाग, माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इन्दौर में प्राध्यापक हैं।
** लेखिका अर्थशास्त्र विभाग, माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इन्दौर में शोधरत हैं।

प्रस्तावना:-

किसी भी देश के विकास एवं आधुनिक परिवर्तन की प्रक्रिया में शिक्षा की अहम भूमिका होती है। बेहतर शिक्षा मानव संसाधन को केवल सशक्त ही नहीं बनाती अपितु यह व्यक्ति में उत्तम नैतिक मूल्यों का निर्माण कर उसे कर्तव्यों एवं दायित्वों का बोध कराती है, बेहतर आजीविका उपलब्ध कराती है, साथ ही शिक्षा सामाजिक पुनर्निर्माण में भी आवश्यक है। इस प्रकार शिक्षा मानव के व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में बेहतर अवसरों की उपलब्धता बढ़ाती है। ऐसे में प्रत्येक व्यक्ति को जाति, लिंग एवं वर्ग में भेद किये बिना शिक्षित करना आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी है।

हमारी आधी आबादी महिलाओं की है अतः महिलाओं की शिक्षा भी उतनी ही महत्वपूर्ण है जितनी पुरुषों की शिक्षा। "नारी परिवार की नींव है, परिवार समुदाय की तथा राष्ट्र की" (धर एवं सक्सेना, 2010) परंतु हमारा समाज नारी को सदैव ही पारिवारिक कर्तव्यों एवं सामाजिक रूढ़ियों का हवाला देकर शिक्षा से वंचित करता रहा है। किसी भी देश में महिलाओं की स्थिति वहां की सामाजिक व्यवस्था को बताती है। हमारे देश में वर्तमान में शासन की नीतियों एवं योजनाओं के परिणामस्वरूप महिला शिक्षा की स्थिति में परिवर्तन देखे जा सकते हैं। समाज में एक वर्ग ऐसा भी है जो आज भी शिक्षा के क्षेत्र में पिछड़ा हुआ है। " भारत में कई कारणों से जनजातीय समाज शिक्षा से वंचित रहा है और यही कारण है कि अन्य समुदायों की तुलना में उनकी साक्षरता दर कम और स्कूल छोड़ने की दर बहुत ज्यादा है "(सारस्वत, 2009)। आदिवासी समाज में महिला शिक्षा के क्षेत्र में जागरूकता तो देखी जा सकती है परंतु अन्य समुदायों की तुलना में उनकी साक्षरता दर काफी कम है। "2001 की जनगणना के अनुसार अनुसूचित जनजाति की साक्षरता दर 47.1 प्रतिशत थी जो 2011 में बढ़कर 59 प्रतिशत हो गई है। वहीं अनुसूचित जनजाति के पुरुषों की साक्षरता दर क्रमशः 59.2 प्रतिशत से बढ़कर 68.5 प्रतिशत हो गई है। वहीं महिला साक्षरता दर क्रमशः 34.8 प्रतिशत से बढ़कर 49.4 प्रतिशत हो गई है (Ministry of Tribal Affairs, Annual Report, 2017-18)। उपरोक्त तथ्यों से ज्ञात होता है कि आदिवासी समुदाय में शिक्षा के प्रति जागरुकता तो आने लगी है परंतु यह प्रक्रिया अभी भी काफी धीमी एवं असंतोषजनक है। पिछले दशकों में आदिवासी समुदाय की शिक्षा हेतु अनेक प्रयास किये गये हैं। विशेष कर महिला शिक्षा में सुगमता हेतु ग्रामीण स्तर पर प्रारंभिक शिक्षा की व्यवस्था की गई, विद्यालयीन शिक्षा हेतु आवासीय विद्यालय, महाविद्यालय तथा अन्य शिक्षण संस्थानों एवं शोध संस्थानों का निर्माण किया गया। भारतीय संविधान सभी को समान शिक्षा का अधिकार प्रदान करता है। "संविधान (86 वाँ संशोधन) अधिनियम 2002 ने भारत के संविधान में अतः स्थापित अनुच्छेद 21-A ऐसे ढंग से जैसा कि राज्य कानून द्वारा

निर्धारित करता है, भौतिक अधिकार के रुप में छः से चौदह वर्ष के आयु समूह के सभी बच्चों को मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा का प्रावधान करता है" (सक्सेना, 2012)|

आदिवासी महिलाओं की शिक्षा में सामान्य समुदाय की महिलाओं की शिक्षा की तुलना में अनेक बाधाऐं एवं समस्याऐं आती हैं। वह गरीबी, निम्न जीवनशैली, साधनों की कमी, पारिवारिक एवं सामाजिक बंधनों आदि के कारण शिक्षा से वंचित रहती हैं। अतः इन्ही समस्याओं के लिये संविधान द्वारा विशेष अधिकारों की अनुशंसा की गई हैं। अनुच्छेद 16(4) के अधीन राज्य की सेवाओं में कमजोर वर्गों,अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति एवं अन्य पिछड़ा वर्ग हेतु पर्याप्त प्रतिनिधित्व देने के लिए आरक्षण की व्यवस्था की गई है। राज्य एवं केन्द्रीय सरकारों द्वारा अनेक कल्याणकारी योजनाओं एवं कार्यक्रमों का संचालन किया जाता रहा ताकि इस समुदाय की महिलाओं के शिक्षा स्तर में वृद्धि की जा सके।

भारत में शिक्षा प्रणाली को व्यवस्थित करने के उद्देश्य से विभिन्न आयोगों का गठन किया गया जिनमें विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग, माध्यमिक शिक्षा आयोग, कोठारी आयोग आदि हैं। स्वतंत्र भारत की विकास परियोजना के आरंभ होने के 18 वर्ष बाद प्रथम राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1968 में बनाई गई। इसके ठीक 18 वर्ष बाद दूसरी शिक्षा नीति 1986 में बनाई गई। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में जनजातियों में शिक्षा में गतिविधियों को बढ़ाने के लिए कई प्रावधान किए गए जिसके अंतर्गत जनजातीय बच्चों की साक्षरता दर में प्रतिवर्ष 3 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि करना, 11वीं योजना के अंत तक स्कूल में 100 प्रतिशत नामांकन एवं लड़कियों की ड्रॉप आउट रेट को कम करना, जनजातीय ग्रामों के 1 किलोमीटर के परिक्षेत्र में प्राथमिक विद्यालय की स्थापना, कक्षा तीन तक जनजातीय भाषाओं में शिक्षा प्रदान करना जनजातीय क्षेत्र के प्रत्येक विकासखंड में छात्रावासों की सुविधा एवं प्राथमिक स्तर के स्कूल में आवश्यक खेलकूद संरचनाओं को प्रदान करना था" (राजपूत, 2015)। इस समय तक यह स्पष्ट माना जाने लगा था कि शिक्षा महिला सशक्तिकरण का प्रभावी साधन साबित हो सकती है। इस शिक्षा नीति ने माना कि महिलाओं की सहभागिता बढ़ाने, आर्थिक स्वतंत्रता, तकनीकी एवं व्यवसायिक ज्ञान में वृद्धि एवं सभी क्षेत्रों में महिलाओं को बराबरी का दर्जा आवश्यक है।

राष्ट्रीय महिला सशक्तिकरण नीति (2001)

भारतीय संविधान महिलाओं को समानता का अधिकार प्रदान करता है। महिलाओं की उन्नति एवं विकास के लिये विभिन्न कानूनों, नीतियों, कार्यक्रमों एवं योजनाओं का निर्माण किया जाता रहा है। महिलाओं की स्थिति में सुधार करने के लिये अब कल्याण के बजाय विकास को प्राथमिकता दी जाती है। इसी संदर्भ में वर्तमान में महिला सशक्तिकरण पर विशेष बल दिया जा रहा है। महिलाओं के कानूनी हितों की रक्षा एवं उनके

अधिकारों के लिये 1990 में ससंद के एक अधिनियम द्वारा राष्ट्रीय महिला आयोग की स्थापना की गई।

वर्ष 2001 को महिला सशक्तिकरण वर्ष घोषित किया गया। इसी समय देश में राष्ट्रीय महिला सशक्तिकरण नीति की घोषणा की गई। इस नीति के द्वारा महिला शिक्षा से सबंधित कुछ मानक तय किये गए हैं। इस नीति के शिक्षा से संबंधित तत्व निम्नलिखित हैं-

- राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक सांस्कृतिक एवं सिविल सेवाओं में, महिलाओं को पुरूषों के समान मानवाधिकार एवं स्वतंत्रता का अधिकार है।
- महिलाओं को गुणवतापूर्ण शिक्षा, व्यावसायिक मार्गदर्शन, रोजगार, समान पारिश्रमिक प्रदान किया जाना।
- विकास प्रक्रिया में महिलाओं की सहभागिता बढ़ाने के लिये अनुकूल नीतियां बनाई जाएंगी।
- महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाने के लिए उन्हे औद्योगिक खेमे में सामाजिक सुरक्षा,श्रम विधान एवं अन्य सुविधाये दी जाएंगी।
- अनुसूचित जाति/जनजाति एवं अन्य पिछड़ा वर्ग की महिलाओं के लिये शिक्षा में समानता, व्यावसायिक, तकनीकी कौशलों में वृद्धि के लिये आवश्यक नीतियों का निर्माण किया जायेगा (https://wcd.nic.in/hi/policies)।

राष्ट्रीय महिला सशक्तिकरण नीति 2001, केंद्र सरकार द्वारा 10 वर्ष के लिये लागू की गई, जिसके तहत अनेक उल्लेखनीय कार्य किये गये।

स्वतंत्रता के पश्चात से नियोजित विकास प्रक्रिया प्रारंभ किए जाने के फलस्वरुप सामाजिक कल्याण के साथ ही शिक्षा को भी महिलाओं के विकास का प्रमुख कारण माना गया। शासन द्वारा लगातार बच्चों के नामांकन में वृद्धि एवं स्कूल छोड़ने की दर में कमी करने से संबंधित शिक्षा योजनाओं में नवीन परिवर्तन किए जाते रहे हैं परिणामस्वरूप बालिका शिक्षा में प्रशंसनीय वृद्धि दर देखी जा सकती है। वर्तमान में बालक एवं बालिका शिक्षा को समान महत्व दिया जा रहा है। परिणामस्वरूप पुरुष-महिला शिक्षा में अंतर कम हो रहा है।

आदिवासी महिलाओं के शैक्षणिक विकास हेतु प्रमुख सरकारी प्रयास :- जनजातीय क्षेत्रों एवं महिलाओं की शिक्षा स्थिति में सुधार करने के लिए शासन सदैव ही प्रयासरत रहा है। विभिन्न प्रावधानों का निर्माण, आयोगों का गठन, अनेक शिक्षा नीतियों एवं कार्यक्रमों जैसे सर्व शिक्षा अभियान, मिड डे मील आदि के कारण वर्तमान में आदिवासी जनसमुदाय शिक्षा के प्रति जागरूक हुआ है। सरकार द्वारा संचालित विभिन्न कार्यक्रमों एवं योजनाओं में से कुछ महत्वपूर्ण का विवरण निम्नलिखित हैं-

अनुसूचित जनजाति के बालक-बालिकओं हेतु छात्रावास निर्माण योजना- जनजातीय बालिकाओं की शिक्षा प्रसार के लिए तीसरी पंचवर्षीय योजना के तहत छात्रावास योजना प्रारंभ की गई। इस योजना का प्रमुख उद्देश्य जनजातीय एवं विशेष रूप से कमजोर जनजातीय समूह (PVTGs) के छात्रों को आवासीय सुविधाएं उपलब्ध कराना है। यह छात्रावास सुविधा विद्यालय, महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय तक की शिक्षा हेतु उपलब्ध है।

आश्रम स्कूलों के निर्माण की योजना- यह केंद्र प्रायोजित योजना है जिसका उद्देश्य अनुसूचित जनजाति के छात्रों को आवासीय सुविधाओं सहित शिक्षा हेतु अनुकूल वातावरण प्रदान करना है ताकि उनकी शिक्षा का विस्तार हो सके। यह योजना 1990-91 से संचालित की जा रही है तथा वित्त वर्ष 2008-09 में संशोधित की गई है।

पोस्ट मैट्रिक छात्रवृत्ति- यह केंद्र प्रायोजित योजना है जिसके द्वारा मैट्रिक से ऊपर पाठ्यक्रम में पढ़ने वाले अनुसूचित जनजाति के छात्रों को वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है।

बुक बैंक योजना- कई अनुसूचित जनजाति के छात्र व्यावसायिक पाठ्यक्रमों का चयन इसलिए नहीं करते क्योंकि उनके पाठ्यक्रमों से संबंधित पुस्तकें महंगी होती हैं जिन्हें वह खरीदने में असमर्थ होते हैं। ऐसे प्रतिभावान छात्रों की व्यावसायिक पाठ्यक्रमों एवं उच्च शिक्षा में शाला त्यागने की दर को कम करने के लिए सरकार उन्हें निःशुल्क पुस्तके उपलब्ध कराती है। यह छात्रवृति उन सभी अनुसूचित जनजाति के छात्रों के लिए खुली है जो विभिन्न व्यावसायिक पाठ्यक्रमों में अध्ययनरत हैं एवं मेट्रिक पश्चात छात्रवृति प्राप्त कर रहे हैं।

मैरिट उन्नयन- यह 2008-09 के वित्तीय वर्ष में संशोधित योजना है। इसके माध्यम से आवासीय विद्यालयों में निवासरत अनुसूचित जनजाति के छात्रों को जो कक्षा 9 वीं से 12 वी के मध्य अध्ययनरत हैं, उन्हे विभिन्न पाठ्यक्रमों में कोचिंग दी जाती है ताकि वह उच्च शिक्षा, व्यावसायिक एवं तकनीकी पाठ्यक्रमों में अन्य छात्रों के साथ समान प्रतिस्पर्धा कर पाएं। यह प्रयास होता है कि इसमें कम से कम 30 प्रतिशत लड़कियां हों।

राजीव गांधी राष्ट्रीय फेलोशिप योजना - इस योजना का आरंभ अनुसूचित जनजाति के छात्रों को उच्च शिक्षा एवं अनुसंधान जैसे अनुसंधान एम. फिल. एवं पीएच.डी. हेतु वित्तीय सहायता प्रदान करने के लिए 2005-06 में आरंभ किया गया था|

उच्च श्रेणी की शिक्षा योजना - इस योजना का आरंभ 2007-08 में किया गया था। इस योजना का उद्देश्य अनुसूचित जनजाति के प्रतिभावान छात्रों को विभिन्न संस्थानों की चुनिंदा सूची में से किसी ऐसे संस्थान में जहां छात्रवृत्ति योजना संचालित होगी, में डिग्री एवं पोस्ट डिग्री स्तर पर अध्ययन हेतु प्रोत्साहन देना है।

विदेश में उच्चतर अध्ययन के लिए राष्ट्रीय समुद्रपारीय छात्रवृत्ति योजना - इस योजना की शुरुआत 1955 में गियर योजना के अंतर्गत हुई तथा वर्ष 2007-08 में इसे संशोधित किया गया है। इस योजना के माध्यम से अनुसूचित जनजाति के प्रतिभाशाली छात्रों को विदेशों में स्नातकोत्तर, पीएच. डी. तथा पोस्ट डॉक्टरेट शोध हेतु वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है।

निशुल्क कोचिंग - यह योजना छठी पंचवर्षीय योजना के दौरान लागू की गई थी। अनुसूचित जनजाति के छात्रों को विभिन्न प्रतियोगी परीक्षाओं हेतु आवश्यक कौशल प्रदान करने तथा उनकी क्षमता बढ़ाने के लिए निशुल्क कोचिंग प्रदान की जाती है जो राज्य सरकारों, विश्वविद्यालय, गैर सरकारी संगठन, निजी कोचिंग आदि के द्वारा प्रदान की जाती हैं।

मिड डे मील- मध्यान्ह भोजन योजना के अंतर्गत पूरे देश के प्राथमिक एवं लघु माध्यमिक स्कूलों के बच्चों को निशुल्क भोजन प्रदान किया जाता है 12वीं पंचवर्षीय योजना के दौरान इस योजना में कुछ सुधार हुए जिनमें तय हुआ कि जनजाति, अनुसूचित जाति और अल्पसंख्यक बहुल जिलों के गैर-सहायता प्राप्त निजी विद्यालयों में भी इस योजना का विस्तार हो।

मैट्रिक पूर्व छात्रवृत्ति योजना- इस योजना का प्रमुख उद्देश्य अनुसूचित जनजाति के 9 वीं एवं 10 वीं के छात्रों की ड्रॉप आउट रेट को कम करना एवं उनके माता-पिता को सहयोग करना है जो कमजोर आर्थिक स्थिति के कारण अपने बच्चों को स्कूल नहीं भेज पाते।

उपरोक्त योजनाओं एवं कार्यक्रमों के अलावा शासन द्वारा अन्य अनेक महत्वपूर्ण कार्यक्रम एवं योजनायें संचालित की जा रही है जिसके परिणामस्वरुप आदिवासी महिलाओं का शैक्षणिक व सामाजिक उत्थान हो रहा है। इसके वास्तविक परिणाम भी धरातल पर परिलक्षित होने लगे हैं। आदिवासी समुदाय में पुरुषों के साथ ही महिलाओं की शिक्षा स्थिति में भी अंतर आने लगे हैं। यह अंतर विभिन्न दशकों में सकारात्मक स्थिति को स्पष्ट करते हैं।

विभिन्न दशकों में कुल साक्षरता एवं आदिवासी साक्षरता दर को निम्न तालिका में दर्शाया गया है-

तालिका क्रमांक- 1

कुल एवं अनुसूचित जनजाति की साक्षरता दर

वर्ष	कुल	पुरुष	महिला	महिला-पुरुष साक्षरता मे अंतर	कुल	पुरुष	महिला	महिला-पुरुष साक्षरता मे अंतर	कुल महिला एवं अनुसूचित जनजाति की महिला साक्षरता दर मे अंतर
1961	28.30	40.40	15.35	25.05	8.53	13.83	3.16	10.67	12.19
1971	34.45	45.96	21.97	23.99	11.30	17.63	4.85	12.78	17.12
1981	43.57	56.38	29.76	26.62	16.35	24.52	8.04	16.48	21.72
1991	52.21	64.13	39.29	24.84	29.60	40.65	18.19	22.46	21.1
2001	64.84	75.26	53.67	21.59	47.10	59.17	34.76	24.41	18.91
2011	73.00	80.90	64.60	16.3	59.00	68.50	49.40	19.1	15.2

Source: Office of the Registrar General, India

जनगणना से प्राप्त आंकड़ों से स्पष्ट होता है कि कुल साक्षरता दर की अपेक्षा आदिवासी साक्षरता दर कम है। 1961 में कुल साक्षरता दर 28.3 प्रतिशत थी, जबकि अनुसूचित जनजाति की साक्षरता दर 8.53 प्रतिशत थी। इसी प्रकार 2001 में कुल साक्षरता दर 64.84 प्रतिशत एवं 2011 में बढ़कर 73 प्रतिशत हो गई है। वही अनुसूचित जनजाति की दर 2001 में 47.10 प्रतिशत से बढ़कर 2011 में 59 प्रतिशत हो गई है, इसी प्रकार 1991 के दशक के पश्चात अनुसूचित जनजाति की साक्षरता दर में वृद्धि पूर्व दशकों की वृद्धि की तुलना में अधिक तीव्र देखी जा सकती है। वहीं अनुसूचित जनजाति के पुरुषों के साक्षरता दर 2001 की जनगणनानुसार 59.17 प्रतिशत से बढ़कर 2011 में 68.50 प्रतिशत हो गई है। वहीं अनुसूचित जनजाति की महिला साक्षरता दर क्रमशः 34.76 प्रतिशत से बढ़कर 49.40 प्रतिशत हो गई है। कुल महिला-पुरुष साक्षरता में अंतर देखने पर ज्ञात होता है कि 1991 के दशक के पश्चात अंतर में कुछ कमी आने लगी है। इसी प्रकार आदिवासी समुदाय के महिला-पुरुष साक्षरता दर में अंतर देखने पर पता चलता है कि 1991 में 22.46 प्रतिशत, 2001 में 24.41 प्रतिशत एवं 2011 में यह अंतर 19.1 प्रतिशत हो गया है,अतः कहा जा सकता है कि धीमी गति से ही सही परंतु आदिवासी समुदाय में महिला-पुरुष साक्षरता में अंतर कम हो रहा है। इसी प्रकार 2001 में कुल साक्षरता दर एवं अनुसूचित जनजाति की साक्षरता दर में अंतर 17.74 प्रतिशत था, जो 2011 में कम होकर 14 प्रतिशत हो गया है। वहीं कुल महिला साक्षरता दर में एवं अनुसूचित जनजाति की महिला साक्षरता दर में अंतर

को देखने पर ज्ञात होता है कि 1991 में यह 21.1 प्रतिशत, 2001 में 18.91 प्रतिशत एवं 2011 में 15.2 प्रतिशत हो गई है, इससे स्पष्ट होता है कि कुल महिला साक्षरता दर एवं अनुसूचित जनजाति की महिला साक्षरता दर में पिछले दशकों में अंतर में कमी आने लगी है । अब आदिवासी महिलाएं भी शिक्षा के प्रति जागरूक होने लगी हैं।

अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्व:- शिक्षित महिला अपने अधिकारों के प्रति अधिक जागरूक होती है। वह आत्मनिर्भर होकर परिवार की आय में सहयोग करने में सक्षम होती हैं । शिक्षा से महिला की सामाजिक प्रतिष्ठा में भी वृद्धि होती है। शिक्षित महिला की निर्णय क्षमता अशिक्षित महिलाओं की तुलना में अधिक बेहतर होती है । आदिवासी महिलाओं को विकास की मुख्यधारा में शामिल करने के लिये शासन अनेक महत्वकांक्षी शिक्षा से संबंधित योजनाओं एवं कार्यक्रमों का संचालन कर रहा है । अतः प्रस्तुत शोध अध्ययन के द्वारा शिक्षित आदिवासी महिलाओं की आर्थिक आत्मनिर्भरता, निर्णय क्षमता, राजनैतिक जागरूकता एवं सामाजिक सशक्तता के बारे में जानने का प्रयास किया गया । प्रस्तुत शोध अध्ययन के माध्यम से आदिवासी महिला सशक्तिकरण के लिये शिक्षा के महत्व को जानने का प्रयास किया गया है । प्रस्तुत शोध के द्वारा यह ज्ञात हो सकेगा कि आदिवासी महिलाओं पर शासन द्वारा प्रदत्त शैक्षणिक कार्यक्रमों एवं सुविधाओं का प्रभाव सकारात्मक रुप से हो रहा है अथवा नहीं। आदिवासी समुदाय के द्वारा महिला शिक्षा के प्रति जागरुकता की स्थिति को ज्ञात करने के लिये यह शोध महत्वपूर्ण साबित हो सकता है।

शोध का उद्देश्य:- शिक्षा एवं आदिवासी महिला सशक्तीकरण में अंतर्संबंध का अध्ययन करना

शोध की परिकल्पना:- शिक्षा एवं आदिवासी महिला सशक्तीकरण में कोई अंतर्संबंध नहीं है।

शोध विधि:- शोध अध्ययन हेतु प्राथमिक समंकों का संकलन म.प्र. के खरगोन जिले की पाँच तहसील महेश्वर, खरगोन, कसरावद, बड़वाह एवं भगवानपुरा के पाँच-पाँच गांवों का चयन दैव निदर्शन विधि से किया गया है। प्रत्येक गांव में से 15-15 ऐसी महिलाओं का चयन किया गया है जो कम से कम प्राथमिक स्तर तक शिक्षा प्राप्त हैं। इस प्रकार कुल 300 शिक्षित आदिवासी महिलाओं का चयन किया गया है । द्वितीयक समंकों का संकलन विभिन्न पत्रिकाओं एवं संबंधित प्रशासनिक कार्यालयों तथा विभिन्न संस्थानों की वेबसाईट्स आदि से किया गया है।

शिक्षा एवं आदिवासी महिला सशक्तिकरण में अंतर्संबंध का विश्लेषण:-

साक्षरता एवं शिक्षा हेतु चलाए जा रहे कार्यक्रमों एवं अभियानों के कारण महिलाओं में जागरूकता एवं गत्यात्मक प्रेरणा उत्पन्न हो रही है। सर्व शिक्षा अभियान विभिन्न महिला सशक्तिकरण कार्यक्रमों एवं अन्य बालिका शिक्षा से संबंधित नीतियों एवं योजनाओं के फलस्वरुप महिलाओं में आत्मविश्वास का सूत्रपात होने लगा है। शिक्षित महिला दूसरों पर निर्भर होने के बजाय स्वयं आत्मनिर्भर होकर विकास में सहभागी होती है। वह अपने पारिवारिक एवं सामाजिक दायित्व को बेहतर तरीके से पूर्ण करती है। वर्तमान में महिलाओं ने साबित कर दिया है कि वह गृहस्थी की बागडोर ही नहीं बल्कि राष्ट्र की बागडोर भी संभाल सकती हैं।

म.प्र. का खरगोन जिला आदिवासी बहुल जिला है जहां की आदिवासी समुदाय की शिक्षा की स्थिति संतोषजनक नहीं कही जा सकती है। 2011 की जनगणनानुसार जिले की कुल आदिवासी साक्षरता दर 42.5 प्रतिशत थी जो 2011 की जनगणनानुसार बढकर 45.0 प्रतिशत हो गयी है जो कि अभी भी निम्न स्तर पर है (जनजातीय कार्य मंत्रालय : वार्षिक रिपोर्ट 2015-16)।

शोध के दौरान खरगोन जिले की शिक्षित आदिवासी महिला सशक्तिकरण की स्थिति को ज्ञात किया गया है। जिसके कुछ प्रमुख घटक जैसे आर्थिक आत्मनिर्भरता, राजनैतिक जागरूकता, निर्णय क्षमता एवं सामाजिक सहभागिता से संबंधित प्राप्त आंकड़ों को निम्न तालिकाओं में दर्शाया गया है –

तालिका क्रमांक (अ)

शिक्षा स्तर एवं आर्थिक आत्मनिर्भरता

क्रं.	शिक्षा स्तर	आर्थिक आत्मनिर्भरता की स्थिति	कुल	
		हाँ	नहीं	
1.	प्राथमिक स्तर	37 (12.3%)	21 (7.1%)	58 (19.3%)
2.	माध्यमिक स्तर	40 (13.3%)	16 (5.3%)	56(18.7%)
3.	हाईस्कूल एवं हायर सेकेंडरी	94 (31.3%)	08 (2.7%)	102 (34.0%)
4.	स्नातक	51 (17.0%)	04 (1.3%)	55 (18.3%)
5.	स्नातकोत्तर एवं उससे अधिक शिक्षा प्राप्त	25 (8.3%)	04 (1.3%)	29 (9.7%)
	कुल	247 (82.3%)	53 (17.7%)	300 (100%)

स्रोतः सर्वेक्षण द्वारा प्राप्त समंक

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि 82.3 प्रतिशत शिक्षित आदिवासी महिलाएं कार्यशील हैं जो स्वयं आय प्राप्त कर आत्मनिर्भर हो रही हैं जबकि 17.7 प्रतिशत महिलाएं आय प्राप्त नहीं करती हैं। विभिन्न शिक्षा स्तर को देखें तो ज्ञात होता है कि जैसे शिक्षा के स्तर में वृद्धि हुई है वैसे ही महिलाओं की आत्मनिर्भरता की स्थिति में भी वृद्धि हुई है। कम शिक्षित महिलाएं घरेलू कार्य कर रही हैं जबकि उच्च शिक्षित महिलाएं आर्थिक रुप से सक्षम देखी गईं। विभिन्न व्यवसायों एवं विभिन्न क्षेत्रों में शासकीय एवं अशासकीय सेवाओं में निम्न एवं उच्च पदों पर पदस्थ होकर वह सेवाऐं दे रही हैं तथा परिवार की आय में सहयोग कर रही हैं। शोध से ज्ञात हुआ है कि उच्च शिक्षित महिलाएं कम शिक्षित महिलाओं की तुलना में आर्थिक रुप से अधिक समक्ष एवं आत्मनिर्भर पाई गईं।

तालिका क्रमांक (ब)

शिक्षा स्तर एवं सामाजिक रूप से सशक्त

क्रं.	शिक्षा का स्तर	सामाजिक रूप से सशक्त	कुल	
		हाँ	नहीं	
1.	प्राथमिक स्तर	30 (10.0%)	28 (9.3%)	58 (19.3%)
2.	माध्यमिक स्तर	32 (10.7%)	24 (8.0%)	15 (18.7%)
3.	हाईस्कूल एवं हायर सेकेंडरी	85 (28.3%)	17 (5.7%)	102 (34.0%)
4.	स्नातक	52 (17.3%)	03 (1.0%)	55 (18.3%)
5.	स्नातकोत्तर एवं अधिक शिक्षा प्राप्त	27 (9.0%)	02 (0.7%)	29 (9.7%)
	कुल	226 (75.3%)	74 (24.7%)	300 (100%)

स्रोतः सर्वेक्षण द्वारा प्राप्त समंक

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि 75.3 प्रतिशत महिलाएं सामाजिक रूप से सशक्त हैं, जबकि 24.7 प्रतिशत महिलाएं कहती हैं कि सामाजिक रूप से वह सशक्त नहीं हैं। प्राथमिक स्तर तक शिक्षा प्राप्त कुल 19.3 प्रतिशत महिलाओं में से 10.0 प्रतिशत महिलाएं सामाजिक रूप से सशक्त हैं,जबकि 9.3 प्रतिशत महिलाएं नहीं मानती हैं कि वह सशक्त हैं। हाईस्कूल एवं हायर सेकेंडरी तक शिक्षा प्राप्त 34.0 प्रतिशत महिलाओं में से 28.3 प्रतिशत सामाजिक रूप से सशक्त हैं। इसी प्रकार स्नातकोत्तर एवं अधिक शिक्षा प्राप्त 9.7 प्रतिशत महिलाओं में से 9.0 प्रतिशत महिलाएं मानती हैं कि वह सामाजिक रूप से सशक्त हैं। इस

प्रकार अधिक उच्च स्तर पर शिक्षा प्राप्त महिलाओं का कहना है कि वह सामाजिक रुप से शिक्षा के सशक्त हो पाईं | समाज में उच्च शिक्षित होने के कारण उन्हें विशेष सम्मान दिया जाता है। विभिन्न निर्णयों एवं समस्याओं को सुलझाने में उनकी सहभागिता को विशेष महत्व दिया जाता है। साथ ही वह शिक्षित होने के कारण विभिन्न सामाजिक कार्यक्रमों में स्वतंत्रतापूर्वक सहयोग कर पाती हैं। वह शिक्षित होने के कारण पारिवारिक एवं सामाजिक समृद्धि में बेहतर सहभागिता दर्ज कर पा रही हैं। उनका मानना है कि वह शिक्षित होने के कारण परिवार एवं समाज में अपना मत दृढ़ता से रख पाती हैं।

तालिका क्रमांक (स)

शिक्षा स्तर एवं राजनैतिक जागरूकता

क्रं.	शिक्षा स्तर	राजनैतिक	कुल	
		हाँ	नहीं	
1.	प्राथमिक स्तर	28 (9.3%)	30 10.0%)	58 (19.3%)
2.	माध्यमिक स्तर	24 (8.0%)	32 (10.7%)	56 (18.7%)
3.	हाईस्कूल एवं हायर सेकेंडरी	79 (26.3%)	23 (7.7%)	102 (34.0%)
4.	स्नातक	49 (16.3%)	06 (2.0%)	55 (18.3%)
5.	स्नातकोत्तर एवं अधिक शिक्षा प्राप्त	28 (9.3%)	01 (0.3%)	29 (9.7%)
	कुल	208 (69.3%)	92 (30.7%)	300 (100%)

स्रोतः सर्वेक्षण द्वारा प्राप्त समंक

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि 69.3 प्रतिशत महिलाएं राजनैतिक रूप से जागरूक हैं अर्थात वह राजनीति में भाग लेती हैं मतदान आदि करती हैं जबकि 30.7 प्रतिशत महिलाएं राजनैतिक रूप से जागरुक नहीं हैं।

विभिन्न शिक्षा स्तर पर राजनैतिक जागरूकता देखने पर पता चलता है कि प्राथमिक स्तर तक शिक्षा प्राप्त महिलाओं में से 9.3 प्रतिशत राजनैतिक रूप से जागरूक हैं जबकि 10.0 प्रतिशत जागरुक नहीं हैं। इसी प्रकार स्नात्तक शिक्षा प्राप्त 16.3 प्रतिशत महिलाएं राजनैतिक रुप से जागरूक हुईं जबकि केवल 2.0 प्रतिशत महिलाएं जागरूक नहीं हैं। इसी प्रकार स्नातकोत्तर एवं अधिक शिक्षा प्राप्त महिलाओं में कुल 9.7 प्रतिशत में से 9.3 प्रतिशत राजनैतिक रूप से जागरूक हैं जबकि 0.3 प्रतिशत महिलाएं जागरूक नहीं हैं। अतः अधिक उच्च शिक्षा प्राप्त करने के कारण आदिवासी महिलाएं राजनैतिक रूप से जागरूक हुई हैं। शोध के दौरान ज्ञात हुआ है कि शिक्षित महिलाएं अपने राजनैतिक अधिकारों एवं

कर्तव्यों के प्रति अधिक जागरुक पायी गईं। आदिवासी क्षेत्रों में देखा गया कि शिक्षित महिलाएं चुनाव प्रक्रिया में बढ़-चढ़कर हिस्सा लेती हैं। साथ ही इस समुदाय की कई ऐसी महिलाएँ है जो वर्तमान में सरपंच से लेकर अन्य उच्च राजनैतिक पदों पर आसीन हैं।

तालिका क्रमांक (द)

शिक्षा का स्तर एवं निर्णय क्षमता

क्रं.	शिक्षा का स्तर	निर्णय क्षमता	कुल	
		हाँ	नहीं	
1.	प्राथमिक स्तर	33 (11.0%)	25 (8.3%)	58 (19.3%)
2.	माध्यमिक स्तर	36 (12.0%)	20 (6.7%)	56 (18.7%)
3.	हाईस्कूल एवं हायर सेकेंडरी	83 (27.7%)	19 (6.3%)	102 (34.0%)
4.	स्नातक	52 (17.3%)	03 (1.0%)	55 (18.3%)
5.	स्नातकोत्तर एवं अधिक शिक्षा प्राप्त	27 (9.0%)	02 (0.7%)	29 (9.7%)
	कुल	231 (77.0%)	69 (23.0%)	300 (100%)

स्रोतः सर्वेक्षण द्वारा प्राप्त समंक

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि 77.8 प्रतिशत महिलाएं विभिन्न प्रकार के निर्णय लेने के लिए स्वतंत्र हैं जबकि 23.0 प्रतिशत महिलाएं परिवार में निर्णय नहीं लेती है। अतः तालिका से स्पष्ट है कि शिक्षित होने के कारण परिवार में विभिन्न समस्याओं को सुलझाने, आर्थिक, बच्चों की शिक्षा, विवाह आदि से संबंधित निर्णय में उनके निर्णय को प्राथमिकता दी जाती है। उच्च शिक्षित होने के कारण उनके निर्णय परिवार में मान्य होते हैं जबकि अधिकतर कम शिक्षा प्राप्त महिलाओं का मानना है कि उनसे विभिन्न सलाह नहीं ली जाती। इनका मानना है कि यदि वह अच्छी पढ़ी-लिखी होतीं तो परिवार में उनकी स्थिति भी उच्च होती। शोध के दौरान देखा गया कि उच्च शिक्षित महिलाएँ अशिक्षित महिलाओं की तुलना में शोधार्थी के प्रश्नों का उत्तर अधिक आत्मविश्वास से दे रही थीं।

महिला सशक्तिकरण पर शिक्षा के प्रभाव की जांच करने के लिए F-Test का उपयोग किया गया है जिसमें ली गई परिकल्पना इस प्रकार है।

H0: शिक्षा एवं आदिवासी महिला सशक्तिकरण में कोई अंतर्संबंध नहीं है।

सर्वेक्षण द्वारा प्राप्त आंकड़ों के आधार पर परिकल्पना की जांच की गई एवं प्राप्त परिणामों को निम्न तालिका द्वारा स्पष्ट किया गया है-

तालिका क्रमांक -2

प्रसरण विश्लेषण सारणी (ANOVA)

क्र.	महिला सशक्तिकरण के घटक	प्रसरण के स्त्रोत	वर्ग का योग	स्वातंत्र्य संख्या वृध्दि	वर्ग माध्य	मान	सार्थकता स्तर (.०००)
1	आर्थिक आत्मनिर्भरता	समूह के बीच	4.282	4	1.070	8.024	.000
		समूह के अंदर	39.355	295	133		
		कुल	43.637	299			
2	सामाजिक रूप से सशक्त	समूह के मध्य	8.685	4	2.171	13.609	.000
		समूह के अंदर	47.062	295	.160		
		कुल	55.747	299			
3	राजनैतिक जागरूकता	समूह के मध्य	45.860	4	11.465	16.160	.000
		समूह के अंदर	209.287	295	.709		
		कुल	255.147	299			
4	निर्णय क्षमता	समूह के मध्य	5.890	4	1.472	9.194	.000
		समूह के अंदर	47.240	295	.160		
		कुल	53.130	299			

उपरोक्त तालिका में महिला सशक्तिकरण के विभिन्न घटको को दर्शाया गया है जिसमें आर्थिक आत्मनिर्भरता से संबंधित प्राथमिक समंकों के परीक्षण से प्राप्त परिणामों को देखने पर ज्ञात होता है कि 05 प्रतिशत (.000) सार्थकता स्तर पर शून्य परिकल्पना अस्वीकार की जाती है एवं कहा जाता है कि शिक्षा के कारण आदिवासी महिलाएँ आत्मनिर्भर हुई हैं।

इसी प्रकार सामाजिक सशक्तता की स्थिति को देखने पर ज्ञात होता है कि 05 प्रतिशत सार्थकता स्तर (.000) पर शून्य परिकल्पना अस्वीकार की जाती है। अत: कहा जा सकता है कि आदिवासी महिलाएँ शिक्षित होने के कारण सामाजिक रुप से सशक्त हुई हैं एवं वह स्वतंत्रापूर्वक सामाजिक कार्यक्रमों एवं विभिन्न गतिविधियों में भाग लेने लगी हैं। साथ ही शिक्षित होने के कारण समाज में इन्हें विशेष सम्मान दिया जाता है।

राजनैतिक जागरुकता की स्थिति को देखने से ज्ञात होता है कि 05 प्रतिशत सार्थकता स्तर (.000) पर शून्य परिकल्पना अस्वीकार की जाती है एवं कहा जा सकता है कि शिक्षा के कारण आदिवासी महिलाएँ राजनैतिक रुप से जागरुक हुई हैं। उच्च शिक्षित महिलाएँ विभिन्न प्रकार से चुनाव प्रक्रिया में स्वतंत्र रुप से भाग लेती हैं, वह मतदान करती हैं एवं राजनैतिक रुप से अपनी बात स्पष्टता से रख पाती हैं। साथ ही राजनीति में भी उपस्थिति दर्ज करा रही हैं। उच्च शिक्षित महिलाएँ राजनैतिक अधिकारों एवं कर्तव्यों के प्रति अधिक जागरुक पायी गईं।

इसी प्रकार निर्णय क्षमता से संबंधित प्राप्त प्राथमिक समंकों का परीक्षण करने से ज्ञात हुआ है कि ०५ प्रतिशत सार्थकता स्तर (.०००) पर शून्य परिकल्पना अस्वीकार की जाती है एवं कहा जाता है कि आदिवासी महिलाएँ शिक्षित होने के कारण विभिन्न पारिवारिक एवं सामाजिक निर्णय लेने में अधिक सक्षम पायी गईं।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि शिक्षा एवं महिला सशक्तिकरण के मध्य निश्चित रुप से सकारात्मक संबंध है। वर्तमान में ग्रामीण आदिवासी समाज बाल विवाह, लिंगभेद, बाल श्रम आदि जैसी समस्याओं से ग्रस्त देखा जा सकता है। अतः इन सबसे निजात पाने में शिक्षा महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रही है। आदिवासी महिलाएँ शिक्षित होने के कारण आर्थिक रुप से आत्मनिर्भर हो रही हैं। वह सामाजिक रुप से सशक्त हुई हैं। समाज में उनका मान सम्मान बढ़ रहा है एवं विभिन्न निर्णयों में अपनी भागीदारी दे रही हैं। वह परिवार के विभिन्न निर्णयों में पुरुषों के समकक्ष भागीदार हो रही हैं, साथ ही साथ राजनैतिक रुप से भी जागरुक हुई हैं। अतः महिला सशक्तिकरण के विभिन्न घटकों एवं शिक्षा के मध्य संबंध की जाँच करने पर पाया गया है कि शिक्षा स्तर के बढ़ने पर महिला सशक्तिकरण की स्थिति में भी सुधार देखने को मिलता है। शिक्षा महिला सशक्तिकरण का प्रमुख आधार है। शिक्षित महिलाऐं अधिक निर्णय क्षमतावान, आत्मनिर्भर, जागरुक एवं विभिन्न कार्यों में कुशल सहभागी होती हैं। शिक्षा के कारण आदिवासी महिलाएं नौकरी करने लगी हैं। वह शासन द्वारा प्रदत्त रोजगार योजनाओं का लाभ प्राप्त कर स्वयं का व्यवसाय करने लगी हैं। वह सामाजिक-आर्थिक एवं राजनैतिक क्षेत्रों में अपनी सहभागिता दर्ज करा रही हैं। अतः प्रस्तुत शोध के दौरान देखा गया कि आदिवासी समुदाय शिक्षा के प्रति जागरुक तो हुआ है, परंतु उच्च शिक्षा के संबंध में स्थिति अभी भी संतोषजनक नहीं है। इसका कारण कहीं न कहीं ग्रामीण क्षेत्रों में उच्च शिक्षा से संबंधित संस्थान अथवा सुविधाएँ उपलब्ध ना होना है। परिणामस्वरुप आदिवासी बालिकाएँ स्कूली शिक्षा के पश्चात उच्च शिक्षा से वंचित हो जाती हैं।

आभार

शोधकर्ता, विभागाध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग एवं प्राचार्य, माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय इन्दौर, मुख्य ग्रंथपाल, केन्द्रीय ग्रंथालय देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) का आवश्यक संसाधन व शोध साहित्य उपलब्ध करवाने हेतु एवं आर्थिक सहायता के रुप में राजीव गांधी राष्ट्रीय फैलोशीप प्रदान करने हेतु विश्वविद्यालय अनुदान आयोग एवं जनजातीय कार्य मंत्रालय, भारत सरकार के प्रति आभार व्यक्त करती है।

संदर्भ सूची

धर घनश्याम, सक्सेना आराधना (2010) "भारतीय समाज" आस्था प्रकाशन, जयपुर,

सारस्वत, ऋतु (सितंबर 2009) "जनजातिय शिक्षाः मंजिल अभी दूर है", योजना, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय,

Government of India, ministry of Tribal Affairs, Annual Report, 2017-18.

https://www.education.gov.in/hi/rte_hindi

डॉ. सक्सेना उपमा (2012) महिला सशक्तिकरण सामाजिक एवं संवैधानिक परिदृश्य अध्ययन, पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली.

राजपूत उदयसिंह (2015). जनजातीय शिक्षा प्रयास:उपलब्धियां एवं चुनौतियां, कुमार अरुण, आधुनिक शिक्षा एवं दलित (संपा), रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर

https://wcd.nic.in/hi/policie

Census of India, analytical Report on primary census abstract, Madhya Pradesh, series 24.

वार्षिक रिपोर्ट 2015-16, जनजातीय कार्य मंत्रालय भारत सरकार

Annual Report 2016-17, Ministry of Tribal Affairs, Government of India

https://tribal.nic.in/downloads/statistics/statistics8518.pdf

इन्टरनेट उपभोक्ता युवाओं में वेब-सीरीज की लोकप्रियता एवं प्रभावशीलता : एक अध्ययन

डॉ. सुनील कुमार मिश्र*

सारांश

प्रस्तुत शोध पत्र इन्टरनेट उपभोक्ता युवाओं में भारतीय वेब सीरीज की लोकप्रियता एवं प्रभावशीलता की पड़ताल करता है | इस अध्ययन में यह जानने की कोशिश की गई है कि भारतीय वेब सीरीज किस प्रकार से भारतीय मनोरंजन के परिदृश्य को बदल रही है एवं प्रस्तुत विषयवस्तु युवाओं पर किस प्रकार का प्रभाव डाल रही है | वेब सीरीज की लोकप्रियता से जुड़े कारकों का पता लगाना भी शोध पत्र का प्रमुख उद्देश्य है | साथ ही यह जानने का प्रयास भी किया गया है कि कोरोना काल का वेबसीरीज की लोकप्रियता पर क्या असर हुआ है । पिछले कुछ समय में 'ओवर द टॉप' प्लेटफार्म की लोकप्रियता तेजी से बढ़ी है | नेटफ्लिक्स, अमेज़न प्राइम, जी-5, जियो सिनेमा, ऑल्ट बालाजी, वूट, सोनी लिब, एवं डिज्नी+हॉटस्टार जैसे प्लेटफार्म कहीं भी कभी भी वेबसीरीज को देखने की स्वतंत्रता प्रदान करते हैं जो युवा पीढ़ी को आकर्षित कर रही है | वर्तमान युग इन्टरनेट का युग है जहाँ विश्व के किसी कोने में निर्मित किसी भी प्रकार की विषयवस्तु से आसानी से जुड़ा जा सकता है | प्रस्तुत अध्ययन विवरणात्मक प्रवृत्ति का है जिसके अन्तर्गत सर्वेक्षण विधि द्वारा प्राप्त तथ्यों का विश्लेषण किया गया है | तथ्य संकलन हेतु निदर्शन पद्धति का उपयोग करते हुए प्रश्नावली के माध्यम से दिल्ली में रहने वाले 240 युवाओं द्वारा प्राप्त उत्तरों को विश्लेषित कर परिणाम प्रस्तुत किया गया है | अध्ययन से पता चलता है कि इन्टरनेट उपभोक्ता युवाओं ने कोरोनाकाल में वेब सीरीज को प्रमुखता से देखा है |

बीज शब्द - वेब-सीरीज, ओ टी टी, वीडियो स्ट्रीमिंग, इन्टरनेट उपभोक्ता, युवा, कोरोना काल

प्रस्तावना

इन्टरनेट के इस युग में वेब सीरीज नामक विधा ने पूरे मनोरंजन परिदृश्य को प्रभावित करने का कार्य किया है| पिछले कुछ वर्षों में मनोरंजन की दुनिया में दस्तक देने वाली वेब सीरीज एक नया मनोरंजन परिवेश गढ़ने में लगी हैं जो कहीं भी, कभी भी दर्शक

* लेखक विवेकानन्द इंस्टिट्यूट ऑफ़ प्रोफेशनल स्टडीज, नई दिल्ली में सहायक प्राध्यापक हैं |

को मनोरंजन की दुनिया में ले जाने में सक्षम है | इसके लिए दर्शक को न तो सिनेमा घर तक जाने की जरूरत है न ही परिवार के अन्य सदस्यों के साथ टेलीविजन स्क्रीन साझा करने की जरुरत है | अपनी सुविधा के अनुसार वह समय एवं स्थान का चुनाव करने के लिए स्वतन्त्र है | बस अथवा ट्रेन से यात्रा के दौरान पसन्दीदा वेब सीरीज को देखना हो या फिर खाली समय में मनोरंजन की इस विधा से जुड़ना, स्मार्टफोन एवं इन्टरनेट की उपलब्धता ने सम्भव कर दिखाया है | कोविड-19 की वजह से घरों में कैद युवाओं के लिए वेब सीरीज निश्चित तौर पर मानसिक राहत देने वाली सिद्ध हुई है |

सुष्मिता विश्वास (विश्वास, 2021) फाइनेंसियल एक्सप्रेस के लिए लिखे अपने लेख में स्पष्ट करती हैं कि "मार्च 2020 के बाद से ओटीटी वीडियो स्ट्रीमिंग प्लेटफार्म ने अच्छा प्रदर्शन किया है | इस दौरान न सिर्फ इन प्लेटफार्म के ग्राहकों की संख्या में बढ़ोत्तरी हुई है अपितु इस दौरान ग्राहकों ने इन प्लेटफार्म पर अधिक समय बिताया है | उन्होंने अपने लेख में स्पष्ट किया है कि कोरोना काल में सभी मुख्य ओटीटी प्लेटफार्म ग्राहक संख्या एवं व्यापार बढ़ाने में सफल रहे हैं | दिसम्बर, 2019 में डिज्नी + हॉटस्टार के 5.36 मिलियन ग्राहक थे जो दिसम्बर, 2020 में बढ़कर 18.69 मिलियन हो गये | जी-5 की ग्राहक संख्या 1.99 मिलियन से बढ़कर 2.7 मिलियन हो गई, अमेज़न प्राइम के ग्राहक 4.3 मिलियन से बढ़कर 5.83 मिलियन हो गए | इसी प्रकार नेटफ्लिक्स एवं सोनी लिव की ग्राहक संख्या भी तेजी से बढ़ी है |" (आईबीइएफ, 2020) में दर्शाया गया है कि कोविड-19 महामारी की वजह से लगे लॉकडाउन ने लोगों को घरों में रहने को मजबूर किया जिससे ओटीटी प्लेटफार्म के ग्राहकों की संख्या तेजी से बढ़ी | मार्च-2020 से जुलाई-2020 के बीच ही इन प्लेटफार्म की ग्राहक संख्या में 30% की वृद्धि देखी गई | इस प्रकार से यह कहा जा सकता है कि कोरोनाकाल ओटीटी प्लेटफार्म के बाजार विस्तार में सहायक हुआ है | कोरोना की चुनौतियों के कारण बड़े पर्दे पर सिनेमा की अनुपलब्धता से उपजी खाली जगह को भरने के साथ ही यह विधा युवा वर्ग को तेजी से अपनी तरफ खींच रही है | यही वजह है कि सिनेमा निर्माण से जुड़े दिग्गजों ने 'ओवर द टॉप' प्लेटफार्म की तरफ कदम बढ़ाना शुरू कर दिया है | नेटफ्लिक्स, अमेज़न प्राइम, जी-5, जियो सिनेमा, ऑल्ट बालाजी, वूट, सोनी लिव एवं डिज्नी+हॉटस्टार जैसे प्लेटफार्म, इन्टरनेट उपभोक्ताओं के लिए वेब सीरीज के रूप में लगातार नये विषयों को प्रस्तुत कर रहे हैं जिससे उन विषयों को भी प्रमुखता मिल रही है जिन विषयों के प्रति मुख्य धारा का सिनेमा उदासीन दिखता था | ऐसे में वेब सीरीज की विषयवस्तु नयापन की वजह से भी उपभोक्ताओं को आकृष्ट कर रही है |

वर्तमान में अनेकों निर्माता अपनी वेब सीरीज को ओटीटी प्लेटफार्म पर प्रदर्शित कर रहे हैं | केपीएमजी की भारत एवं इरोज नाउ की एक रिपोर्ट के अनुसार, भारत के वीडियो

बाजार में 2023 तक 500 मिलियन से अधिक ऑनलाइन वीडियो ग्राहक होंगे | इसमें यह भी कहा गया है कि सभी ओटीटी प्लेटफार्म मूल सामग्री के निर्माण में भारी निवेश कर रहे हैं | ओटीटी सेवा के अन्तर्गत कार्यक्रम निर्माता कम्पनी अपनी सामग्री बिना किसी वितरक या प्रदर्शक को बीच में लाये सीधे दर्शक तक ऐप के जरिए पहुँचा देती है | वर्ष 2008 में रिलायंस इंटरटेनमेंट ने जब भारत में 'बिग फ्लिक्स' नामक ओटीटी प्लेटफार्म की नींव रखी तो किसी को उम्मीद नहीं थी कि केबल, ब्रॉडकास्ट एवं सैटेलाइट टीवी से मुक्त यह तकनीक इन्टरनेट के माध्यम से मनोरंजन की दुनिया को स्मार्टफोन के स्क्रीन पर ला देगी | वर्तमान समय में सभी प्रमुख ओटीटी प्लेटफार्म दो से अधिक भाषाओं में विषयवस्तु उपलब्ध करा रहे हैं | ऐसे कुछ प्रमुख प्लेटफार्म निम्नलिखित हैं-

ओ टी टी प्लेटफार्म	स्वामित्व	सेवा आरम्भ करने का वर्ष
सोनी लिव	सोनी पिक्चर्स नेटवर्क इण्डिया	2013
हंगामा प्ले	हंगामा डिजिटल मीडिया लिमिटेड	2015
नेटफ्लिक्स	नेटफ्लिक्स इंक	2015
डिज्नी + हॉटस्टार	स्टार इण्डिया	2015
अमेज़न प्राइम	अमेज़न	2016
वूट	वायकॉम 18	2016
जियो सिनेमा	जियो प्लेटफॉर्म्स	2016
ऑल्ट बालाजी	बालाजी टेलीफिल्म्स	2017
सन एनएक्सटी	सन टीवी नेटवर्क्स	2017
एम-एक्स प्लेयर	टाइम्स इन्टरनेट	2018
जी-5	जी इंटरटेनमेंट इंटरप्राइजेज	2018

स्रोत सेलेक्ट्रा डॉट इन

वेब सीरीज देखने के लिए स्मार्टफोन, लैपटॉप अथवा इन्टरनेट से जुड़ सकने वाली स्मार्ट टीवी होनी चाहिए | वेब सीरीज के विभिन्न एपिसोड को क्रमशः अथवा एक साथ इन्टरनेट आधारित ओटीटी प्लेटफार्म पर प्रदर्शित किया जाता है | इसे सिनेमाघर अथवा टीवी चैनल पर प्रदर्शित नहीं किया जाता है | फिल्म अथवा टेलीविजन धारावाहिकों की तरह वेब सीरीज लम्बी अवधि की नहीं होती है | इसका एक एपिसोड लगभग 45 मिनट अथवा उससे कम अवधि का होता है। इससे दर्शक आसानी से एक बार में एक एपिसोड देख लेता है | इन्टरनेट की सस्ती होती दर एवं पिछले कुछ वर्षों में जियो जैसी टेलीकॉम कम्पनियों द्वारा मुफ्त उपलब्ध कराए गये डेटा की वजह से भी वेब सीरीज के दर्शक बढ़े हैं जो इस विधा

के लिए एक अच्छा संकेत है | वर्तमान युग इन्टरनेट का युग है, जहाँ विश्व के किसी कोने में निर्मित किसी भी प्रकार की विषयवस्तु से आसानी से जुड़ा जा सकता है | वेब-सीरीज को बाजार प्रदान करने में इन्टरनेट जैसी तकनीकी का विशेष योगदान नजर आता है | स्मार्टफोन की उपलब्धता एवं सस्ती इन्टरनेट दर ने इस नये माध्यम को न सिर्फ महानगरों के उपभोक्ताओं तक पहुँचाने का कार्य किया है अपितु छोटे शहरों में भी इसका उपभोक्ता वर्ग बढ़ रहा है |

इन्टरनेट एंड मोबाइल एसोसिएशन ऑफ़ इण्डिया द्वारा 8 मई, 2020 को जारी एक रिपोर्ट (आईएएमआई: 2020) के अनुसार, "भारत में फ़िलहाल 50 करोड़ 40 लाख इन्टरनेट उपयोगकर्ता हैं जो कि विश्व में चीन के बाद दूसरे सबसे ज्यादा उपयोगकर्ता हैं | इस एसोसिएशन द्वारा जारी एक अन्य रिपोर्ट में कहा गया है कि गाँव में भी इन्टरनेट उपयोगकर्ताओं की संख्या बढ़ी है | गाँवों में शहरों के मुकाबले 10 फीसदी अधिक लोग इन्टरनेट का उपयोग कर रहे हैं | गाँव में यह संख्या 22 करोड़ 70 लाख की संख्या पार कर चुकी है जबकि शहरों में यह संख्या 20 करोड़ 50 लाख है |" यह आँकड़ें निश्चित तौर पर ओटीटी प्लेटफार्म के लिए वरदान साबित हो सकते हैं | इन्टरनेट उपयोगकर्ताओं की संख्या में बढ़ोत्तरी के पीछे स्मार्टफोन और हाई स्पीड इन्टरनेट एक बड़ी वजह है | मैंकिन्जी ग्लोबल इंस्टीट्यूट की एक रिपोर्ट (2020) के अनुसार, "सरकार के प्रयासों और रिलायंस जियो जैसी निजी कंपनियों के कारण देश में डेटा पिछले छः वर्षों में 95 फीसदी सस्ता हुआ है | इसके कारण इंटरनेट का इस्तेमाल करने वालों की संख्या तेजी से बढ़ रही है | इंस्टीट्यूट ने 'डिजिटल इंडिया-टेक्नोलॉजी टू ट्रांसफॉर्म: ए कनेक्शन नेशन' रिपोर्ट जारी की है | इसमें कहा है कि देश में डेटा के लगातार सस्ते होने से वर्ष 2023 तक इंटरनेट का इस्तेमाल करने वालों की संख्या करीब 40 फीसदी बढ़ जाएगी | स्मार्टफोन धारकों की संख्या में बढ़ोत्तरी वेब सीरीज के केंद्र में निहित कभी भी, कहीं भी मनोरंजन की अवधारणा को मजबूत करती है | करेंट अफेयर्स नामक पत्रिका (करेंट अफेयर्स : मई, 2020) में छपे एक लेख के अनुसार, भारत में महिला इन्टरनेट उपयोगकर्ताओं की संख्या पुरुष इन्टरनेट उपयोगकर्ताओं की तुलना में अधिक है | इसके अनुसार भारत के इन्टरनेट प्लेटफार्म में स्थानीय भाषाओं का महत्व बढ़ रहा है | महिला इन्टरनेट उपभोक्ताओं की संख्या में बढ़ोत्तरी का असर मनोरंजन परिदृश्य पर पड़ने की भी सम्भावना है |

साहित्य का पुनरावलोकन- पिछले 2-3 वर्षों में भारतीय वेब सीरीज के बाजार विस्तार, उसके प्रभाव एवं विषयवस्तु से जुड़े कुछ शोधपत्र, शोध पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं, साथ ही इस विषय पर दैनिक भास्कर, दैनिक जागरण, जनसत्ता, द हिंदू आदि समाचार पत्रों में कई महत्वपूर्ण लेख प्रकाशित हुए हैं | इस विषय पर लिखे गये ज्यादातर शोध पत्र 'ओटीटी

प्लेटफार्म' पर ही केन्द्रित हैं | वेब सीरीज चूँकि एक नई विधा है, इसलिए इस विषय पर बहुत सीमित शोधकार्य ही शोधकर्ता को देखने को मिले | परमवीर सिंह (2019) ने अपने शोध पत्र 'न्यू मीडिया एज ए चेंज एजेंट ऑफ़ इण्डियन टेलीविजन एंड सिनेमा: ए स्टोरी ऑफ़ ओवर द टॉप प्लेटफॉर्म्स' में दर्शाया है कि ओवर द टॉप प्लेटफार्म की शुरुआत के बाद से कैसे भारतीय मनोरंजन परिदृश्य बदला है | उनके अनुसार, "हॉट स्टार, नेटफ्लिक्स एवं जियो भारतीय युवाओं के बीच सर्वाधिक लोकप्रिय ओटीटी प्लेटफार्म हैं जबकि अमेज़न प्राइम भी तेजी से लोकप्रिय हो रहा है | ज्यादातर दर्शक प्रतिदिन 2 घन्टे से अधिक का समय इन प्लेटफार्म पर बिताते हैं | ओटीटी प्लेटफार्म का मुख्य उद्देश्य मनोरंजन प्रदान करना है | इस शोध पत्र में कहा गया है कि ओटीटी प्लेटफार्म ने दर्शकों के टीवी एवं फिल्म देखने के व्यवहार को बदलने का कार्य किया है | मनीषा शुक्ला एवं मनीषा वाघमोरे (2019) अपने शोध पत्र 'ए स्टडी ऑफ़ यूथ इंगेजमेंट इन वाचिंग वेब सीरीज' में लिखतीं हैं कि मनोरंजन प्राप्त करने हेतु महिला दर्शकों की तुलना में पुरुष दर्शक वेब सीरीज अधिक देखते हैं अर्थात पुरुष ओटीटी प्लेटफार्म पर अधिक समय व्यतीत करते हैं | राहुल आहूजा (2020) ने अपने शोध पत्र 'ए स्टडी ऑफ़ इफेक्ट्स ऑफ़ वेब सीरीज एंड स्ट्रीमिंग कन्टेंट ऑन इण्डियन यूथ' में लिखा है कि वेब सीरीज की अन्तर्वस्तु का युवाओं पर साफ असर दिखता है | वेब सीरीज में दर्शाये गये दृश्य एवं संवाद युवाओं पर मनोवैज्ञानिक प्रभाव डाल रहे हैं | वेब सीरीज़ में दिखाए गये बोल्ड एवं हिंसा से भरे दृश्य के कारण युवा वर्ग आकर्षित होता है जो उनके व्यवहार पर असर डालता है | उपरोक्त शोध पत्र वेब सीरीज से जुड़े कई तथ्य सामने लाने का प्रयास करता है | हालाँकि इस क्षेत्र में गहन अध्ययन की गुंजाईश काफी है, विशेष तौर पर जब इसका निरन्तर क्षेत्र विस्तार हो रहा है एवं तेजी से बड़े समूह ओटीटी प्लेटफार्म की तरफ बढ़ रहे हैं | स्मार्टफोन एवं इन्टरनेट की उपलब्धता ने निश्चित तौर पर युवा उपभोक्ताओं को ओटीटी प्लेटफार्म से जोड़ने का कार्य किया है | कोविड-19 के बाद उपजी चुनौतियों ने भी वेब सीरीज को क्षेत्र विस्तार दिया है जिससे इस विषय पर नये सिरे से अध्ययन की आवश्यकता महसूस की गई |

अध्ययन का उद्देश्य

1. इन्टरनेट उपभोक्ता युवाओं में वेब सीरीज की लोकप्रियता का पता लगाना
2. युवाओं द्वारा वेब सीरीज देखने की प्रवृत्ति का अध्ययन करना
3. वेब सीरीज के विषयवस्तु का युवा उपभोक्ताओं पर प्रभाव को स्पष्ट करना
4. युवाओं में वेब सीरीज की लोकप्रियता का कारण पता करना
5. कोरोना काल की वजह से उत्पन्न परिस्थितियों का वेब सीरीज के बाजार पर प्रभाव का विश्लेषण करना

अध्ययन का क्षेत्र- प्रस्तुत शोध के आंकड़े एकत्रित करने के लिए दिल्ली में निवास करने वाले युवाओं का चुनाव किया गया है | अध्ययन की इकाई के रूप में दिल्ली विश्वविद्यालय एवं गुरु गोविन्द सिंह इन्द्रप्रस्थ विश्वविद्यालय में अध्ययनरत एवं अध्यापनरत उत्तरदाताओं का चुनाव किया गया है | इस अध्ययन में उन्हीं उत्तरदाताओं को शामिल किया गया है जिनकी आयु 18 से 32 वर्ष के बीच है | यह अध्ययन इन्टरनेट उपभोक्ता युवाओं तक ही सीमित है एवं इसमें शामिल सभी उत्तरदाता स्नात्तक स्तर की शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं अथवा कम से कम स्नात्तक हैं |

शोध प्रारूप: प्रस्तुत अध्ययन विवरणात्मक प्रवृत्ति का है जिसके अन्तर्गत तथ्यों का विश्लेषण करके उनका विवरण प्रस्तुत किया गया है | प्राथमिक तथ्यों के संकलन हेतु शोधकर्ता ने अध्ययन के लिए सर्वेक्षण विधि का चुनाव किया है | इस हेतु निदर्शन पद्धति का उपयोग किया गया है | प्रश्नावली के माध्यम से दिल्ली में रहने वाले 240 युवाओं जिनकी आयु 18 से 32 वर्ष के मध्य है, के द्वारा प्राप्त उत्तर को विश्लेषित कर परिणाम प्रस्तुत किया गया है | द्वितीयक तथ्यों को प्राप्त करने के लिए शोधकर्ता ने सम्बन्धित साहित्य का अध्ययन किया है एवं आवश्यक तथ्यों को सन्दर्भ सहित प्रस्तुत किया है |

भारतीय वेब सीरीज : बाजार एवं विवाद- भारतीय वेब सीरीज का दायरा तेजी से बढ़ रहा है | स्थानीय मुद्दों पर अनछुए पहलू को ओटीटी प्लेटफार्म पर लाने के साथ ही यह विधा स्थानीय कलाकारों एवं निर्माताओं को भी अवसर प्रदान कर रही है | हिन्दी के अतिरिक्त बांग्ला, कन्नड़, मराठी इत्यादि भारतीय भाषाओं में बनी वेब सीरीज भी दर्शकों को अपनी ओर आकर्षित करने में कामयाब हो रही हैं | इन्टरनेट पर उपलब्ध होने की वजह से दर्शक अपनी पसन्दीदा वेब सीरीज को कहीं से भी देख सकता है | पिछले कुछ समय में डिजिटल प्लेटफार्म पर उपलब्ध मनोरंजन की यह विधा दर्शकों को खींचने में सफल रही है | विशेष तौर पर कोरोना काल में प्रदर्शित प्रमुख वेब सीरीज की दर्शक संख्या लाखों में रही है | यह विधा निर्माता को कहानियों के साथ प्रयोग करने का विकल्प भी उपलब्ध करा रही है जिससे दर्शक को निरन्तर एक नये प्रकार की विषयवस्तु देखने को मिल रही है | सालों-साल चलने वाले टीवी धारावाहिकों को देखने के लिए मजबूर दर्शकों के लिए भी यह विधा मनोरंजन का विकल्प उपलब्ध करा रही है जिससे महिला दर्शकों की संख्या में बढ़ोत्तरी की सम्भावना दिखती है | 'एक्सपेरीमेंटल सिनेमा' की वकालत के साथ ही अभिव्यक्ति को सामाजिक दायरे से मुक्त करने की बात करने वाली वेब सीरीज की दुनिया युवा वर्ग को लुभाने लगी है | विशेषकर शहरी युवा इस तरफ़ तेजी से आकर्षित हो रहा है जिसके पीछे इन्टरनेट की उपलब्धता एक महत्वपूर्ण कारक के रूप में नजर आती है | टीवी धारावाहिक के दौरान लम्बे ब्रेक, एवं कच्छप गति से आगे बढ़ने वाली कहानी से छिटका उपभोक्ता वर्ग वेब

सीरीज को अच्छा विकल्प मानता है जिसमें न सिर्फ तेज गति से कहानी बढ़ती रहती है अपितु विषयवस्तु का प्रवाह भी तेज गति से होता है | यह अपेक्षाकृत कम अवधि में ही कहानी के निष्कर्ष तक पहुँचा देती है | मिर्जापुर 2 को दर्शकों ने खूब सराहा, हालाँकि इसमें उपयोग किये गये संवाद एवं दृश्य पर प्रश्न भी किये गये | वर्ष 2020 में आई निम्न वेब सीरीज न सिर्फ लोकप्रिय रहीं अपितु लोगों ने इन्हें पसन्द भी किया |

क्रम संख्या	वेब सीरीज का नाम	प्लेटफार्म
1.	स्कैम 1992	सोनी लिव
2.	ए सिम्पल मर्डर	सोनी लिव
3.	आर्या	डिज्नी + हॉटस्टार
4.	स्पेशल ऑप्स	डिज्नी + हॉटस्टार
5.	पंचायत	अमेज़न प्राइम
6.	पाताल लोक	अमेज़न प्राइम
7.	बंदिश बैंडिटस	अमेज़न प्राइम
8.	द गान गेम	वूट
9.	असुर	वूट
10.	फ्लेश	इरोज नाउ

स्रोत आई एम डी बी डॉट कॉम

मनोरंजन के इस माध्यम ने फिल्म निर्माण के क्षेत्र में वर्षों से कब्ज़ा जमाये घरानों को न सिर्फ इसे अंगीकार करने को विवश किया है अपितु नये निर्माताओं के लिए भी अवसर प्रदान करने का कार्य किया है | क्षेत्रीय कलाकारों के साथ ही फिल्म उद्योग से जुड़े कलाकारों को अवसर प्रदान करने वाली यह विधा एक नया दर्शक वर्ग तैयार करने में लगी है | रोजगार की दृष्टि से भी इस नये प्लेटफार्म को अत्यधिक उपयोगी कहा जा सकता है | इसने क्षेत्रीय स्तर पर फिल्म निर्माण के क्षेत्र में पदार्पण कर रहे लोगों के लिए नये अवसर पैदा करने का कार्य किया है, साथ ही ऐसी कहानी को सामने लाने का कार्य भी किया है जो बड़े बैनर के लिए अब तक अछूत थीं | इस नई विधा के जरिये क्षेत्रीय सिनेमा एवं क्षेत्रीय कलाकारों के कार्य क्षेत्र को विस्तार मिला है जिससे भविष्य में बाजार विस्तार की कल्पना की जा सकती है | अभिषेक बच्चन एवं बॉबी देओल जैसे कलाकारों के लिए वेब सीरीज संजीवनी साबित हुई है | कई फ़िल्मी सितारों के डूबते फ़िल्मी करियर को वेब सीरीज ने नया जीवन देने का कार्य किया है | वेब सीरीज की बढ़ती लोकप्रियता को देखते हुए बड़े दिग्गज कलाकार भी वेब सीरीज के जरिये ओटीटी प्लेटफार्म पर उपस्थिति को आतुर दिखते हैं | सैफ अली खान, विवेक ओबेराय, अनिल कपूर, सुष्मिता सेन, नवाज़ुद्दीन सिद्दीकी, कुलभूषण खरबन्दा, पंकज

त्रिपाठी, एवं मनोज वाजपेयी जैसे हिन्दी सिनेमा जगत से जुड़े कई बड़े कलाकारों ने वेब सीरीज में दमदार अभिनय से दर्शकों को प्रभावित किया है जिससे वेब सीरीज का बाजार भी बढ़ा है | इसके अतिरिक्त कई नये कलाकारों ने इस विधा के जरिये दर्शकों की प्रशंसा एवं राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कार बटोरे हैं |

भारतीय भाषाओं में बनी वेब सीरीज अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी लोकप्रिय हो रही हैं, इसका एक प्रमुख कारण इसकी इन्टरनेट पर उपलब्धता है | अपने नवीन विषय के कारण भारत में निर्मित दर्जनों वेब सीरीज अंतर्राष्ट्रीय दर्शक एवं पुरस्कार बटोरने में भी सफल रही हैं | हाल ही में प्रदर्शित 'दिल्ली क्राइम' को प्रतिष्ठित इंटरनेशनल एमी अवार्ड का मिलना इस बात का स्पष्ट संकेत है कि मनोरंजन के इस नये माध्यम के प्रतिस्पर्धी दुनिया में भारतीय भी जोरदार दस्तक दे रहे हैं और आने वाले समय में भारतीय वेबसीरीज की लोकप्रियता में बढ़ोत्तरी सुनिश्चित है | किसी भारतीय शो द्वारा पहली बार प्राप्त किया गया यह पुरस्कार निश्चित तौर पर एक नई पटकथा लिखने को आतुर है | मनोज वाजपेयी की वेबसीरीज 'द फेमिली मैन' के पहले सीजन को मिली सफलता इस बात की पुष्टि करती है कि मनोरंजन का माध्यम कोई भी हो, यदि कहानी अच्छी है तो वह दर्शक को आसानी से आकर्षित कर सकती है | 'एशियन एकेडमी क्रिएटिव अवार्ड्स' में चार पुरस्कार प्राप्त करने वाली इस वेबसीरीज के पहले सीजन को दर्शकों ने खूब पसन्द किया और अब इसका सीजन-2 भी प्रदर्शन हेतु तैयार है | 'फोर मोर शॉट्स प्लीज' का दूसरा सीजन बुसान एशियन कंटेंट अवार्ड्स 2020 का बेस्ट राइजिंग स्टार श्रेणी का पुरस्कार जीतने में सफल रही | चार दोस्तों की कहानी पर आधारित इस वेब सीरीज को युवा वर्ग ने खूब पसन्द किया |

विगत एक वर्ष में दर्जनों वेब सीरीज प्रदर्शित हुई हैं जिसने इस विधा को समृद्ध करने का कार्य किया है, वहीं कुछ वेब सीरीज अपने प्रदर्शन के साथ ही विवादों में रही हैं | 'पाताल लोक' 'एक्स एक्स एक्स 2' एवं 'ताण्डव' जैसी वेब सीरीज के विवाद न्यायालय तक भी पहुंचे हैं | इस विधा पर ऐसी सामग्री परोसने का आरोप भी लग रहा है जिसे सामाजिक वातावरण के अनुकूल नहीं माना जाता है। ऐसे में सेंसर बोर्ड जैसी संस्था के दबाव से मुक्त यह विधा उन्मुक्त प्रवाह के साथ बढ़ती है या फिर अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के साथ संविधान में वर्णित युक्तियुक्त निर्बन्धनों का अनुपालन करती है क्योंकि वर्ष 2020 में प्रदर्शित हुई कई वेब सीरीज से जुड़े विवाद न्यायालय तक पहुँचे हैं |

ऐसे में सरकार की तरफ से जल्द ही मनोरंजन के इस माध्यम के लिए दिशा-निर्देश जारी करने के संकेत मिल रहे हैं | हाल ही में प्रदर्शित 'तांडव' को लेकर सरकार की प्रतिक्रिया हो या एकता कपूर द्वारा निर्मित वेब सीरीज में भारतीय सेना की छवि ख़राब करने को लेकर न्यायालय की सख्त प्रतिक्रिया, इस विधा की सेहत के लिए अच्छी नहीं है | 'तांडव' के

निर्माताओं पर न सिर्फ हिंदू धर्म के देवी-देवताओं के गलत चित्रण का आरोप लगा है अपितु सरकार के खिलाफ एक वर्ग विशेष की भावनाओं को भड़काने का भी आरोप है | दैनिक जागरण में छपे लेख (तिवारी, 2021) के अनुसार, " भारतीय दंड संहिता की धारा 124 (ए) के अनुसार जब कोई व्यक्ति लिखित में या संकेतों में या प्रत्यक्ष प्रस्तुतीकरण या किसी अन्य विधि से भारत सरकार के प्रति घृणा या अवमान पैदा करने का प्रयास करता है तो वह राजद्रोह करता है | इसके आरम्भिक एपिसोड में संवाद एवं दृश्य के माध्यम से यह दर्शाने की कोशिश की गई है कि मुसलमानों को चिन्हित कर मारा गया | सलीम और अयूब के सन्दर्भ में जो संवाद हैं उसमें यह दर्शाने की कोशिश की गई है कि मुसलमानों को मारना बहुत आसान होता है | इसमें एक संवाद है 'मेरा नाम भी किसी आतंकवादी संगठन से जोड़ देंगे'| इस तरह के संवाद बेहद गंभीर निहितार्थ लिए हुए होते हैं | ऐसा प्रतीत होता है कि इस तरह के संवादों के जरिए देश की एक बड़ी आबादी को भड़काने का उपक्रम किया गया है | वेब सीरीज द्वारा अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के नाम पर सामाजिक एवं कानूनी दायरे का उल्लंघन सरकार के सामने चुनौती पेश कर रहा है |

फिल्म में बोल्ड या एडल्ट विषयसामग्री होने पर फिल्म निर्माता एवं निर्देशक को सेंसर बोर्ड की बात अनिवार्य रूप से माननी पड़ती है एवं बोर्ड द्वारा दिये गये सुझाव का अनुपालन करना होता है जबकि ओटीटी प्लेटफार्म अभी तक सेंसर से मुक्त है | यही कारण है कि निर्माता कई बार स्वतंत्रता से स्वच्छन्दता की तरफ बढ़ जाते हैं | निर्माता एकता कपूर द्वारा भारतीय सेना का गलत चित्रण करने के कारण रक्षा मंत्रालय भी काफी नाराज दिखलाई देता है | यही कारण है कि अब रक्षा मंत्रालय से बिना एनओसी लिए भारतीय सेना पर बनाई गई फिल्म, वृत्तचित्र, अथवा वेब सीरीज का प्रसारण नहीं किया जा सकेगा | कुछ महीने पहले पूर्व सांसद ब्रिगेडियर सुधीर सावंत ने पूर्व सैनिक फेडरेशन, मुम्बई की तरफ से जारी एक ज्ञापन के माध्यम से माँग की थी कि वेब सीरीज को केन्द्रीय फिल्म प्रमाणन बोर्ड के दायरे में लाया जाय एवं केंद्र सरकार इस हेतु जल्द कानून बनाए | ओटीटी वीडियो स्ट्रीमिंग सेवाओं में वयस्क सामग्री की तेजी से होती भरमार ने केंद्र सरकार को भी सतर्क कर दिया है | सूचना और प्रसारण मंत्रालय ने इन ओटीटी सेवा प्रदात्ताओं को अपने प्लेटफार्म पर वयस्क मनोरंजन और राजनीतिक रूप से संवेदनशील सामग्री विनियमित करने की बात कही है | हालाँकि ओटीटी प्लेटफार्म से जुड़े व्यक्ति इस पर किसी प्रकार का प्रतिबन्ध नहीं चाहते हैं | इस सन्दर्भ में एमएक्स प्लेयर के सीईओ करण बेदी (बेदी, 2020) का मानना है कि ओटीटी मीडिया प्लेटफार्म, कंटेंट की प्रकृति और इसके लिए आवश्यक प्रतिबंधों की प्रकृति का निर्धारण करने के लिए खुद ही अच्छी स्थिति में हैं | इसके लिए अलग से कोई परिषद बनाने की जरूरत नहीं है | ओटीटी प्लेटफार्म में सेंसरशिप न होने की वजह से फ़िल्मकार धड़ल्ले से

अपनी फ़िल्में और वेब सीरीज यहाँ प्रदर्शित करते हैं | हॉलीवुड से लेकर हिन्दी सिनेमा की काफी ऐसी फिल्मों को भी यहाँ पर जगह मिली है जिसपर आमतौर पर सेंसरशिप की कैंची चल जाती है | पिछले दिनों संसदीय समिति के सामने पक्ष एवं विपक्ष ने अपनी राय रखा, ऐसे में सरकार जल्द ही इस प्लेटफार्म का दायरा निर्धारित कर सकती है |

तथ्य विश्लेषण एवं परिणाम- - वेब सीरीज वर्तमान समय में युवा वर्ग के लिए मनोरंजन का एक प्रमुख माध्यम बन चुकी है | सस्ता इन्टरनेट डेटा, स्मार्टफोन की उपलब्धता एवं बेहद कम दर के साथ ओटीटी प्लेटफार्म की उपलब्धता के साथ ही वेब सीरीज, शहरी क्षेत्र में रह रहे इन्टरनेट उपभोक्ताओं को आकर्षित कर रही है। इसकी लोकप्रियता में कोरोनाकाल से उपजी परिस्थिति भी एक कारक नजर आती है | प्राथमिक तथ्यों का विश्लेषण निम्नवत है-

उत्तरदाता	पुरुष	महिला
संख्या	138	102
अध्ययनरत	98	81
नौकरी	40	21
18-24 वर्ष से कम आयु	85	66
24 से 32 वर्ष आयु	53	36

स्रोत प्राथमिक

लगभग 66% उत्तरदाता वेब सीरीज देखने के लिए प्रायः स्मार्टफोन का प्रयोग करते हैं जबकि 32% उत्तरदाता इसके लिए लैपटॉप अथवा टैब का उपयोग करते हैं | वेब सीरीज देखने के लिए स्मार्ट टीवी अथवा डेस्कटॉप का उपयोग बेहद ही कम उत्तरदाता करते हैं, वह भी कभी-कभार ही | इससे स्पष्ट है कि अधिकांश उत्तरदाता वेब सीरीज देखने के लिए अपने फ़ोन का उपयोग करते हैं | 87% उत्तरदाताओं ने माना कि उनके पास ओटीटी प्लेटफार्म सम्बन्धित सबस्क्रिप्शन उपलब्ध है | हालाँकि इनमें से 40% उत्तरदाताओं ने यह सब्सक्रिप्शन पिछले एक वर्ष में लिया है |

लगभग 71% उत्तरदाता वेब सीरीज को अकेले में देखना पसन्द करते हैं जबकि 18% उत्तरदाता अपने खास दोस्त अथवा जीवन साथी के साथ ही वेब सीरीज देखना पसन्द करते हैं | केवल 7% उत्तरदाता ही परिवार के अन्य सदस्यों के साथ वेब सीरीज देखने की बात स्वीकार करते हैं | वहीं अन्य उत्तरदाताओं ने इस सन्दर्भ में उत्तर देने में असमर्थता जताई | इससे स्पष्ट है कि सर्वाधिक उत्तरदाता वेब सीरीज देखते समय किसी का साथ पसन्द नहीं करते | हालाँकि कुछ उत्तरदाता किसी ख़ास के साथ ही ऐसी सामग्री का अवलोकन करते हैं | इसके पीछे इन उत्तरदाताओं का तर्क है कि वेब सीरीज में अक्सर ही बोल्ड दृश्य समाहित

होते हैं जिन्हें परिवार के साथ नहीं देखा जा सकता है|

83% उत्तरदाता मानते हैं कि ज्यादातर वेब सीरीज में अमर्यादित भाषा, हिंसक एवं बोल्ड दृश्य होते हैं जबकि अन्य उत्तरदाता तटस्थ नजर आते हैं | कोई भी उत्तरदाता वेब सीरीज के विषयवस्तु में वयस्क सामग्री से मना नहीं करता | हालाँकि 78% उत्तरदाता वेब सीरीज की विषयसामग्री पर किसी प्रकार की सरकारी कांट-छाँट को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता में दखल मानते हैं जबकि अन्य का मानना है कि सरकार इसके लिए सेंसर बोर्ड जैसी संस्था बना सकती है | इससे स्पष्ट है कि युवा उपभोक्ता इस प्लेटफार्म पर सरकारी हस्तक्षेप नहीं चाहते हैं | 87% युवाओं का मानना है कि कोविड-19 के बाद उन्होंने अधिक संख्या में वेब सीरीज देखी | 64% उत्तरदाताओं ने माना कि इस दौरान उन्होंने 6 या उससे ज्यादा वेब सीरीज देखी जबकि 5 वेब सीरीज देखने वाले उत्तरदाताओं की संख्या 84% थी | इससे स्पष्ट होता है कि कोरोनाकाल में युवाओं ने मनोरंजन के लिए ओटीटी प्लेटफार्म की तरफ रूख किया है|

53% उत्तरदाता वेब सीरीज को प्रायः रात के समय देखना पसन्द करते हैं | हालाँकि समय मिलने पर वेब सीरीज देखने वाले उत्तरदाताओं की संख्या 43% है | लगभग 73% युवा वेब सीरीज का टीजर अथवा विज्ञापन देखने के बाद उसे देखने की उत्सुकता की बात स्वीकारते हैं जबकि अन्य उत्तरदाता प्लेटफार्म पर उपलब्ध ऐसे विषय से जुड़ने की बात करते हैं | लगभग 48% उत्तरदाता मानते हैं कि उन्होंने कुछ प्रमुख वेब सीरीज को प्लेटफार्म पर उपलब्धता के 24 घंटे के अन्दर ही उसे देख लिया था जबकि एक सप्ताह के अन्दर ही वेब सीरीज देखने वाले उत्तरदाताओं की संख्या लगभग 81% थी | शेष उत्तरदाता अपने खाली समय में वेब सीरीज देखने की बात स्वीकार करते हैं | 78% उत्तरदाता पसन्दीदा वेब सीरीज के अन्य एपिसोड एवं अगले सीजन के इन्तजार की बात स्वीकारते हैं अर्थात वह वेब सीरीज के अगले भाग के लिए भी इन्तजार करते हैं | इससे स्पष्ट होता है कि ज्यादातर उत्तरदाता वेब सीरीज के सभी भाग को देखना पसन्द करते हैं|

74% युवा वेब सीरीज को मनोरंजन का एक प्रमुख माध्यम मानते हैं एवं इसे बड़े पर्दे के विकल्प के रूप में देखते हैं | 39% उत्तरदाता मानते हैं कि वेब सीरीज ने उनकी जीवन शैली पर प्रभाव डाला है जबकि 52% उत्तरदाता ऐसे किसी भी प्रभाव से इन्कार करते हैं | शेष उत्तरदाता तटस्थ नजर आते हैं एवं हाँ अथवा ना के प्रति उदासीन हैं | एक तिहाई उत्तरदाता यह स्वीकार करते हैं कि वेब सीरीज में उठाए गये मुद्दे अथवा विषयवस्तु ने विषय सापेक्ष उनकी समझ को प्रभावित किया है|

निष्कर्ष

मनोरंजन की दुनिया में वेब-सीरीज भले ही नई विधा हो परन्तु जिस तेजी से यह विधा लोगों के मध्य लोकप्रिय हो रही है, आने वाले दिनों में बड़े पर्दे का सिनेमा हो या फिर टेलीविजन की दुनिया में वर्षों से राज करने वाले सोप ओपेरा, मनोरंजन परिदृश्य में बदलाव सुनिश्चित है | युवा उपभोक्ता तेजी से ओटीटी प्लेटफार्म की तरफ कदम बढ़ा रहा है, विशेष तौर पर कोरोनाकाल के बाद की परिस्थिति ने युवा वर्ग को वेब सीरीज की तरफ आकर्षित करने का कार्य किया है | सिनेमा हाल बन्द होने की वजह से भी युवाओं ने वेब सीरीज की तरफ प्रमुखता से कदम बढ़ाया है | आज का युवा काफी जागरूक है और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को लेकर उसका नजरिया बिल्कुल अलग है | वह आधुनिक समाज का अनिवार्य घटक है | युवा वर्ग न सिर्फ भारतीय वेब सीरीज देखता है अपितु वह अन्य देशों में निर्मित ऐसी सामग्री का भी उपभोक्ता है | इन्टरनेट के इस युग में उसे पता है कि इन्टरनेट पर हर प्रकार की सामग्री उपलब्ध है, अतः उसे यह निर्णय लेने की स्वतंत्रता होनी चाहिए कि वह अपने मनोरंजन के लिए किस प्रकार की सामग्री चुनता है | उसका तर्क है कि बन्द कमरे में वह क्या देखता है? का निर्णय लेने का हक उसका होना चाहिए न कि सरकार का |

युवा यह भी तर्क देते हैं कि अधिकांश ओटीटी प्लेटफार्म प्रस्तुत सामग्री के साथ ही उसके उपभोग की न्यूनतम आयु सीमा भी देते हैं, साथ ही इन प्लेटफार्म पर चाइल्ड लॉक जैसी सुविधा भी उपलब्ध है | ऐसे में वेब सीरीज की विषयवस्तु सेंसर जैसी प्रणाली से मुक्त होनी चाहिए |

इन्टरनेट जैसी प्रणाली पर आधारित मनोरंजन की यह विधा युवाओं को इसलिए भी पसन्द आ रही है क्योंकि वह अपनी सुविधानुसार इसे देख सकता है एवं वेब सीरीज देखने के लिए वह घर में उपलब्ध टीवी सेट पर निर्भर नहीं है | वह अपनी इच्छानुसार देर रात भी इसे देख सकता है एवं इससे घर के अन्य सदस्यों को भी परेशानी नहीं होती है | युवा उपभोक्ता वेब सीरीज की सामग्री को घर के अन्य सदस्यों के साथ देखने के अनुकूल नहीं मानता है | ऐसे में सेक्स एवं हिंसा से भरपूर वेब सीरीज के मनोवैज्ञानिक प्रभाव से इन्कार नहीं किया जा सकता है | चूँकि इन्टरनेट पर सबसे ज्यादा उपलब्धता युवा वर्ग की ही है एवं ऐसा माना जाता है कि युवा वर्ग नवाचारों के प्रति तेजी से आकर्षित होता है एवं उसे तेजी से अपनाता है | यही कारण है कि कोरोना काल में जब सिनेमा घर बंद रहे, युवाओं ने ओटीटी प्लेटफार्म पर अधिक समय बिताया | ओटीटी सेवा प्रदान करने वाली कम्पनियों ने भी इस दौरान नये ग्राहकों को लुभाने के लिए कई आकर्षक प्लान पेश किया जिसके फलस्वरूप बेहद कम दामों में ही ओटीटी प्लेटफार्म के सबस्क्रिप्शन मिलने लगे | फोन रिचार्ज के साथ प्रस्तुत ऑफर निश्चित तौर पर युवा ग्राहकों को लुभाने में सफल रहे, वहीं डिजिटल एवं अन्य प्लेटफार्म पर वेब

सीरीज के टीजर ने युवाओं को अपने तरफ खींचने का कार्य किया | निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि इन्टरनेट उपभोक्ता युवाओं में वेब सीरीज तेजी से लोकप्रिय हो रही है | वेब सीरीज में दिखाए बोल्ड दृश्य को अधिसंख्य युवा पसन्द करते हैं और इसे बुरा नहीं मानते हैं | हालाँकि अभी इसके व्यापक प्रभाव को साफ तौर पर स्पष्ट नहीं किया जा सकता है |

संदर्भ सूची

राइज ऑफ़ पेड सब्सक्राइबर्स. (2021, जनवरी 18). फाइनेंसियल एक्सप्रेस डॉट कॉम

आईबीइएफ डॉट ओआरजी/ब्लॉग्स/इण्डिया-ओटीटी-मार्केट-विटनेसिंग अ राइज इन नंबर ऑफ़ पेड सब्सक्राइबर्स से 18 फरवरी, 2021 को पुनः प्राप्त

मनीलाइफ डॉट इन/आर्टिकल/ओटीटी-वेबसीरीज गोइंग ओवर द टॉप विथ बजट आइडियाज एंड स्केल से 18 फरवरी 2021 को पुनः प्राप्त

हिन्दी डॉट गोन्यूज़इण्डिया डॉट कॉम/लेटेस्ट-न्यूज़/एंटरटेनमेंट/इण्डिया टू हैव 500 मिलियन ऑनलाइन वीडियो सब्सक्राइबर्स बाई 2023

सेलेक्ट्रा डॉट इन/ब्लॉग/लिस्ट-ऑफ़-ओटीटी-प्लेटफॉर्म्स-इण्डिया

आईएएमएआई डॉट इन

इकोनॉमिकटाइम्स डॉट इण्डियाटाइम्स डॉट कॉम/हिन्दी/न्यूज़/मोबाइल-डाटा-बिकम्स-चीपर. 19 फ़रवरी, 2021 को पुनः प्राप्त

करेंट अफेयर्स, मई 2020

सिंह, परमवीर. (2019). न्यू मीडिया एज ए चेंज एजेंट ऑफ़ इंडियन टेलीविजन एंड सिनेमा : ए स्टडी ऑफ़ ओवर द टॉप प्लेटफॉर्म्स. जर्नल ऑफ़ कंटेंट, कम्युनिटी एंड कम्युनिकेशन, 9 (1).

शुक्ला, मनीषा एंड वाघमोरे मनीषा. (2019). ए स्टडी ऑफ़ यूथ इंगेजमेंट इन वाचिंग वेब सीरीज. बी वी आई एम एस आर जर्नल ऑफ़ मैनेजमेंट रिसर्च, 2 (2).

अहूजा, राहुल. (2020). ए स्टडी ऑफ़ इफेक्ट्स ऑफ़ वेब सीरीज एंड स्ट्रीमिंग कंटेंट ओं इंडियन यूथ. इंटरनेशनल जर्नल ऑफ़ क्रिएटिव रिसर्च थॉट्स. 8 (9).

तांडव पर विवाद से जो प्रश्न उठे हैं उनका अभी तक कोई जवाब नहीं. (2021, जनवरी, 24). जागरण डॉट कॉम

देल्ही क्राइम्स बिकम्स इण्डिया'ज फर्स्ट वेबसीरीज टू विन इंटरनेशनल अवार्ड. (2020, नवम्बर, 24). बिज़नस स्टैण्डर्ड डॉट कॉम

'आश्रम', 'पाताल लोक' समेत इन पाँच वेब सीरीजों पर जमकर हुए बवाल. (2021, जनवरी, 1). जागरण डॉट कॉम

वेब सीरीज पर नजर रखने की सरकार की पहल पर हंगामा, ओटीटी सेवा प्रदाता दो धड़ों में बंटे. (2020, मार्च, 3). अमरउजाला डॉट कॉम

भारतीय संचार: संस्कार, संस्कृति और भाषा से समृद्धि

डॉ. योगेश कुमार गुप्ता*

सारांश

संचार संबंधी भारतीय अवधारणा प्राचीन समय से ही रोचक और दिलचस्प रही है। हालांकि आधुनिक संकल्पना में अंतर्राष्ट्रीय संचार एवं संवाद की बात जोर-जोर से की जाती है जो भारतीय चेतना और स्मृति में गहरी और व्यापक है। भारतीय जीवन में ज्ञान की उपलब्धता कई मायनों में अतुलनीय है। भारतीय संस्कृति, संस्कार, भाषा और इसके ज्ञान ने हमेशा से ही विश्व को मानव कल्याण के लिए प्रेरित किया है।

भारतीय वेद, धर्म, संस्कार, ज्ञान, विधा और विचारधाराएं प्राचीन भारतीय सभ्यता और संस्कृति के विकास का इतिहास-धर्मों के विकास और उनके स्वरूपों के प्रत्यक्ष में आने की एक गहरी परंपरा का इतिहास हैं। संस्कृति निर्माण की प्रक्रिया में भाषा की भी उतनी ही भूमिका रही है, जितनी संचार माध्यमों की बल्कि संचार माध्यम ही अब यह तय करने लगे हैं कि किसी भाषा का कलेवर क्या होगा? प्रस्तुत शोध-पत्र भारतीय संचार, संस्कार, संस्कृति और भाषा के नाभि-नाल संबंध को दर्शाता है। प्रस्तुत शोध पत्र में संचार माध्यमों की दशा व दिशा, भाषा, संस्कार की वजह से विकसित हो रही नई संस्कृति का विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

बीज शब्द - संचार, संस्कार, संस्कृति, भाषा

प्रस्तावना

ईश्वर ने सृष्टि के सभी तत्वों का समावेश मानव की कृति में किया है। मनुष्य ईश्वर की सर्वश्रेष्ठ कृति एवं अभिव्यक्ति है। मानव जीवन में संचार की प्रक्रिया जन्म से ही प्रारंभ हो जाती है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और सामाजिक जीवन में संचार अत्यधिक महत्वपूर्ण है। संचार के व्यापक सूत्र प्राचीन संस्कृतियों से लेकर वर्तमान सामाजिक परिवेश में अपनी परिभाषा बदलते रहे हैं। वर्तमान परिस्थिति पर नजर डाली जाए तो ईश्वर की यह सुंदर कृति 'मानव' की स्थिति आज क्या है? इसे समझना बहुत मुश्किल है, क्योंकि एक ओर तो हम संपूर्ण मानवता की दुहाई देते हैं और वहीं दूसरी ओर मानव का निजी स्वार्थ और अहंकार है। संपूर्ण मानवता की भलाई के लिए आवश्यकता है कि हम संपूर्ण मानव के ज्ञान और उपलब्धियों को साथ लेकर आगे बढ़ें (परमार, 2015)। ज्ञान का विकास,मनुष्य की उत्कृष्टता, सभ्यता का विकास, मानव को सभ्य बनाने के लिए किया गया प्रयास संचार है। मनुष्य का परिष्कार, समाज निर्माण, समाज उत्थान, पुनर्जागरण, मूल्यों की स्थापना, ज्ञान

* लेखक नव मीडिया विभाग, हिमाचल प्रदेश केन्द्रीय विश्वविद्यालय, धर्मशाला में सहायक प्राध्यापक हैं।

का विकास, विज्ञान का विकास, मिशन के लिए किया गया संवाद संचार है। संचार में मूल्यों की स्थापना के लिए संवाद की प्रक्रिया है। मानवीय मूल्यों, सामाजिक मूल्यों, नैतिक मूल्यों की स्थापना के लिए संवाद का होना जरूरी है। व्यक्ति और समाज को उत्कृष्ट बनाने की प्रक्रिया संचार है। भारतीय जीवन दृष्टि में संचार को माध्यम बनाकर समाज में फैली विषमता और भेदभाव को समाप्त करने की एक सार्थक पहल की गयी है और समाज के सभी वर्गों को एक माला में पिरोने का कार्य किया गया है। वेदों का गहन अध्ययन कर उन्हें सरल बनाने का प्रयास किया गया ताकि वेद जनमानस के लिए व्यवहारिक हो सकें। 'वसुधैव कुटुंबकम' के दर्शन के माध्यम से संपूर्ण विश्व को एक परिवार के रूप में मानना, सभी प्राणियों में प्रभु का वास मानकर सब के साथ एक सा व्यवहार एकात्मवाद का प्रमुख उद्देश्य था (पटेल ,2020)।

संचार और सूचना क्रांति ने विश्व मानवता को 'विश्वग्राम' में बदल दिया है। तकनीकी क्रांति ने समाज, संस्कृति, जन और राष्ट्र को गहरे तक प्रभावित किया है। नागरिक और राष्ट्र के जीवन में प्रत्येक क्षेत्र में नई-नई संरचनाओं और अवधारणाओं का उदय हो रहा है। इस परिप्रेक्ष्य में संचार और भारतीय संस्कृति के अंतर्संबंधों को समझने की आवश्यकता है। हमेशा से समाज की विकास यात्रा में संचार, संस्कार, संस्कृति और भाषा निरंतर सहयात्री रहे हैं। इनकी गतियों में भिन्नता जरूर रहती है लेकिन यह यात्री एक दूसरे के पूरक भी होते हैं और एक दूसरे की पहचान को अपने-अपने प्रकार से प्रतिबिंबित भी करते हैं। सारांश में यह अविभाज्य हैं। राष्ट्र-राज्य के निर्माण में संचार, संस्कृति और भाषा ने नि:संदेह ऐतिहासिक भूमिका निभाई है। यद्यपि भूमंडलीकरण के दौर में बहुत कुछ तेजी से बदलता जा रहा है। यूनेस्को के अनुसार निर्बल और पिछड़े समाजों की संस्कृति और भाषाएं लुप्त होती जा रही हैं। संचार, संस्कृति और भाषा के नए समीकरण बन रहे हैं। सभी को बाजार से जोड़ा जा रहा है (जोशी ,2015)।

21वीं सदी का प्रारंभ सूचना और संचार माध्यमों में क्रांतिकारी परिवर्तन से हुआ, जो दशक की समाप्ति के बाद सर्वव्यापी हो गया। इस तथ्य में तनिक अतिश्योक्ति नहीं है कि संचार माध्यम के विकसित होने से ही सूचनाएं सुदूर पलक झपकते ही पहुंच रही हैं। मानवीय मूल्यों की दृष्टि से देखें तो हमारे संस्कार, शिष्टाचार धीरे-धीरे मिट रहे हैं। एक लाइक करके सूचनाओं को अग्रसारित और शेयर करके युवा वर्ग अपने शिष्टाचार से विमुख हो रहा है। ऐसे में अपने संस्कारों को संरक्षित करने और सही-गलत की पहचान करने वाली समझ विकसित कर अपने नैतिक मूल्यों को संवर्धित करने की आवश्यकता है ताकि विकसित तकनीकी ज्ञान को बुद्धिमतापूर्ण ढंग से अपनाकर देश की संस्कृति और तकनीक दोनों को पुष्पित व पल्लवित किया जा सके (जागरण,2016)।

बाजार आज हमारे जीवन का अभिन्न अंग है। दरअसल हमारा समाज और

बाजार एक दूसरे से जुड़े हैं। विश्व बाजार के सांस्कृतिक पहलुओं को भारतीय समाज की अंदरूनी तहों में प्रवेश कराने में संस्कारों की विशिष्ट भूमिका बन गई है। 21वीं सदी में निश्चय ही हम एक अधिक सघन बहुसांस्कृतिक परिवेश में रहते हैं, जहां संस्कृतियां एक दूसरे से घुल-मिल रही हैं। तेजी से भागती दुनिया में थोड़ा ठहरकर सोचना होगा कि यह सांस्कृतिक सम्मिश्रण है या सांस्कृतिक आत्मविसर्जन। हमें निश्चय ही दोनों में फर्क करना होगा। सांस्कृतिक आत्मविसर्जन का विरोध करना है और सांस्कृतिक विविधता और सम्मिश्रण के पक्ष में खड़ा होना है। निश्चय ही आज के आधुनिक जीवन का असली उद्देश्य सांस्कृतिक जड़ों से विच्छिन्न होना कहीं से भी इस जीवन के हित में नहीं है (कुमावत:,www.rsaudoi.org.)।

भारतीय जीवन दृष्टि एवं संचार माध्यम

कोई भी वैज्ञानिक आविष्कार हो या दार्शनिक विचार उनकी सफलता इस बात में निहित है कि यह कितनी अच्छी तरह से समाज तक पहुंचता है। ग्रीक दार्शनिक अरस्तू ने कहा था, 'सद्गुणी व्यक्ति ही प्रभावी संचारक हो सकता है'। प्रभावी या महान संचारक वही है जो अपने कार्य विचार या चेतना से समाज में परिवर्तन का वाहक बने। अरस्तु के अनुसार ऐसे व्यक्ति का सद्गुणी होना आवश्यक है। तात्पर्य यह कि समाज में संचार तो हो लेकिन सद्गुण का, दुर्गुण का नहीं, सत का असत का नहीं, आलोक का तिमिर का नहीं, ज्ञान का अज्ञान का नहीं, विद्या का अविद्या का नहीं। भारत में ज्ञान की धारा सदियों तक गुरु-शिष्य परंपरा के माध्यम से ही प्रवाहित होती रही है और इसका आधार वाचिक ही रहा। इसमें गुरु के मुख से निकले बोल शिष्यों द्वारा कंठस्थ कर लिए जाते थे, तत्पश्चात इसी अनुक्रम में वह अगली पीढ़ी तक संचारित होती थी। ज्ञान के संचार की यह व्यवस्था खुद में अनूठी थी। मुद्रित और दृश्य-श्रव्य माध्यमों के आने पर भी वाचिक परंपरा समाप्त नहीं हुई। हमारे ऋषि-मुनियों ने धर्म और ज्ञान को लेकर जो कुछ भी रचा, वह सदियों तक वाचिक परंपरा से ही सुरक्षित रहा और अग्रसारित भी होता रहा।

संचार का इतिहास मनुष्य के इतिहास से भी पुराना है। प्रकृति के हर स्वरूप में संचार दृष्टिगत है। हम किसी विचार या अनुभूति को स्वयं के अलावा किसी अन्य में बांटते हैं, हम संचार की प्रक्रिया में शामिल हो जाते हैं। अपनी बात अन्यों तक पहुंचाने की इच्छा ही संचार को जन्म देती है। मनुष्य जिस तरह विचारशील प्राणी है उसी तरह वह संचारशील प्राणी भी है। विचार है तो संचार भी उसके साथ जुड़ा है। किसी विचार का मस्तिष्क में आना भी संचरण ही है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि संचार में भाषा, साहित्य, कला, संस्कृति, ज्ञान-विज्ञान, तकनीकी, धर्म, अध्यात्म, दर्शन जैसी अनेक विधाएं मनुष्य की संचार शक्ति की ही उपज हैं। इस दृष्टि से संचार के कारण ही मानव सभ्यता का विकास एवं उसकी प्रगति

हुई है। प्रो. ओमप्रकाश सिंह अपनी पुस्तक 'संचार के मूल तत्व' में लिखते हैं कि "महामानवों का आभ्यंतर संचार ही जनसंचार में परिवर्तित होकर मनुष्य मात्र का दिग्दर्शन करता है। कहा जाता है कि आभ्यंतर संचार के जरिए जनसंचार से जुड़ना समाज की विराटता से जुड़ना है। यही मनुष्य की व्यापक और विराटता का आधार है (उपाध्याय , 2016)।

भारत में संचार माध्यमों की सबसे पहले शुरुआत नारद मुनि से मानी जा सकती है। देवर्षि नारद घूम-घूम कर संवाद-वहन करने वालों में अग्रणी थे । सही मायनों में देवर्षि ने संचार के माध्यम से सामाजिक पुनर्रचना का कार्य किया। देवर्षि ने सूचनाओं का आदान-प्रदान लोक हित को ध्यान में रखकर किया। लोक और जन की दृष्टि से विचार करने पर उनके अंतर्निहित भाव का बोध सहज ही हो जाता है। नारद ने 'वाणी' का प्रयोग किस प्रकार किया, जिससे घटनाओं का सृजन हुआ । नारद द्वारा प्रेरित हर घटना का परिणाम लोकहित में निकला। उनके संवाद में हमेशा लोक कल्याण की भावना रहती थी (पटेल, 2020)।

दिव्य चेतना, असाधारण आत्मबल और दृढ़ इच्छाशक्ति वाले व्यक्ति ही महान संचारक होते हैं, उनके संचार में पूरे विश्व को बदलने की शक्ति और संदेश होता है। उनके शब्दों में सहज, सरल, बोधगम्यता के साथ असाधारण शक्ति, गहन अर्थ और गंभीरता तथा घनीभूत चेतना होती है, जो मानव मात्र को न सिर्फ आंदोलित करती है, बल्कि उसे एक सकारात्मक दिशा देने काम भी करती है। हमारे यहां वेदों में संचार के संदेश तत्व का विस्तृत विवेचन है । ऋग्वेद में एक बुकयम कहने के प्रचार का वर्णन करते हुए कहा गया है कि, "भानुमद्धि: अर्के: सूर्य: न'- अर्थात तेजस्वी किरणों से जिस तरह सूर्य का प्रकाश फैलता है, उसी प्रकार मनुष्य ज्ञान को फैलाएं।" यद्यपि यह ज्ञान सत्य पर आधारित होना चाहिए। संचार के मूल में भी सत्य का संप्रेषण और उसकी जिज्ञासा ही है। व्यक्ति से लेकर समष्टि तक इसका दायरा फैला हुआ है। प्रभावी संचार मानव मात्र को बदलने की क्षमता रखता है। खासकर जब अनुभूति ही विचार रूप में परिणति होती है तो उसकी शक्ति कई गुना बढ़ जाती है (उपाध्याय, 2016)।

भारत में सामाजिक पुनर्रचना में संचार माध्यम

सामाजिक पुनर्रचना के निर्माण में संचार माध्यमों की अहम भूमिका रही है। इसमें कोई दो राय नहीं है कि संचार माध्यम हमेशा से ही सामाजिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक पुनर्रचना में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते आ रहे हैं । यदि किसी विचार, व्यक्ति, राजनीतिक, सांस्कृतिक मूल्यों या संस्कारों को बदलना है, तो संचार के बिना यह कार्य संभव नहीं है। संचार माध्यम समाजीकरण का महत्वपूर्ण माध्यम हैं। समाजीकरण की सभी स्थितियों में संचार माध्यम की अपनी भूमिका होती है । संचार माध्यम परंपरागत मान्यताओं को पुष्ट कर सामाजिक और सांस्कृतिक गतिविधियों पर पैनी दृष्टि रखते हैं ।

संचार माध्यम मनोरंजन और विकास का संदेश देकर संस्कृति के निर्माण में सहायक हैं। संचार माध्यमों का बाहुल्य सांस्कृतिक आदान-प्रदान को तीव्रता प्रदान करता है, जो सांस्कृतिक विकास का सूत्रधार है।

इंटरनेट के हर हाथों में पहुंचने के बाद सोशल मीडिया ने सामाजिक पुनर्रचना के लिए एक अद्भुत संचार माध्यम की भूमिका निभाई है। फेसबुक, ट्विटर और यू-ट्यूब जैसे सोशल मीडिया के मंच अब सिर्फ मनोरंजन का माध्यम नहीं रह गए हैं, बल्कि इन मंचों के जरिए दुनिया भर के लोगों को अपनी बात कहने का मौका मिला है। सोशल मीडिया ने संचार बाधाओं को हटा दिया है और विकेंद्रीकृत संचार चैनल बनाया है और सभी को लोकतांत्रिक फैशन में अपने-अपने तरीके से भाग लेने के लिए दरवाजे खोल दिए हैं। यह मंच एक विस्तृत, विविध, औपचारिक, अनौपचारिक, राजनीति, जाति, स्वास्थ्य, रिश्ते आदि जैसे कई मुद्दों पर टिप्पणीकारों की एक विस्तृत श्रृंखला के साथ रचनात्मकता और सहयोग को बढ़ावा भी देता है। सोशल मीडिया से हमें अंतरराष्ट्रीय सीमाओं और सांस्कृतिक अवरोधों को तोड़ने की इजाजत मिलती है (पटेल, 2020)।

भारतीय संस्कार

भारतीय समाज संस्कारों का समाज है जो कि संस्कृति के झरोखे से दिखलाई देता है। भारतीय समाज में मानव जीवन आध्यात्मिकता से लेकर भौतिकवाद के मध्य समन्वय स्थापित करने की कड़ी मानी जाती है। यह संस्कार मानव जीवन में मनुष्य को अनेक उत्तरदायित्वों से जोड़ते हैं क्योंकि संस्कारों को धर्म एवं संस्कृति से जोड़कर ही सामाजिक एकता का प्रादुर्भाव संभव हो सकता है। इस वैचारिक परिप्रेक्ष्य में यह भी स्पष्ट किया गया है कि मानव की जिज्ञासु प्रवृत्ति अलौकिकता के वशीभूत होती है, जिसे समाज की धर्म व्यवस्था में एक विशेष स्थान प्राप्त है, वह इसलिए क्योंकि मनुष्य इन संस्कारों के द्वारा विशेष अवसरों के रूप में सामाजिक कर्तव्यों का निर्वहन करता है। संसार के किसी भी धर्म एवं संस्कृति को ले लीजिए, उसमें सामाजिक एकता को स्थापित करने के गुण होते ही हैं, जोकि विभिन्न संस्कारों की सहायता से मानव जीवन-दर्शन का न केवल बोध कराते हैं बल्कि नैतिक मूल्यों को भी स्थापित करते हैं।

संसार की कोई भी संस्कृति अपनी प्राचीनता के कारण भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। जीवन में संस्कारों की महत्वपूर्ण भूमिका है। संस्कारों के द्वारा मनुष्य अपनी सहज प्रवृत्तियों का पूर्ण विकास करके अपना और समाज दोनों का कल्याण करता है। हमारे मनीषियों ने हमें सुसंस्कृत तथा सामाजिक बनाने के लिए अपने अथक प्रयासों और शोधों के बल पर यह संस्कार स्थापित किए थे, इसके पीछे ऐसी मान्यता है कि यह संस्कार इस जीवन में ही मनुष्य को पवित्र नहीं करते बल्कि उसके पारलौकिक जीवन को भी पवित्र बनाते हैं।

व्यक्ति जिस देश, समाज और परिवार में जन्म लेता है, उसी के अनुरूप व्यक्ति के जीवन में संस्कारों का बीजारोपण होना चाहिए। संस्कार अपने आप में अमूर्त होते हैं। यह व्यक्ति के आचरण से छलकते हैं। चरित्र निर्माण में धर्म और संस्कार महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। सहिष्णुता, समन्वय की भावना, गौरवशाली इतिहास, संस्कार, रीति-रिवाज और उच्च आदर्शों के कारण भारतीय संस्कृति और संस्कार सर्वश्रेष्ठ विवेक हैं। विवेक और ज्ञान भारतीय संस्कारों की आत्म-भावना है। वर्तमान में व्यक्ति की बढ़ती जटिलताओं, मानसिक अशांति आदि का समाधान भारत की इस सत्य सनातन संस्कृति और संस्कारों में निहित है। किसी अज्ञात नामा मनस्वी के अनुसार, "मेरा आचरण मेरे कुल की संस्कृति को प्रकट करता है, मेरी भाषा मेरे देश की वाणी है, दूसरों के साथ सम्मान पूर्वक व्यवहार मेरे प्रेम का घोतक है, मेरे स्वस्थ शरीर की संरचना मेरे संतुलित भोजन का सूचक है। यह चारों गुण एक संस्कारवान व्यक्ति के नैतिक मूल्य हैं" (आर्य, 2018)।

भारतीय संस्कृति

मानव संस्कृति का संबंध ज्ञान, कर्म तथा रचना से है। इसका संवर्धन निरंतर बना रहे, इसलिए संस्कृति का संस्कार संपन्न होना अति आवश्यक होता है। भारतीय संस्कृति वैश्विक संस्कृतियों का मूल आधार है। हम पृथ्वी पर जीवन की उत्पत्ति के इतिहास को पढ़ते और सुनते रहे हैं। जहां इस ग्रह पर करोड़ों वर्षों से जीवन के चिरस्थाई बने रहने की आधारशिला सृजन है, तो उसे अनवरत जारी रखने का स्तंभ उनकी संस्कृति है। जीवों के जीवन जीने की कला और कौशल ही, उसकी संस्कृति के नाम पर प्रचलित होती चली गई, जो जीवन के प्रति उनके समझ और संचित ज्ञान का कोष है। संस्कृति को परिभाषित करना अथवा संस्कृति के विषय में कुछ कहना स्वयं में एक जटिल कार्य है और जब बात भारतीय संस्कृति के विषय में हो तो वह अपनी विषमताओं को समेटे हुए निःसंदेह अद्भुत है।

ऐसी संस्कृति जिसके अनगिनत शब्द और उनके शब्दार्थ न केवल उसकी श्रेष्ठता के प्रमाण हैं, बल्कि उसकी व्याख्या भी करते हैं और उस संस्कृति का नाम सनातन अर्थात सदा बने रहने वाला आदिकाल से अनंत काल तक शाश्वत है। उसी सनातन के यह शब्द संस्कृति, संस्कार, संस्कृत और संचार इनके गहरे शब्दार्थ बहुत कुछ कहते हुए दिखते हैं। यह चारों शब्द आपस में जुड़े भी हुए हैं। भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीन और सर्वश्रेष्ठ संस्कृति है, जिसका मूल लक्ष्य शांति, सहिष्णुता, एकता, सत्य, अहिंसा और सदाचार जैसे मूल तत्व हैं। भारतीय संस्कृति परिवर्तनशील रही है। संस्कृति में कई उतार-चढ़ाव आए, कितनी ही संस्कृतियों का समागम हुआ, भारतीय संस्कृति इन सबका समन्वय कर चलती रही और कभी विलुप्त नहीं हुई।

भारतीय संस्कृति की सबसे बड़ी विशेषता इसकी निरंतरता, ग्रहणशीलता,

समन्वय, धार्मिक सहिष्णुता, सार्वभौमिकता एवं वसुधैवकुटुंबकम जैसे तत्व उसकी उत्कृष्ट विशेषताओं को परिलक्षित करते हैं। भारतीय संस्कृति के संचित ज्ञान कोष से विश्व को अनेकों सांस्कृतिक, साहित्यिक और वैज्ञानिक रचनाएं प्रदान की हैं। इन रचनाओं में 'आर्यभट्ट' द्वारा शून्य का आविष्कार, 'चरक' द्वारा आयुर्वेद की खोज, प्राचीन भाषा संस्कृत, योग, अध्यात्म आदि अनेकों सृजन हैं। भारतीय संस्कृति की रचनाओं ने विश्व पटल पर न सिर्फ अपनी अमिट छाप अंकित की है, बल्कि विश्व इन रचनाओं का पथ- प्रदर्शक स्वरूप अनुकरण कर इन्हें अपने जीवन में अपना रहे हैं। भारतवर्ष का इतिहास उसके वर्तमान से अदृश्य रूप से जुड़ा हुआ है। इसकी संस्कृति की जड़ें इतनी मजबूत और गहरी हैं कि समय का प्रवाह और आधुनिकता का प्रहार उसे समाप्त नहीं कर सका। भारतीय संस्कृति की सबसे बड़ी विशेषता इसकी निरंतरता और चिरस्थायिता है।

संस्कृति की निरंतरता और चिरस्थायिता को वर्तमान संदर्भ में देखें तो आज भी यह उतना ही विभूषित है, जितना सनातन काल में। भारतीय संस्कृति से उत्सर्जित 'वसुधैव कुटुंबकम' से हमने समस्त विश्व को जहां नजदीक लाकर एक बना दिया, वहीं 'अतिथि देवो भव:' की भावना से परायों को भी अपना बना लिया। हमारे वेदों ने भी इसका वर्णन किया है कि 'सा संस्कृति प्रार्थना विश्ववारा' जिसका अर्थ यह है कि संस्कृति संपूर्ण विश्व के कल्याण के लिए है। इस उत्कृष्ट भावना का ही प्रतिफल है कि जहां एक ओर अन्य समकालीन संस्कृतियां काल के गर्त में समा गईं, वहीं भारतीय संस्कृति वर्तमान में भी जीवंत है। हमारी संस्कृति आज भी विश्व के समक्ष आदर्श प्रस्तुत कर संपूर्ण भारतीय जनमानस को गौरवान्वित कर रही है।

इतनी विभिन्नताओं के बावजूद भारत अनेकता में एकता के सूत्र से बंधा ऐसा देश है जो अपने हर राज्य और हर प्रांत के निवासियों को सदियों से एक सूत्र में पिरोता आया है। संस्कृति, मानव जीवन की विधि या विधान का दूसरा नाम है। संस्कृति को विभिन्न विद्वानों ने अपने-अपने ढंग से परिभाषित किया है, परंतु कोई भी सर्वमान्य परिभाषा नहीं मिल पाई है बावजूद इसके एक बात जो मूल में है वह यह है कि मानव समूह के आंतरिक व बाह्य जीवन को एवं मानव की शारीरिक, मानसिक शक्तियों को संस्कारवान, विकसित और सुंदर बनाने की प्रक्रिया को संस्कृति कहा जा सकता है, जिसमें वह जीवन-यापन की परंपरा प्राप्त कर संस्कारित, सुदृढ़, प्रौढ़ और विकसित बनता है। भारतीय संस्कृति में अद्भुत शक्ति है। यह प्रतिकूल परिस्थितियों को अपने अनुकूल बना लेती है। विचारों में अनंत मतभेद होने के बावजूद समानता को स्वीकार करता है। ऋग्वेद में इस संदर्भ का वर्णन करते हुए लिखा गया है कि, 'समान मंत्र, समान समिति, समान मन, सबकी प्रेरणा, समान सबके हृदय, समान सब की स्थिति।' भगवत गीता में समन्वय की बात कही गई है, गौतम बुद्ध ने भी समन्वय की

अवधारणा पर बल दिया है। हमारी संस्कृति भी यही दर्शाती है कि परस्पर प्रेम, सहानुभूति और एकत्व को स्थापित करके जीवन का श्रेष्ठ मार्ग प्राप्त किया जा सकता है। सैकड़ों वर्षो की हमारी गुलामी के कालखंडों के परिणामस्वरूप हम कई बार अपनी संस्कृति तथा परंपरा को अस्वीकार करते रहे हैं। यदि विश्व के अन्य देश तथ्यात्मक शोध के आधार पर हमारी परंपरा, संस्कृति को सही ठहराते हैं तो उसे अतिशीघ्र मान लिया जाता है। वर्तमान में हमें संकल्पित होने, भारतवर्ष की प्राचीन ज्ञान परंपराओं को वैज्ञानिक भाषा में संपूर्ण विश्व को समझाने पर जोर देना होगा। राष्ट्र की संस्कृति महज एक संकल्पना नहीं होती है, बल्कि यह एक गौरव की बात होती है, जो हम सभी में एक भारतीय होने के नाते होनी चाहिए। भारतीय संस्कृति और परंपराओं की जो विरासत हमारे हिस्से में आयी है, वह अन्य किसी भी देश को प्राप्त नहीं हुई है। इस विरासत को संभालना, जतन करना और इस पर गर्व करना हमारा परम कर्तव्य है। यह हमारा गौरव है कि हम एक ऐसे देश के नागरिक हैं जहां की संस्कृति एवं परंपरा इतनी प्राचीन और विकसित होने के साथ-साथ विभिन्नताओं से परिपूर्ण है। हमारी विभिन्नताओं और विविधताओं के कारण हम एक साथ विविध संस्कृतियों को अपने देश में ही देख सकते हैं (गुप्ता, 2020)।

ज्ञान-विज्ञान की जननी संस्कृति

संस्कृति को उन्नत बनाने में भाषा श्रेष्ठ माध्यम है। मातृभाषा में अध्ययन से मौलिक विचार उत्पन्न होते हैं। इससे भाषा का शब्द भंडार समृद्ध होता है। बदली हुई परिस्थितियों में मातृभाषा का महत्व और अधिक बढ़ गया है। भाषा में आत्मनिर्भरता से तेज गति से विकास होगा। भाषा के विकास का अध्ययन देश के नागरिकों के विकास के आलोक में होना चाहिए (नई दुनिया, 2020)।

हमारी आत्मा, हमारी अस्मिता, भारत की भारतीयता उसकी संस्कृति में निहित है, जिसका प्राण संस्कृत भाषा है। भारतीय संस्कृति के सभी पक्षों जैसे ऐतिहासिक, आर्थिक, धार्मिक, प्राकृतिक, राजनैतिक तथा कला, ज्ञान-विज्ञान आदि का सूक्ष्म तथा वास्तविक ज्ञान संस्कृत भाषा के माध्यम से ही हो सकता है। संस्कृत भाषा की प्रमुख विशेषता यह है कि वह व्यष्टि से समष्टि को तथा परमेष्टि को जोड़ती है। उसकी प्रत्येक प्रार्थना में विश्व बंधुत्व की भावना व्याप्त है। जो विपुल ज्ञान भंडार संस्कृत में है, उसे देश की प्रगति और मानवता के लिए उपयोग में लाया जा सकता है। पंडित नेहरू ने, 'डिस्कवरी ऑफ इंडिया' में लिखा है कि "यदि कोई मुझसे पूछता है कि भारत के पास बहुमूल्य खजाना क्या है और इसके पास सबसे बड़ी धरोहर क्या है तो मैं बेहिचक कह सकता हूं कि वह खजाना 'संस्कृत' भाषा और उसमें निहित समस्त वांग्मय है। यह जब तक सक्रिय रहेगी और हमारे सामाजिक जीवन को प्रभावित करेगी, तब तक भारत का आधारभूत बुद्धिमत्ता बनी रहेगी" (अनुसूया, 2020)।

संस्कृत भाषा के संदर्भ में विद्वानों की यह धारणा सनातन काल से चली आ रही है कि वह सरस और मधुर ध्वनियों के शब्दार्थों से श्रोताओं को आनंद विभोर कर देती है। इसमें अंतर्निहित शक्तियों के कारण इसे देववाणी एवं दिव्य भाषा भी कहा जाता है। परिमार्जित या परिष्कृत भाषा का नाम ही संस्कृत है और विश्व की प्राचीनतम भाषाओं में इसकी गणना मुख्य रूप से की जाती है। भारतीय, विदेशी विद्वान संस्कृत को सभी भाषाओं की जननी मानते हैं, परंतु भाषा वैज्ञानिकों ने संस्कृत, ग्रीक और लैटिन को तीन प्राचीनतम भगिनी भाषाओं के रूप में स्वीकार किया है (आर्य, 2018)।

1835 में मैकाले ने संस्कृत को कालबाह्य और अनुपयोगी भाषा बताते हुए उसकी शिक्षा को समाप्त दिए जाने का फतवा सुनाया था और उसकी नीतियों पर चलते हुए स्वाधीनता के बाद भी संस्कृत की भारतीय सरकारों द्वारा उपेक्षा भी की गई। पिछले डेढ़ सौ वर्षों की लगातार उपेक्षा और समाप्त किए जाने के तमाम प्रयासों के बावजूद संस्कृत एक जीवंत भाषा बनी हुई है। संस्कृत भाषा के महत्व पर शंका करना अपने अस्तित्व पर शंका करने के बराबर है, क्योंकि जब तक मानव है, संस्कृत का महत्व असीम है। संस्कृत भाषा अन्य भाषाओं की तरह केवल अभिव्यक्ति का साधन मात्र ही नहीं है, अपितु वह मनुष्य के संपूर्ण विकास की कुंजी है। संस्कृत केवल स्व-विकसित भाषा नहीं बल्कि संस्कारित भाषा है। मानव जाति के आदि स्रोत ग्रंथ को जानने के लिए संस्कृत का महत्व अनंत है। विश्व का सबसे प्राचीनतम उपलब्ध ग्रंथ 'ऋग्वेद' है। ऋग्वेद की भाषा विश्व के भाषाई अध्ययन में प्राचीनतम एवं महत्वपूर्ण स्थान रखती है। मैक्स मूलर ने इस संबंध में कहा है, "जब तक मानव अपने इतिहास में रुचि लेता रहेगा और जब तक हम अपने पुस्तकालयों तथा संग्रहालयों में प्राचीन युग की स्मृतियों के चिंतन को संजोए रहेंगे, तब तक मानव जाति के अभिलेखों से भरी-पूरी पुस्तकों की पंक्तियों के बीच पहली पुस्तक 'ऋग्वेद' ही रहेगी।" ऋग्वेद में भाषा तत्व के गंभीर सिद्धांत, दार्शनिक चिंतन, भाषा की परिशुद्धता, वैज्ञानिकता तथा सूक्ष्मता को जानना आवश्यक बताया गया है (अनुसूया, 2020)।

संस्कृति, संस्कार और मानव मूल्यों की जननी संस्कृत भाषा है, जिसमें संपूर्ण विश्व की अलौकिक ज्ञान संपदा समाई हुई है। संस्कृत देश की आत्मा है, व्यक्ति को काबिलियत देती है, उसे अपनी राह स्वयं तय करने की क्षमता प्रदान करती है। संस्कृत अध्ययन से असीमित रोजगार की संभावनाएं बनती हैं। संस्कृत जीवकोपार्जन के साथ समाज में सम्मानपूर्ण स्थान दिलाने में सक्षम है। नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति के तहत अब विद्यार्थियों को पहले से तय विषय चुनने की बाध्यता समाप्त कर दी गई है। इस नवाचारी पहल के माध्यम से उच्च शिक्षा के क्षेत्र में संस्कृत भाषा और ज्ञान- संपदा के प्रसार की नई संभावनाओं की तलाश की जानी चाहिए। युवा पीढ़ी संस्कृत भाषा के अध्ययन-अध्यापन से वेदों, शास्त्रों,

दर्शनों, पुराणों तथा काव्य आदि साहित्य में उपलब्ध दुर्लभ ज्ञान- विज्ञान की संपदा प्राप्त कर लाभान्वित होगी। राष्ट्रीय शिक्षा नीति में अनुसंधान संस्कृति तथा अनुसंधान क्षमता को बढ़ावा दिया गया है। गुणवत्तापूर्ण उच्च शिक्षा का नया रास्ता खुला है। इसे संस्कृत भाषा के विस्तार और प्रसार का अभूतपूर्व अवसर बनाया जाना चाहिए। विश्वविद्यालयों को संस्कृत शिक्षा का शीर्ष अंतरराष्ट्रीय केंद्र बनाने की दिशा में प्रयास करना चाहिए। 2014 के बाद देश में राष्ट्रीय विचारों की सरकार के सत्ता में आने के बाद संस्कृत के उत्थान और सम्मान की आस जागृत हुई, जिसका प्रमाण केंद्र सरकार ने देश में एक साथ तीन नए केंद्रीय संस्कृत विश्वविद्यालयों की स्थापना करके दिया है। सरकार संस्कृत को विज्ञान, सूचना तकनीक और संचार से जोड़कर प्रासंगिक व प्रमाणिक बनाने के लिए कृत संकल्पित है। इन प्रयासों से ही संस्कृत भाषा देश में अपनी महत्ता और खोयी प्रतिष्ठा को पुनः अर्जित कर पाएगी। आज भारत में 15 विश्वविद्यालयों और 500 से भी अधिक परंपरागत गुरुकुलों में संस्कृत का अध्ययन-अध्यापन होने के साथ ही जर्मनी, अमेरिका और ब्रिटेन जैसे विकसित देशों में भी संस्कृत भाषा स्नात्तक स्तर पर पढ़ाई जाती है। अमेरिकी अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन, नासा संस्कृत के सभी स्वरों की वैज्ञानिकता और तथ्यात्मकता को स्वीकार कर चुका है।

'संस्कृति' से तात्पर्य उत्तम स्थिति से है। मनुष्य अपनी बुद्धि के प्रयोग से सदैव उन्नति करता आया है। दुर्भाग्य यह रहा है कि हमने राजनीति को सब कुछ मान लिया जबकि 'केवल पथ की साधना और संस्कृति उस पथ का साध्य' है और 'संस्कृत जीवन के वृक्ष का संवर्धन करने वाला रस' है। भारतीय समाज का एक हिस्सा भाषा चिंतन से विमुख है। हिंदी समाज को कई रूपों में जिसमें भाषा प्रमुख है, विभाजित करने की अंग्रेजी ने जो कोशिश की, वह अभी तक जारी है। भाषा विकृत हुई है। भाषा न सिर्फ ज्ञान की संवाहक है, बल्कि देश की उन्नति एवं प्रगति का द्योतक भी है। ऐतिहासिक दृष्टि से देखें तो भारतवर्ष के धर्म, दर्शन, विज्ञान, चिकित्सा आदि विषयों की भाषा संस्कृत ही है। वैश्वीकरण के इस दौर में बाजार ने ही इस कालखंड को बनाया, सजाया-संवारा और जरूरत पड़ने पर उजाड़ा भी। भाषा का वैविध्य भी बाजार को अपनी राह का रोड़ा लगने लगा। बाजार के लिए भाषा सिर्फ एक संचार का माध्यम थी। भाषा के संक्षिप्तीकरण और सूचनापरकता के नाम पर उसमें से अलंकार, कहावत, मुहावरों और अनेकार्थता को धीरे-धीरे समाप्त करने का प्रयत्न हो रहा है, क्योंकि बाजार केवल अपने उत्पाद से जुड़े अर्थ को ही संपोषित करना चाहता है किंतु आज वैश्विक उदारवाद के दौर में सारा विश्व यह स्वीकार कर चुका है कि संस्कृत को धर्म विशेष या राजनीतिक विचारधारा से जोड़ना मूर्खता है। इसे इसकी समृद्ध विरासत के लिए स्वीकार करना चाहिए जो संस्कृत भाषा में ही सन्निहित है। अपनी प्राचीन संस्कृति, समृद्ध ज्ञान परंपरा और अथाह वांग्मय से युक्त संस्कृत भाषा के समवहत रूप में ही भारत 'विश्वगुरु' था।

संस्कृत, वेड, वेदांग, दर्शनशास्त्र, काव्यशास्त्र के अध्ययन से ज्ञान प्राप्त करने और आत्मसात करने की विशुद्ध भाषा है। यदि उनकी वाणी संस्कृत नहीं, यदि दृष्टि संस्कृत नहीं, यदि मन संस्कृत नहीं है, तो संस्कृत पढ़ने का कोई औचित्य नहीं और जीवन में कोई उपलब्धि नहीं होगी।

बेशक संस्कृत की भूमिका संपर्क भाषा के रूप में नहीं है और आधुनिक जीवन शैली में भी कोई भूमिका नहीं है । भारत के संविधान की आठवीं अनुसूची में संस्कृत को भी सम्मिलित किया गया है। कुछ वर्षों से डीडी न्यूज़ द्वारा 'वार्तावली' नाम से संस्कृत कार्यक्रम भी प्रसारित किया जा रहा है, जिसमें हिंदी फिल्मी गीतों के संस्कृतानुवाद, सरल संस्कृत शिक्षण, संस्कृत-वार्ता और महापुरुषों के जीवन-वृत्त संस्कृत में, सुभाषित- रत्नों आदि का प्रसारण हो रहा है।

भारत में एक बड़ा तबका अब भी संस्कृत को धर्म की भाषा के रूप में देखता है, पर ऐसा नहीं है। धार्मिक साहित्य तो संस्कृत वांग्मय का छोटा सा हिस्सा है। हिन्दू, बौद्ध, जैन और सिख धार्मिक रचनाओं में भी संस्कृत की भूमिका है। इस परिप्रेक्ष्य में उसकी भूमिका बहुत व्यापक है । 1947 में स्वतंत्र होने के बाद से भारत एक आधुनिक संवैधानिक प्रशासनिक व्यवस्था के साथ एक नए राष्ट्र-राज्य के रूप में विकसित हो रहा है। आधुनिक विज्ञान की भाषा के रूप में अंग्रेजी हमारे लिए जितनी भी उपयोगी हो, पर अंत में हम पाएंगे कि किसी भी संस्कृति और समाज की मौलिकता उसकी अपनी भाषाएं ही देती हैं। यह तथ्य अगले कुछ दशकों में और ज्यादा शिद्दत से तब समझा जाएगा, जब हम महाशक्ति के रूप में विकसित हो चुके होंगे। तब हमें अपनी संस्कृति का ख्याल आएगा। भारत विविधताओं का देश है, यहां अनेक भाषाएं और कई तरह की संस्कृतियां हैं। राष्ट्रीयता के विकास में यही विविधता संस्कृत के कारण हमारी एकता में तब्दील हो जाती है। संस्कृति इस अनेकता को एकता में परिवर्तित करती है। भारतीय संस्कृति को अर्थ प्रदान करती है। संस्कृति, विचार-दर्शन और इतिहास का अध्ययन करने के लिए संस्कृत स्रोतों की मदद लेना जरूरी है। उसके संरक्षण के बारे में तो हमें सोचना ही चाहिए। संस्कृत को लेकर सामान्य भारतवासी के मन में जो गहरा सम्मान है, उसे बढ़ाने की जरूरत है। संस्कृत हमारे गौरव का प्रतीक है (जोशी, 2019)।

निष्कर्ष

भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृति है और यह हमें विरासत से मिली है। संस्कृति शब्द किसी देश या समाज की पहचान होती है। व्यक्ति, समुदाय, समाज और राष्ट्र के निर्माण व विकास में संस्कृति की विशेष भूमिका रही है। संस्कृति हमारे सामाजिक जीवन को सदैव प्रभावित करती रही है। दुर्भाग्य यह रहा है कि हमने राजनीति को सब कुछ मान

लिया, जबकि 'केवल पथ की साधना' और संस्कृति 'उस पथ का साध्य' है। संस्कृति जीवन के वृक्ष का संवर्धन करने वाला रस है। संस्कृति का संचार और भाषा से गहरा संबंध है। भारतीय समाज का एक हिस्सा 'भाषा चिंतन' से विमुख है।

यहां यह सात सूत्र संस्कृति के वजूद को बनाए रखने में महत्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं- पहला- परंपराओं को जानने की और युवाओं तक पहुंचाने की, दूसरा- भाषा और विचारों को आत्मसात करने की, तीसरा-परंपरागत नृत्य, संगीत, व्यंजनों को अगली पीढ़ी को सौंपा जाना, चौथा- संस्कृति और तकनीक को एक दूसरे से बांटना, पांचवा- समुदाय एवं समाज के अन्य सदस्यों के साथ समय बिताना, छठां- सामाजिक एवं राष्ट्रीय महत्व के उत्सवों का प्रबंधन एवं सहभागिता आवश्यक है।

संदर्भ सूची

परमार, डॉ. उर्वशी का लेख, 'संपूर्ण मानवता: मीडिया एवं मानस', कम्युनिकेशन टुडे, 2015, communicationtoday.net.

पटेल, केशव का लेख, 'भारतीय जीवन दृष्टि-ज्ञान संस्कृति और अध्यात्म की परिपाटी में संचार', The sameeksha Global: Multi-disciplinary journal in Hindi, volume -4, issue-1, 2020. प्रश्न

जोशी, डॉ. रामशरण का आलेख, 'राष्ट्रभाषा हिंदी और भारतीय संस्कृति' विश्व 2015, वर्ष-31, अंक -4, अक्टूबर 2015,

'तकनीक को संस्कार पर हावी न होने दें' जागरण डॉट कॉम, 15 सितंबर 2016।

कुमावत, हरेंद्र का आलेख, 'हिंदी का बाजार और बाजार की हिंदी' राजस्थान साहित्य अकादमी,www.rsaudoi.org.

उपाध्याय, गिरीश का लेख, 'संचार: ज्ञान का साधारणीकरण, 'मीडिया नवचिंतन, जनवरी-मार्च, 2016

पटेल, केशव का लेख, उपयुक्त,

उपाध्याय, गिरीश का लेख, उपर्युक्त,

पटेल, केशव का लेख, उपर्युक्त,

आर्य, डॉ. वेदज्ञ का लेख, 'संस्कृत, संस्कार और संस्कृति', गगनांचल, मार्च-अगस्त, 2018, पृष्ठ सं. 23-24.

गुप्ता, डॉ. खुशबू का लेख, 'कोरोना काल में भारतीय संस्कृति की जीवंतता', 12 मई, 2020, पांचजन्य।

संस्कृति को उन्नत बनाने में भाषा श्रेष्ठ माध्यम है, नई दुनिया, 30 जून 2020।

अनुसूया, डॉ. सोनिया का लेख, 'संस्कृत सिर्फ भाषा नहीं संस्कृति विज्ञान, तार्किक क्षमता और अन्य भाषाओं की प्राण भी है', 9 अगस्त 2020, ऑपइंडिया, www.hindi.opindia.com

आर्य, डॉ. वेदज्ञ का लेख, 'संस्कृत, संस्कार और संस्कृति', उपर्युक्त

अनुसूया, डॉ. सोनिया का लेख, उपर्युक्त

जोशी, प्रमोद का लेख, 'सरकार द्वारा संस्कृत भाषा के प्रति दिखाए जा रहे उत्साह के मायने क्या हैं', 28 जून 2019, स्वराज,www.hindi.sawarajyamag.com

उच्च शिक्षा के नवीन आयाम एवं मीडिया शिक्षण: नई शिक्षा नीति के संदर्भ में

डॉ. राम प्रवेश राय*

सारांश

कोविड-19 महामारी में भारतीय उच्च शिक्षा व्यवस्था में परिवर्तन पर न सिर्फ काफी विचार-विमर्श हो रहा है बल्कि नए परिवर्तनों का स्वागत भी दृष्टिगोचर होने लगा है। ऑनलाइन शिक्षा, सीबीसीएस, मूक्स, आदि ऐसे ही कुछ परिवर्तन हैं जिसमें ऑनलाइन शिक्षा को आत्मसात कर ही लिया गया है। नयी शिक्षा नीति आने के बाद तो विचार-विमर्श और तेज़ हो गया है। मीडिया के क्षेत्र में भी अनेक बदलाव हुए हैं, फलस्वरूप प्रिंट एवं इलेक्ट्रॉनिक से आगे न्यू मीडिया का दौर आ गया है। ऐसे में मीडिया शिक्षण में भी कुछ बदलाव हुए हैं लेकिन इस बदलाव की गति मीडिया तकनीक के परिवर्तन की गति से समतुल्य नहीं है। कुछ नए शिक्षण संस्थानों में मीडिया पाठ्यक्रमों में बदलाव भी आए हैं किन्तु मीडिया पाठ्यक्रमों में विशेष परिवर्तन, इसके अद्यतन की स्वतन्त्रता तथा प्रयोग एवं प्रशिक्षण की सुविधा में सामंजस्य अभी भी विश्लेषण/समालोचना का विषय है। प्रस्तुत शोधपत्र का उद्देश्य भारत में उच्च शिक्षा के नवीन एवं परिवर्तनशील परिवेश विशेषकर नई शिक्षा नीति के संदर्भ में मीडिया शिक्षण की वस्तुस्थिति का विश्लेषण करना और साथ ही मीडिया शिक्षण में परिवर्तन की आवश्यकता का अवलोकन भी प्रस्तुत करना है।

बीज शब्द - नयी शिक्षा नीति, उच्च शिक्षा, शिक्षण तकनीक, आईसीटी, मीडिया तकनीक, मीडिया शिक्षण

भूमिका

काफी समय से भारतीय उच्च शिक्षा क्षेत्र के में अनेक बदलाव महसूस किये जा रहे हैं फलतः नई शिक्षा नीति 2020 अनेक विचार विमर्श के पश्चात अब तैयार है। हालांकि इसको लागू करने की स्वतन्त्रता फिलहाल राज्य सरकारों पर है। जहाँ एक ओर सरकारी उच्च शिक्षण संस्थान लम्बे समय तक एक ही ढर्रे पर चल रहे थे, वहीं उदारवाद के फलस्वरूप निजी संस्थानों ने परिवेश बदलने का काम किया। एक और बड़ा परिवर्तन 80 के दशक में दूरस्थ शिक्षा के आगमन से हुआ। उच्च शिक्षा प्राप्त करने में स्थान,समय,उम्र, नियमित क्लास आदि कुछ महत्वपूर्ण रुकावटें थीं। ऐसे लोगों के लिए दूरस्थ शिक्षा वरदान

* लेखक नव मीडिया विभाग, हिमाचल प्रदेश केन्द्रीय विश्वविद्यालय, धर्मशाला में सहायक प्राध्यापक हैं|

के रूप में सामने आई जो इन बाधाओं के कारण उच्च शिक्षा की चाह रखने के बावजूद भी इससे वंचित थे। सामजिक सोच में परिवर्तन का गहरा प्रभाव भी शिक्षा व्यवस्था पर पड़ा जिसमें प्रमुख है उच्च शिक्षा का सीधे रोजगार से जुड़ाव। ज्ञान के साथ- साथ अब हुनर को भी बढ़ाने का सामजिक दबाव बनने लगा। फलस्वरूप अनेक नए विषयों का समावेश हुआ। नयी तकनीक का आगमन एवं इसमें दिनों-दिन होता परिवर्तन भी उच्च शिक्षा में बदलाव के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। उच्च शिक्षा के परिवेश में परिवर्तनों के साथ अनेक चुनौतिया भी सामने आई हैं जिनका समाधान अभी बाकी है।

नई शिक्षा नीति में कई आमूलचूल परिवर्तन दृष्टिगोचर होते हैं। यह परिवर्तन विद्यमान चुनौतियों का कितना समाधान करते हैं यह अभी कहना आकलन मात्र होगा। गुणवत्तापरक शिक्षा इस नीति का मुख्य बिन्दु है। मल्टीडिसिप्लिनरी सोच अर्थात विभिन्न विषयों के मध्य भेदभाव का समापन इसका एक अहम आयाम है, जिसके तहत माध्यमिक स्तर से ही भेदभाव समाप्त होगा अर्थात जो पहले साइंस साइड और आर्ट साइड में फर्क था वह नहीं होगा। कोई भी छात्र विज्ञान के विषय चुन सकता है। उच्च शिक्षा की बात करें तो आईआईटी और अन्य तकनीकी तथा विज्ञान संस्थाओं में भी मानविकी के विषयों को शामिल किया जाएगा जिससे मल्टीडिसिप्लिनरी सोच का विकास होगा। कुछ विज्ञान और तकनीकी संस्थाओं में मानविकी और सामाजिक विज्ञान के विषय पाठ्यक्रम में शामिल भी हैं। आईआईटी, एनआईटी और कृषि विश्वविद्यालय में साहित्य और मीडिया के पाठ्यक्रम प्रारम्भ किए गए हैं जैसे निफ़्ट में संचार पाठ्यक्रम, कृषि विश्वविद्यालय,पूसा, समस्तीपुर में पूर्ण मीडिया विभाग की स्थापना आदि। उच्च शिक्षा में अकैडमिक क्रेडिट बैंक की अवधारणा एक नयी सोच है जो छात्रों को एक फ्लेक्सिबिलिटी प्रदान करती है। ऐसी ही सुविधा मल्टिपल एंट्री और एक्ज़िट विकल्प भी प्रदान करती है जिसमें बीच में पढ़ाई छोड़ देने पर छात्रों का साल नहीं खराब होगा और उसको पूर्ण किए गए पाठ्यक्रम के आधार पर प्रमाणपत्र या डिप्लोमा प्रदान कर दिया जाएगा। मल्टीडिसिप्लिनरी सोच को बढ़ावा देने के लिए सीबीसीएस पद्धति पर आधारित शिक्षा व्यवस्था का प्रावधान है जिसमें निर्धारित प्रतिशत कोर्स मुख्य विषय से इतर चाहे वह विज्ञान के हों या मानविकी के स्वेच्छा से चुने जा सकते हैं। अनेक विश्वविद्यालयों में यह प्रयोग पहले ही शुरू हो चुके हैं और उसका सकारात्मक परिणाम भी दृष्टिगोचर है।

उक्त पहलुओं के मध्य मीडिया या संचार शिक्षण की स्थिति और परिवर्तन की आवश्यकता इस पत्र का मुख्य बिन्दु है। मीडिया शिक्षण का जुड़ाव सभी विषयों से सीधे तौर पर है क्योंकि इसमें तकनीक, संस्कृति, भाषा, साहित्य, दर्शन, विज्ञान, अर्थ, राजनीति, समाज शास्त्र, विधि आदि सभी विषयों का समावेश प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से मिलता है।

खासकर नवीन तकनीक का प्रभाव सीधे तौर पर मीडिया शिक्षण से जुड़ा है। नयी वेब तकनीक, कैमरा तकनीक, ऑनलाइन और ऑफलाइन पत्रकारिता, संपादन तकनीक, ड्रोन आधारित पत्रकारिता, डेटा जर्नलिज्म, फिल्म निर्माण तकनीक आदि सभी का समावेश सीधे तौर पर मीडिया शिक्षण में मिलता है। मल्टीडिसिप्लिनरी एप्रोच तो शुरू से ही मीडिया शिक्षण में रहा है क्योंकि किसी भी विषय का छात्र इस विषय में दाखिला ले सकता है। फलतः नए तकनीकी बदलाव, नयी शिक्षा नीति और बाज़ार की मांग के आलोक में मीडिया शिक्षण का अध्ययन प्रस्तुत करने का प्रयास इस पत्र में किया गया है।

उद्देश्य:

भारत में उच्च शिक्षा के नवीन एवं परिवर्तनशील परिवेश विशेषकर नयी शिक्षा नीति 2020 के संदर्भ में मीडिया शिक्षण की वस्तुस्थिति का विश्लेषण करना और साथ ही मीडिया शिक्षण में परिवर्तन की आवश्यकता का अवलोकन भी प्रस्तुत करना है।

अवलोकनात्मक अध्ययन शोध विधि का प्रयोग प्रस्तुस्त पत्र में किया गया है। मुख्य रूप से यूजीसी वार्षिक रिपोर्ट २०१८-१९ और नई शिक्षा नीति २०२० का अध्ययन पत्र के उदेश्य के संदर्भ में किया गया है। यूजीसी वार्षिक रिपोर्ट २०१८-१९ के विद्यार्थी नामांकन और उच्च शिक्षण संस्थानों की स्थिति (स्ट्रक्चर- निजी , सरकारी आदि) का विशेष रूप से विश्लेषण सूचना संकलन के लिए किया गया है वहीं नई शिक्षा नीति में मुख्य रूप से उच्च शिक्षा वाले भाग का अध्ययन किया गया है। मीडिया शिक्षण की वस्तुस्थिति को समझने के लिए कुछ संस्थानों (परपसिव सैंपलिंग) की वेबसाइट पर मीडिया या पत्रकारिता विभाग के अंश तथा पाठ्यक्रम का अवलोकन किया गया है। इसमें मुख्य रूप से हिमाचल प्रदेश केंद्रीय विश्वविद्यालय, इग्नू, मीडिया संबन्धित मूक्स, उ.प्र. राजर्षि टंडन मुक्त विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम एवं विभाग शामिल हैं।

उच्च शिक्षा की वस्तुस्थिति और नयी शिक्षा नीति

चार भागों में विभक्त कर उच्च शिक्षा की वस्तुस्थिति को समझने प्रयास किया गया है जो इस प्रकार हैं:

शिक्षा का स्वरूप

वर्तमान शिक्षा पद्धति को देखा जाय तो प्राईमरी, सेकेन्डरी, हायर सेकेन्डरी, और उच्च शिक्षा में विभाजित है। इन चारों चरणों में प्रत्येक चरण के बाद छात्रों की संख्या कम होने लगती है। ज्ञान, कौशल और मूल्य यह तीन प्रमुख रूप से शिक्षा के आधार स्तम्भ हैं। ज्ञान किसी भी शिक्षार्थी की समझ, विषय विशेषज्ञता और प्राप्त ज्ञान की गहनता से जुड़ा है|

कौशल प्राप्त ज्ञान के प्रयोग या विशेष प्रकार की दक्षता से और मूल्य व्यवहार, आचरण, पात्रता और आत्मिक नियंत्रण से जुड़ा है। ज्ञान और मूल्य बहुत गहरे से आपस में भी जुड़े हुए हैं और यही दो ऐसे घटक हैं जो मनुष्य को पशु से अलग करते हैं। विश्वविद्यालयीय शिक्षा में ज्ञान की अधिकता देखी जा सकती है। जिसके फलस्वरूप उच्च शिक्षा प्राप्त बेरोजगारों की संख्या बढ़ती गई और समाज में उच्च शिक्षा का महत्व कम होता गया। इस चुनौती का सामना करने के लिए कौशल युक्त शिक्षा का समावेश हुआ और नए - नए पाठ्यक्रम रोजगारपरक शिक्षा के लिए प्रारंभ किये गए। स्पष्ट रूप से नहीं कहा जा सकता कि उच्च शिक्षा ने शिक्षित युवकों को रोजगार दिलाना अपनी जिम्मेदारी समझी या समाज की मांग ने यह भार उच्च शिक्षा पर डाल दिया। नयी शिक्षा नीति में विद्यालयीय शिक्षा से उच्च शिक्षा तक का स्वरूप बदल गया है जो अब इस प्रकार है:

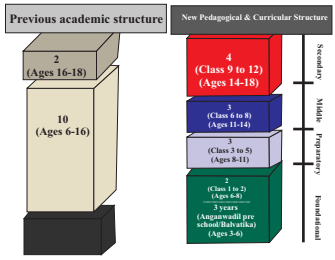

प्रारम्भिक शिक्षा

(चित्र-1)

प्रारम्भिक शिक्षा में पहली बार औपचारिक रूप से किंडरगार्टेन को शामिल किया गया है। उच्च शिक्षा- नई शिक्षा नीति में स्नात्तक स्तर पर भी कुछ बदलाव किए गए हैं जैसे अब स्नात्तक पाठ्यक्रम 3 या 4 वर्ष के होंगे जिसमें प्रथम और द्वितीय स्तर पर कोर्स छोड़ने पर क्रमशः सर्टिफिकेट और डिप्लोमा प्रदान किया जाएगा साथ ही उसका एक डिजिटल क्रेडिट बैंक भी तैयार होगा जिसका उपयोग किसी भी संस्थान में आगे की पढ़ाई करने के लिए किया जाएगा।अर्थात उसको फिर से पूरा कोर्स नहीं करना पड़ेगा। 4 साल का स्नात्तक करने वाले को 1 वर्ष का स्नातकोत्तर और 3 साल का स्नात्तक करने वाले को 2 साल का स्नातकोत्तर करना होगा और स्नात्तक के चौथे वर्ष में शोध पर ध्यान केन्द्रित होगा जो आगे उसको पी-एच.डी. करने में काम आएगा।

रोजगार परक एवं तकनीकी शिक्षा

शुरुआत में यह शिक्षा मेडिकल और इंजीनियरिंग से जुड़ी रही किन्तु इसपर अधिक दबाव होने के कारण अनेक नए कोर्स जैसे प्रबंधन, कम्प्यूटर, कॉमर्स, फिल्म, कृषि, एजुकेशन आदि डिग्री कोर्सों के साथ-साथ अनेक डिप्लोमा और सर्टिफिकेट कोर्स

प्रारम्भ किये गए। आई.आई.टी. संस्थानों ने उच्च आई.क्यू. वाले छात्रों को आकर्षित किया और उनकी दक्षता बढ़ा कर इनको अधिक प्रतियोगी बनाया जिससे इनको अधिक पैकेज की जॉब मिलने लगी। रोजगार के अच्छे अवसर मिलने के कारण युवाओ का बड़ा तबका इस ओर आने लगा किन्तु कठिन प्रतियोगिता और मोटी फीस के कारण इसकी सुलभता कम रही।

(चित्र-2)

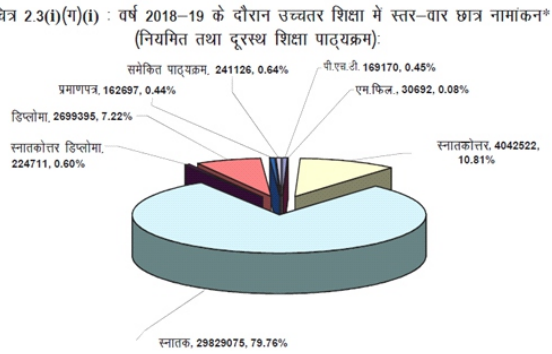

उपरोक्त आंकड़ों के अनुसार आज भी स्नात्तक स्तर पर नामांकन का प्रतिशत सर्वाधिक है। इनमें अनेक ऐसे स्नात्तक हैं खासकर सामाजिक विज्ञान और मानविकी विषय के स्नात्तक जो नौकरी न मिलने या प्रतियोगी परीक्षा की तैयारी करने के कारण स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम में प्रवेश ले लेते हैं जिसका इनके भविष्य निर्माण में कोई खास योगदान नहीं रहता है। सामाजिक, आर्थिक और कार्पोरेट आवश्यकताओं के अवलोकन के आधार पर एक रोजगार योग्य स्नात्तक में सोशल स्किल, एटिट्यूड, कंप्यूटर दक्षता, लेखन कौशल, सामान्य ज्ञान, मौखिक संचार और कम से कम दो भाषाओं अंग्रेजी और स्थानीय भाषा का विशेष ज्ञान जैसी योग्यता होनी चाहिए। किन्तु रोजगारपरक शिक्षा पर अधिक ध्यान होने के बावजूद भी एक सामान्य स्नात्तक में उपरोक्त योग्यताओं का समावेश नहीं मिलता। शिक्षा नीति 2020 से पूर्व की शिक्षा नीतियों में छात्र नामांकन बढ़ाने पर ज़ोर था जबकि पहली बार 2020 की नीति में गुणवत्ता पर अधिक ज़ोर होने से शायद स्नात्तक स्तर पर रोजगार की सुलभता बढ़ जाए।

मुक्त एवं दूरस्थ शिक्षा

वैश्वीकरण और निजीकरण के प्रभाव को देखते हुए तथा परम्परागत विश्वविद्यालयों द्वारा उच्च शिक्षा की मांग को पूरा न कर पाने की विवशता से मुक्त एवं दूरस्थ शिक्षा का प्रादुर्भाव हुआ। यह भारतीय शिक्षा व्यवस्था में एक बड़ा बदलाव था। आज जहाँ

भारत में 1 केंद्रीय तथा 14 राज्य मुक्त विश्वविद्यालय (Department of Higher Education, 2021) संचालित हैं वहीं दो सौ से अधिक अन्य दूरस्थ शिक्षा के संस्थान उच्च शिक्षा की चाह रखने वालों को उच्च शिक्षा सुलभ करा रहे हैं। मुक्त शिक्षा में अनेक संसाधनों जैसे पाठ्यसामग्री, परामर्श, मल्टीमीडिया, रेडियो कार्यक्रम, टेली काउंसिलिंग, ई-ज्ञानकोष, मोबाईल काउंसिलिंग आदि के द्वारा उच्च शिक्षा सुलभ कराई जाती है। उम्र, समय, स्थान आदि की बाध्यता न होने के साथ ही यह बहुत लचीली भी है। जहाँ नौकरीपेशा लोग इससे शिक्षा प्राप्त कर कैरियर उन्नयन कर रहे हैं वहीं हमारी सामाजिक व्यवस्था के चलते ज्ञान से वंचित महिलाएं भी इसका पूरा लाभ उठा रही हैं। परम्परागत विश्वविद्यालय अच्छी पहुँच होने के बाद भी ऐसे लोगों को उच्च शिक्षा उपलब्ध कराने में असमर्थ हैं जो-नौकरी या पारिवारिक व्यवसाय मिलने के कारण डिग्री अधूरी छोड़ चुके हैं, व्यवसाय या नौकरी में रहते हुए भी ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं, भौगोलिक दृष्टि से काफी दूर या विषम वातावरण में रहते हैं, रिटायर होने के बाद अपने खाली समय का सदुपयोग ज्ञानअर्जन में करना चाहते हैं आदि। मुक्त और दूरस्थ शिक्षा ही ऐसे लोगों को लाभ प्रदान करने में सक्षम है।

कोविड-19 के इस दौर ने मुक्त और दूरस्थ शिक्षा को परम्परागत शिक्षा के पूरक के रूप में प्रस्तुत किया है। यदि हम मिश्रित (ब्लेंडेड) शिक्षा की बात करें तो यह अधिक सटीक और दूरगामी परिणाम देनेवाली हो सकेगी। जैसे किसी ख्याति प्राप्त विश्वविद्यालय की कक्षा में प्रोफेसर का लेक्चर मात्र कुछ छात्रों तक ही सीमित रहता है, यदि इसका लाइव टेलीकास्ट कर दिया जाये तो अनेक शिक्षार्थी इसका लाभ उठा सकते हैं। वह एक ही विषय पर अनेक विद्वानों के विचार जान सकते हैं। इसी प्रकार मुक्त शिक्षा की पाठ्यसामग्री इन्टरनेट पर या सीडी में उपलब्ध रहे तो परम्परागत छात्र भी आसानी से इसका अध्ययन कर सकते हैं। ऐसा देखा भी गया है कि बहुत से प्रतियोगी छात्र मुक्त विश्वविद्यालयों की पाठ्यसामग्री प्राप्त करने के लिए ही प्रवेश लेते हैं या इसे बाजार से खरीदते हैं। इस प्रकार के अनेक प्रयोगों की आवश्यकता है जिससे ब्लेंडेड लर्निंग की अवधारण का विकास हो सके और उच्च शिक्षा के परिवेश में प्रभावी एवं सकारात्मक विकास होता रहे। नयी शिक्षा नीति में ब्लेंडेड लर्निंग का प्रयास भी दृष्टिगोचर होता है, यहाँ मूक्स का प्रोत्साहन है अर्थात रेगुलर छात्रों को भी अब नियत प्रतिशत मूक्स से ही लेना है जो ब्लेंडेड लर्निंग की तरफ एक कदम है। यहीं क्रेडिट बैंक की अवधारणा भी रेगुलर शिक्षा को मुक्त शिक्षा की तरह लोचदार बनाती है।

निजीकरण

उच्च शिक्षा पर रोजगार प्राप्त कराने का दबाव एवं उदारीकरण के कारण अनेक निजी उच्च शिक्षण संस्थानों की स्थापना हुई। इसमें प्रमुख रूप से दो प्रकार के संस्थान

सामने आये - एक तो गाँवों में स्थापित होने वाले कॉलेज जिनका उद्देश्य क्षेत्रीय आवश्यकताओं को देखते हुए ग्रामीण स्तर पर उच्च शिक्षा उपलब्ध कराना था। इस प्रकार के कॉलेज प्रमुख रूप से परम्परागत विषयों को उपलब्ध कराते हैं। दूसरे तकनीकी संस्थान हैं जिनकी उपलब्धता शहरों तक सीमित है किन्तु हॉस्टल, परिवहन आदि की सुविधाओं के कारण दूरदराज और अन्य प्रदेशों के छात्र भी इसमें प्रवेश लेते हैं। प्रारंभ में इन संस्थानों द्वारा अच्छे रोजगार के अवसर सुलभ कराये जाने से युवा तेजी से इस ओर आकर्षित हुए जिसके फलस्वरूप तेजी से ऐसे संस्थान खुलना शुरू हो गये।

(चित्र-3)

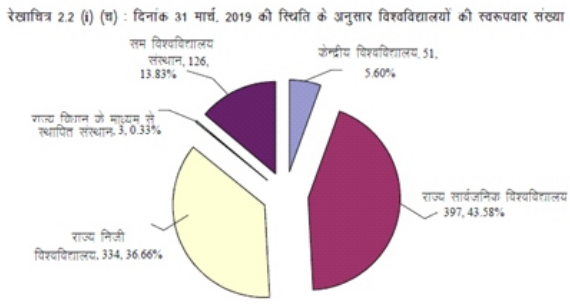

उपरोक्त आंकड़ों के अनुसार वर्ष 2019 तक निजी विश्वविद्यालयों की हिस्सेदारी 36.66% है, वहीं नई शिक्षा नीति के प्रावधानों के अनुसार भारत में विदेशी विश्वविद्यालयों की स्थापना का रास्ता साफ हो जाएगा। ऐसी स्थिति में एक कठिन प्रतियोगिता तो होगी लेकिन शिक्षा बिना लोन के प्राप्त करना मुश्किल हो सकता है।

मीडिया शिक्षण : आवश्यकता एवं परिवर्तन

मीडिया हमारे दैनिक जीवन का हिस्सा है जो हमें समाज के बारे में नियमित जानकारी प्राप्त करने में तथा हमारी सोच बदलने में हमारी मदद करता है। हमारे पास अब समाज से जुड़ने और जानकारी हासिल करने के लिए प्रेस, टीवी, रेडियो, इंटरनेट, सिनेमा, मोबाइल आदि अनेक मीडिया मौजूद हैं। अर्थात अब हमारे पास माध्यम चयन की आजादी है। यही नहीं वेब 2.0 तकनीक के माध्यम से हम सभी मीडिया कंटेन्ट निर्माता अर्थात प्रोज्यूमर भी बन गए हैं जिससे हम आसानी से स्वयं के शब्द, फोटो, वीडियो और आवाज पूरी दुनिया से शेयर कर सकते हैं। मीडिया तकनीक में आए बदलावों को भी ध्यान में रख कर पाठ्यक्रम में बदलाव की आवश्यकता है क्योंकि पहले हम मात्र प्रिंट मीडिया होने के कारण मीडिया अभाव की स्थिति में थे और अब मोबाइल तकनीक तथा वेब 2.0 के आने के बाद हम मीडिया आधिक्य की स्थिति में हैं। अतः आईसीटी, सिमुलेशन, 3डी, डाटा तकनीक

आदि का मीडिया शिक्षण में प्रयोग पर काफी बल दिया जा रहा है।

आज इंटरनेट के प्रसार से लोगों में नेट एडिक्शन की बात भी सामने आ रही है। फेसबुक, व्हाट्सैप और ऑनलाइन विंडो शॉपिंग युवाओं और कामकाजी लोगों के दैनिक जीवन का हिस्सा हो गया है। वहीं दूसरी ओर प्रायः सभी माध्यम लोगों का डाटा पानेकी मंशा के तहत ही कार्य करते हैं और इसी मंशा के अनुरूप मीडिया उत्पाद समाज में प्रस्तुत करते हैं। मीडिया शिक्षण में इस प्रकार की छिपी मंशा को प्रत्यक्ष करने के लिए विशेष पाठ्यक्रम की आवश्यकता है। मीडिया लिटरेसी ऐसा ही एक पाठ्यक्रम है जिसको जन सामान्य तक उपलब्ध कराने की ज़रूरत है ताकि लोग मीडिया उपभोग को समझ सकें। यहाँ संचार सिद्धान्त का उल्लेख महत्वपूर्ण हो जाता है क्योंकि संचार सिद्धान्त को सिर्फ लेक्चर मोड में नहीं बल्कि सिद्धान्त, प्रयोग एवं शोधकार्य के रूप में पढ़ने पर विचार करना होगा जिससे व्यापक स्तर पर मीडिया, संचार प्रक्रिया तथा इसके प्रभाव की समझ विकसित हो सके। संचार सिद्धान्त को महत्ता देते हुए ब्रिटेन के मीडिया पाठ्यक्रमों में श्रोताओं की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित की जाती है। वहीं आस्ट्रेलिया में मीडिया शिक्षा किंडर गारटेन से ही पाठ्यक्रमों में शामिल है। मीडिया शिक्षण के उद्देश्य में बच्चों को क्रिटिकल सिटीजन के रूप में विकसित करने का उद्देश्य भी शामिल करना होगा जो कि एक प्रजातांत्रिक व्यवस्था के लिए महत्वपूर्ण कदम होगा। श्रोता अध्ययन को भी मुख्य पाठ्यक्रम में स्थान मिलना चाहिए जिससे विद्यार्थियों को यह भी समझने में मदद मिलेगी कि एक ही प्रकार के मीडिया कंटेन्ट का अलग-अलग श्रोताओं पर क्या और कितना प्रभाव पड़ता है। साथ ही विद्यार्थी विभिन्न सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों को भी समझ पाएगा जिससे उसकी सोशल स्किल में इज़ाफा भी होगा। डेटा जर्नलिज़्म एक नवीन और आवश्यक अवधारणा है जिसका वृहद रूप में समावेश भविष्य के लिए बेहद ज़रूरी है।

निष्कर्ष एवं चर्चा

भारत में आज़ादी के बाद से उच्च शिक्षा के क्षेत्र में काफी बदलाव हुए हैं। इसमें जीईआर बढ़ाने के साथ-साथ गुणवत्ता पर ध्यान देने के लिए कई संस्थाएं जैसे यूजीसी, एआईसीटीई, एनएएसी आदि अस्तित्व में आईं। इस प्रकार की अनेक संस्थाओं की ढेरों नियमावली से कुछ भ्रम की स्थिति भी उत्पन्न होती है। इसीलिए शायद नई शिक्षा नीति में सिर्फ एक नियामक संस्था हायर एडुकेशन काउंसिल बनाने का प्रावधान है। गुणवत्ता, शोध, मल्टीडिसिप्लिनरी अप्रोच और स्वायत्ता का संवर्धन नयी शिक्षा नीति के केंद्र बिन्दु हैं जिसका अनुपालन मीडिया शिक्षण के बदलाव की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम हो सकता है। इसके अनुपालन से पूर्व मीडिया शिक्षण के विविध आयामों पर ध्यान देना आवश्यक है।

अनेक बार यह चर्चा होती रहती है कि मीडिया शिक्षण में प्रैक्टिकल की कमी है

।अनेक चर्चाओं में भी तार्किक ढंग से सिर्फ कौशल विकास के हिस्से पर ज़ोर रहता है। अर्थात कहीं न कहीं ऐसा प्रतीत होने लगा है कि मीडिया शिक्षण का प्रमुख उद्देश्य मीडिया तकनीकी कौशल प्रदान करना मात्र है जिससे मीडिया ग्रेजुएट को रोजगार उपलब्ध हो सके। किन्तु इस प्रकार के एकल उद्देश्य से वैचारिकी और स्वतंत्र सोच तथा शोध दृष्टि के विकास में कमी आ रही है। निःसंदेह कौशल शिक्षा का एक महत्वपूर्ण अंग है किन्तु दो वर्षीय स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम में भी सिर्फ कौशल पर ही जोर देना; ज्ञान की स्वतन्त्रता, वास्तविक सामाजिक सहभागिता और विकास के हित में नहीं हो सकती। मीडिया शिक्षण में इस बात पर ध्यान देने की आवश्यकता है कि शिक्षित विद्यार्थी सिर्फ नौकरी पाने की चाह में ना रहें बल्कि नौकरी देने वाला भी बन सकें। भारतीय उच्च शिक्षा अभी काफी बदलावों से गुजर रही है और शायद नई शिक्षा नीति इसमें एक सार्थक कदम हो सकती है। किन्तु आज भी भारत में मीडिया/संचार शिक्षा को वह महत्व नहीं प्राप्त है जो कि विकसित देशों में है।

निष्कर्ष रूप में देखें तो जिन मुद्दों को उठाया गया है उस पर व्यापक चर्चा करने की ज़रूरत है। मीडिया शिक्षण के लिए एक समान पाठ्यक्रम निर्माण की भी बात होती रहती है जो कि मेरे अवलोकन के आधार पर सार्थक नहीं हो सकती। मीडिया तकनीक में तेजी से परिवर्तन आ रहे हैं और लगातार इनपर शोध भी हो रहें हैं ऐसे में संबन्धित शिक्षक को ही पाठ्यक्रम तैयार करने की पूर्ण आजादी होनी चाहिए (हिमाचल प्रदेश केंद्रीय विश्वविद्यालय में प्रयोग में है) जिसे वह समय-समय पर अद्यतन भी कर सके। अब वह दौर आ गया है जब व्यवस्था को शिक्षक के लिए पूर्ण विश्वसनीय दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता है। मीडिया शिक्षण सामाजिक और तकनीकी परिवर्तनों पर सीधे तौर से जुड़े होने के कारण एक निहायत ही गतिशील विषय है अतः उपरोक्त चर्चित बिन्दुओं के साथ ही इसको अद्यतन रखने की प्रक्रिया का भी क्रियान्वयन आवश्यक है। कोविड के प्रभावों से शैक्षिक वातावरण में अचानक आए और आत्मसात किए गए परिवर्तनों ने परम्परागत और मुक्त शिक्षा के बीच की दूरी को भी काफी हद तक खत्म किया है जो नई शिक्षा नीति के अनुपालन के साथ एक समग्र या ब्लेंडेड लर्निंग का परिचायक होगी। नई शिक्षा नीति में भी संस्थानों को ओडीएल (मुक्त शिक्षा) और ऑनलाइन कार्यक्रम शुरू करने का प्रावधान है जो ब्लेंडेड स्ट्रक्चर का ही द्योतक है। ऐसे में मीडिया शिक्षण में पाठ्यक्रम को सदैव अद्यतन और नवीन बिन्दुओं को शामिल करने पर ज़ोर देना होगा। लाइफ लॉन्ग लर्निंग भी नयी शिक्षा नीति में शामिल है अतः मीडिया शिक्षण में भी अपने एलूमनि (पूर्व छात्र) के लिए एक रेफ्रेशर या अपग्रेडेशन जैसे किसी कोर्स को आरंभ करने पर सोचना होगा जिससे एक ओर ज्ञान के साथ छात्रों का सतत् जुड़ाव होगा वहीं दूसरी ओर संस्थान को भी सतत् फीडबैक मिलता रहेगा।

संदर्भ सूची

Ankuran Dutta and Anamika Rey. Media Education in India: Peer Perspective. Sandy Hirtz & Kevin Kelly Education for a Digital World 2.0:Innovations in educatio Vol-1 (p 191-211). San Francisco: San Francisco State University.

Anuradha Mishra Gaur. (2013). Media Education in India and United Kingdom:A Comparative Study. Media Watch, 278-284.

Biswajit Das. (2009). Media Education as a Development Project: Connecting Emancipatory Interests and Governance in India. AOC, UNESCO, EUROPEAN COMMISSION, COMUNICAR.

Keval J. Kumar. (1955). Media Education, Communication and Public Policy: An India Perspective. Himalan Publisher.

Len Masterman. (1997). A Rationale for Media Education. Routledge.

MHRD. (2020). New Education Policy 2020. New Delhi: Ministry of Human Resource Development.

Ministry of Education Department of Higher Education. (06 July 2021). State Open Universities. www.education.gov.in: https://www.education.gov.in/en/technology-enabled-learning-sou

P.N.Vasanti. (2014). CMS Report 2013-14. New Delhi: CMS.

Pawan Agrawal. (2006). Higher Education in India: The Need for Change. Indian Council for Research on International Economic Relations, 180.

Sheikh Mohd Imran. (2012). Trends and issues of e-Learning in Lis-Education. Brazilian Journal of Information Sciences, 26-45.

UGC. (2020). Annual Report 2018-19. New Delhi: University Grant Commission.

Younis Ahmad Sheikh. (2017). Higher Education in India: Challenges and Opportunities. Journal of Education and Practice, 39-42.

योग दर्शन में तप एवं तपोजा सिद्धि

डॉ. गोविन्द प्रसाद मिश्र*

सारांश

भारतीय दार्शनिक परम्परा में महर्षि पतंजलि का योग दर्शन अपने सूत्र रूप में मन एवं मानसिक रहस्यों के सूक्ष्म गहन अध्ययन के साथ साथ उसमें अन्तर्निहित प्रसुप्त लौकिक–अलौकिक क्षमताओं के जागरण, परिमार्जन ,परिष्कार, उन्नयन एवं उत्कर्ष हेतु एक सुव्यवस्थित विधि विधानों पर आधारित विज्ञान है। योग दर्शन कहता है कि यदि मनुष्य को अपनी प्रसुप्त आन्तरिक शक्तियों को जागृत करना है- अपनी वास्तविकता से परिचित होना है, तो उसे सर्वप्रथम आत्मशोधन-अवांछनीयताओं के निष्कासन, इन्द्रिय-निग्रह, चित्त शुद्धि की प्रक्रिया सीखनी समझनी और अपनानी होगी जो कि तप और योग के मार्ग पर चलकर ही सम्भव है । जब तक आत्मशोधन का तप एवं आत्म क्षेत्र में उच्चस्तरीय विशिष्टताओं के समावेश की योग साधना सम्पन्न नहीं की जाती, तब तक मनुष्य का पूर्ण उत्कर्ष, उसका वह कायाकल्प सम्भव नहीं है जो व्यक्तित्व को सामान्य से असामान्य, असाधारण बनाते हुए अलौकिक क्षमताओं विभूतियों, सिद्धियों से सम्पन्न करती हुई उच्चस्तरीय देवहपम स्तर का बना देती है । महर्षि पतंजलि ने योग सूत्र में ऐसी अनेक तपोजा (तप साधना से उत्पन्न होने वाली) सिद्धियों का उल्लेख किया है जो दृष्टिकोण भेद से योग साधना में साधक भी हैं और बाधक भी |

बीज शब्द : योग दर्शन, तप, तपोजा सिद्धि, प्रज्ञा

भूमिका

योग और तप परस्पर पूरक हैं। एक के बिना दूसरे की सफलता संभव नहीं -'पूरकौतु तपोयोगौ विनैक नहि पूर्णता' (शर्मा,1998)। तप और योग सामान्य जीवन को उत्कृष्ट बनाने की ही सर्वसुलभ और सार्वजनीन प्रक्रिया है- उत्कृष्टकारिके सर्वसुलभे सार्वलौकिके (शर्मा,1998)। योग के साथ सिद्धि का सम्प्रत्यय भी घनिष्ट रूप से जुड़ा हुआ है। प्रायः पूर्ण योगी होने का अर्थ ही सिद्धियों के स्वामी से लगाया जाता है | जिस प्रकार ईश्वर का अर्थ ही है ऐश्वर्यवान, राजा का अर्थ ही है प्रजावान, उसी तरह योगी का अर्थ है सिद्धिवान।

योग साधना से शरीर, इन्द्रियों और चित्त में परिवर्तन होने पर जो पहले की अपेक्षा विलक्षण अलौकिक स्तर की शक्तियों का प्रादुर्भाव हो जाता है उन्ही को सिद्धि कहते हैं। यह

* लेखक दर्शन शास्त्र विभाग, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय विश्वविद्यालय, अमरकंटक में सह-प्राध्यापक हैं |

सिद्धियाँ योगी को कहीं गिरी-बिखरी नहीं मिल जातीं अपितु यह उसके अपने निजी साधना का फल होती हैं। प्रत्येक कार्य का कोई न कोई कारण अवश्य होता है। उसी प्रकार सिद्धियों के अविर्भाव का भी कारण अवश्य है। सिद्धियाँ तभी प्रकट होती हैं जब हमारे स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीरों में (चित्त में) किसी निमित्त बस विलक्षण परिवर्तन आ जाय। महर्षि पतंजलि इन्ही निमित्तों की चर्चा करते हुए योग सूत्र में कैवल्य पाद के प्रथम सूत्र में सिद्धि प्राप्ति के कारणों को बताते हुए पाँच प्रकार की सिद्धियों की बात करते हैं-जन्मौषधिमन्त्रतपः समाधिजाः सिद्धयः(पतञ्जलि,2005)।

अर्थात्- जन्म से होने वाली सिद्धि, औषधि से होने वाली सिद्धि, मन्त्र से होने वाली सिद्धि ,तपस्या से होने वाली सिद्धि और समाधि से प्राप्त होने वाली सिद्धि : यह पाँच प्रकार की सिद्धियों होती हैं। इन्ही को क्रमशः जन्मजा सिद्धि, औषधिजा सिद्धि, मन्त्रजा सिद्धि, तपोजा सिद्धि और समाधिजा सिद्धि भी कहते हैं।

तपस्या से प्राप्त होने वाली सिद्धि तपोजा सिद्धि है। जब मनुष्य शास्त्रोक्त तप करता है या कर्तव्य पालन पथ पर सहर्ष कष्ट को सहता है, पर धर्म का त्याग नहीं करता तो उस तपश्चर्या से उसके शरीर इन्द्रियों और चित्त की समस्त अशुद्धियों का नाश हो जाता है और उनमें अपूर्व शक्तियों का प्रादुर्भाव हो जाता है। इसे ही तपोजा सिद्धि कहते हैं।

जिस प्रकार लोहा आग में तप कर फौलाद बन जाता है उसी प्रकार तपस्या में तप कर शरीर, इन्द्रिय. मन, चित्त आदि का भी रूपान्तरण हो जाता है और उनका शुद्ध विलक्षण स्वरूप प्रकट हो जाता है। महर्षि पतंजलि के शब्दों में तप से अशुद्धि के क्षय होने से शरीर और इन्द्रियों की शुद्धि होती है- कार्यन्दिरियसिद्धिरशुद्धिक्षयात्तपसः (पतञ्जलि,2005)।

जैसे लोहे को आग में बार-बार तपाने और कूटने-पीटने से उसके दोष, मल आदि दूर हो जाते हैं- वह इच्छा और आवश्यकतानुसार अति हो जाता है, जंग लगे निकम्मे चाकू में चमक के साथ साथ तेज शान भी आ जाती है, वैसे ही तपस्या की भट्ठी में तपने से यानि निरन्तर तप के अभ्यास से तपस्वी के शरीर और इन्द्रियों के मल का नाश हो जाता है जिससे उसका शरीर स्वस्थ, स्वच्छ और हल्का हो जाता है तथा उसे अणिमा आदि सिद्धियाँ (पतञ्जलि, 2005) तथा काय सम्पत् रूप विभूतियाँ (पतञ्जलि, 2005) प्राप्त हो जाती हैं। साथ ही उसे दिव्य-दर्शन, दिव्य-श्रवण, दूर-श्रवण, दूर-दर्शन आदि इन्द्रिय सम्बन्धी सिद्धियाँ भी प्राप्त हो जाती हैं।

मस्तिष्क के बुद्धि संस्थान को विकसित करने के लिए जिस प्रकार मस्तिष्क को शिक्षित और हाथों को अभ्यस्त करने का दीर्घकालीन प्रयत्न किया जाता है उसी प्रकार अचेतन को पाशविक कुसंस्कारों से मुक्त करके देवहपम अन्तःस्थिति प्राप्त करने के लिए तप रूपी आध्यात्मिक साधनाक्रम अपनाना पड़ता है। तपरहित असंयमित जीवन जीने से व्यक्ति

की दुर्गति ही होती है। जैसा कि विवेक चूड़ामणि में कहा भी गया है -

शब्दादिभिः पंचभिरेवपंच, पंचत्वमापुः स्वगुणेनवद्धाः।

कुरंगमातंगपतंगमीनभृंगा नरः पंचभिरंचितः किम्।।(आचार्य,1932)

अर्थात हरिण, हाथी, पतिंगा, मछली और भौंरा-यह अपने-अपने स्वभाव के कारण शब्दादि पांच विषयों में से केवल एक-एक से आसक्त होने के कारण मृत्यु को प्राप्त होते हैं, तो फिर इन पांचों विषयों से जकड़ा हुआ असंयमी मनुष्य कैसे बच सकता है? (यानि उसकी तो दुर्गति सुनिश्चित ही है।)|

अब प्रश्न यह है कि तप कहते किसको हैं ? और यह किस तरह किया जाता है तथा इसका स्वरूप क्या होता है? उच्च उद्देश्यों हेतु प्रसन्नता पूर्वक कष्ट सहन करने को तप कहा जाता है, इसलिए उद्देश्य के अनुरूप ही तप का स्वरूप और प्रकार होता है। यही कारण है कि तप की परिभाषाएं भी भिन्न-भिन्न हैं, यद्यपि भाव में समानता है| जैसे व्यासभाष्य के अनुसार 'तपोद्वन्द्वसहनम्' (पतञ्जलि, 2005) अर्थात् सभी प्रकार के द्वन्दों को सहन करना तप है। भूख-प्यास, सर्दी-गर्मी, सुख-दुख, मान-अपमान, जय-पराजय आदि द्वन्दों को प्रसन्नता पूर्वक सहन करते हुए अपने कर्तव्य पथ और साधना में डटे रहना तप कहलाता है । जो तपस्वी नहीं है उसका योग सिद्ध नहीं हो सकता-

'ना तपस्विनो योगः सिद्धयति' ।(पतञ्जलि,2005)

शास्त्रमतानुसार तप की शक्ति और योग साधना के बिना उच्च लक्ष्यों की प्राप्ति असंभव है-

'असंभवा मता योग साधनाया बिना तथा' (शर्मा,1998)

पुनश्च, 'तपोशक्तेर्विना हयुच्च लक्ष्यप्राप्तिरिह प्रभो' ।(शर्मा,1998)

जिस प्रकार अश्वविद्या में कुशल सारथी चंचल घोड़ों को वश में रखता है उसी प्रकार शरीर, प्राण, इन्द्रियों और मन को उचित रीति और अभ्यास से वश में करने को तप कहते हैं। इसीलिए आचार्य चाणक्य कहते हैं- "तपः सार इन्द्रिय निग्रहः" (चाणक्य,2019) अर्थात् इन्द्रियों को अनुचित विषयों से रोकना ही असली तप है।

अपने वर्ण आश्रम परिस्थिति और योग्यता के अनुसार स्वधर्म का पालन करना भी तप कहलाता है, जैसा कि महाभारत में कहा गया है- 'तपः स्वधर्म वर्तित्वम्| (महाभारत,2001) अर्थात् कितना भी कष्ट पड़े फिर भी अपने धर्म (कर्त्तव्य कर्म) से विमुख न होना, तप है। तप की महिमा महान है । इसीलिए शास्त्र करता है- 'तपसोब्रहा विजिज्ञासस्व तपोब्रीति' (शर्मा,1998)|

संसार में जो कार्य अति कठिन है, दुःसाध्य है, उसे तप के द्वारा ही सिद्ध किया जा सकता है। बिना तप के महान कार्य सिद्ध नहीं होते हैं। शास्त्र कहते हैं कि ईश्वर भी तप के ही प्रभाव से सृष्टि रचना में समर्थ हुआ है-

यः पूर्व तपसो जातमदभ्यः पूर्वमजायत्।
गुहा प्रविष्य तिष्ठन्तं यो भूते भूतेभिव्व्यपश्यत्।।(कठोपनिषद,2002)

अर्थात् उस परमेश्वर ने सर्व प्रथम तप किया, उस तप के श्रम स्वेद से जल उत्पन्न हुआ। श्रीमद्भागवद् के द्वितीय स्कन्द, नवें अध्याय में भगवान ने तप को अपना हृदय एवं स्वयं को तप का हृदय कहा है- 'तपो में हृदयं- साक्षादात्माहि तपसो हि वै' ।(श्रीमद्भागवद,2014)|

तैत्तरीय उपनिषद में कहा गया है कि उस परमात्मा ने प्रकट होने की इच्छा की। इस हेतु तप किया। तप की शक्ति से जगत रचा और उसी में प्रविष्ट हो गया|

"सोऽकामयत वहुस्यां प्रजायेयेति। स तपोऽतप्यत्।
स तपस्तप्त्वा इदसर्वमसृजत यदिकिच। सत्सृष्ट्वा तदेवानु प्राविशत्।(तैत्तरीय उपनिषद, 2014)

उपनिषद् का ऋषि कहता है कि उस ब्रह्म ने तप किया, कष्ट सहा तब ही यह सृष्टि बनी- सतयोऽतप्यत सतपरतप्त्वा सर्वत्र सृजत यदिदं किंच। (शर्मा,1998)|

प्रश्नोपनिषद् भी कहता है कि प्रजा उत्पन्न करने की कामना वाले प्रजापति ने तप किया-तस्मै स होवाच प्रजाकामो वै प्रजापतिः स तपोडऽतप्यत्।"(प्रश्नोपनिषद,2001) | शान्डिल्योपनिषद् का भी यही मत है-उसके अनुसार ब्रह्म ने ज्ञानमय तप से युद्धि प्राप्ति की। तब एक से अनेक होने की इच्छा की और इस हेतु पुनः तप किया तब तीन अक्षर, तीन आवृत्ति, त्रिपदा गायत्री तीन वेद, तीन देव, तीन वर्ण और तीन अग्नि प्रकट हुए-

अथैष ज्ञानमयेन तपसा चीपमानोऽकामयत बहुस्यां प्राजायेयेति।
अरथैतस्मात् तप्यमानात् सत्यकामात् भीण्यक्षराण्य जायन्त।
तिस्त्रो व्याहृतयास्त्रिपदा गायत्रीं त्रयो वहदास्त्रयो देवास्त्रयो वर्णा स्त्रयोऽयनलश्च जायन्ते ।(शांडिल्योपनिषद,2001)

श्रीमद्भागवद् में भी तप के द्वारा ही सृष्टि की उत्पत्ति का वर्णन किया गया है। प्रलयकाल में ध्यानस्थ ब्रह्माजी को दो अक्षरों वाला तप' शब्द सुनाई दिया और इसी तप को करके वह संसार की सृष्टि करने में समर्थ हो पाये-

'स चिन्तय द्वयक्षरमेकदाम्भस्युपा-श्रृणोद द्विग्गदित बचो विभुः'। (श्रीमद्भागवत,2002)
पुराणों में भी स्वयं प्रजापति ब्रहमा द्वारा तप करके तप के सिद्धि सामर्थ्य से सृष्टि रचना की बात कही गई है –

मत्स्य पुराण कहता है कि- तपश्चचार प्रथममराणां पितामहः। आविर्भतास्ततो वहदा. सांगोपांग पदक्रमाः ।। अर्थात्- सर्वप्रथम तो देवों के पितामह ने तप किया तब सब वेदों का अविर्भाव हुआ। जो अपने अंग, उपांग, शास्त्र तथा पद एवं क्रम से संयुक्त थे। तप से पवित्रता एवं ब्रह्म की प्राप्ति- अथर्ववेद में तप रूपी पुरूषार्थ और ईश्वर भक्ति को सभी दोषों को दूर कर पवित्र करने वाला कहा गया है-

कस्ये मृजाना अति यन्ति रिप्रमायुर्दधानाः प्रतर नवीयः ।(अथर्ववेद,1998)

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि तप-साधना ही शक्ति और सिद्धि का माध्यम एवं स्त्रोत है । स्वयं ईश्वर द्वारा तप के यह विवरण स्पष्ट करते हैं कि मनुष्य के लिए अभीष्ट उपलब्धियों का यही एक मात्र मार्ग है।

तपश्चर्या के विभिन्न रूप हैं यह आन्तरिक भी होता है और बाह्य भी।

बाह्य तप-जो तपस्या स्थूल शरीर या बाहरी स्तर पर की जाती है, उसे वाह्य तप कहते हैं। जैसे व्रत करना, उपवास रखना, यानी अन्न ग्रहण न करना, खड़े रहना, सर्दी के मौसम में ठंडे पानी में रहना। इसके अतिरिक्त अप्रिय शब्द सुनकर कान बंद कर लेना, अप्रिय वस्तु देखकर आँख बन्द कर लेना, कठोरता से ब्रहमचर्य का पालन करना, अस्वाद अत, शुद्ध सात्विक अल्पमात्रा में भोजन करना इत्यादि बाह्य कठोरताओं का पालन वाह्य तप है जिससे स्थूल शरीर एवं अन्नमय कोश सधता है। बाह्य तप का साक्षात प्रभाव स्थूल-सूक्ष्म शरीर पर पड़ता है किन्तु इसका अप्रत्यक्ष प्रभाव सूक्ष्म शरीर, मन आदि पर भी पड़ता है। बाह्य तप से शरीर सम्बन्धी तपोजा सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं।

आन्तरिक तप- जो तपस्या स्थूल शरीर के बजाय मानसिक स्तर पर की जाती है वह आन्तरिक तप है। आन्तरिक तप ही श्रेष्ठ तप है। इसमें मन, बुद्धि, आदि अन्तःकरण को तपाकर उनके राग, द्वेष अहंकार आदि दोषों-मलों का नाश करना एवं इन्हे शुद्ध निर्मल बनाना होता है। आन्तरिक तप से चित्त शुद्धिजन्य सिद्धियों का प्रादुर्भाव होने लगता है। इसके अनेक अंग हैं- जैसे प्रायश्चित तप यानी पूर्वकृत भूलों-अपराधों के लिए क्षमा प्रार्थना के साथ पुनः भूल न करने का संकल्प एवं सतत प्रयास तथा जितना गड्ढा किया खेत में उतनी मिट्टी डालो' के सिद्धान्त को अपनाते हुए पाप कर्म की तुलना में उतना ही पुण्य कर्म करना, यह प्रायश्चित तप कहलाता है। इसी तरह (2) अहंभाव को छोड़ना (3) अभेद शुद्धि की स्थापना (4) स्वाध्याय (5) ध्यान (6) परोपकार तथा त्याग तितिक्षा व निष्काम कर्म सम्पादन आदि आन्तरिक तप के विविध रूप हैं|

शारीरिक, वाचिक एवं मानसिक तपः- शारीरिक, वाचिक एवं मानसिक तपः-गीता में

बाह्य एवं आन्तरिक तपों को समन्वित करते हुए शारीरिक, वाचिक एवं मानसिक तीन तरह के तप बताये गये हैं –

1. **शारीरिक तप-** यानी शरीर के स्तर पर तप करना। देवता, ब्राह्मण, गुरू और ज्ञानी आदि जैसे श्रेष्ठ जनों का सम्मान, पूजन, उनकी सेवा, स्वभाव में सरलता, स्वच्छता. विनम्रता, ब्रह्मचर्य एवं अहिंसा का पालन आदि शारीरिक तप हैं

'देवद्विज गुरूप्राज्ञ पूजनः शौचमार्जवम्।
ब्रह्मचर्यम् अहिंसा च शारीरं तप उच्यते ।।(गीता,2018)

2. वाचिक तपः- यानी वाणी सम्बन्धी दोषों का क्षय और वाणी का संयम। कभी भी उद्वेग न करना, सत्य और प्रिय वचन बोलना, असत्य, छल-कपट युक्त एवं कड़वे वचन न बोलना, वेद शास्त्रों का पठन-स्वाध्याय, ईश्वर भजन, जप एवं मौन व्रत आदि वाचिक तप हैं-

अनुद्वेगकरवाक्यं सत्यं प्रिय हितं च यत् ।
स्वाध्यायाभ्यसनं चैव वाङ्मयं तप उच्यते ।।(गीता,2018)

3. मानस तपः- - यह मन सम्बन्धी आन्तरिक तप है। मन का संयम, शान्त भाव, मानसिक पवित्रता, प्रसन्नता, विचारों की शुद्धता, सबके प्रति दया, करूणा, संवेदना, मनोनिग्रह एवं अन्तःकरण की शुद्धि आदि पवित्र भावों को सतत मन में प्रतिष्ठित करते रहना आदि मानसिक तप हैं –

मन: प्रसाद सौम्यत्व, मौनमात्मविनिग्रहः
भावसंशुद्धिरित्ये-तत्तपो मानसमुच्यते।।(गीता,2018)

सात्विक, राजस एवं तामस तप

गीता के अनुसार गुण एवं भाव के दृष्टिकोण से पुनः इन तपों के तीन भेद हैं- सात्विक तप, राजसिक तप और तामसिक तप। यदि यह तीनों तप (शारीरिक, वाचिक एवं मानसिक) श्रद्धा से एवं निष्काम भाव से किये जाते हैं तो यह सात्विक तप हैं–

श्रद्धया परया तप्तं तपस्तत् त्रिविध नरैः।
अफलाकॉक्षिभिर्युक्तैः सात्त्विकंपरिचक्षते।।(गीता,2018)

यदि यह तप फल की इच्छा से या सत्कार, सम्मान और पूजा प्राप्त करने के लिए या अन्य किसी स्वार्थ की पूर्ति के लिए अथवा दूसरों पर छाप छोड़ने के लिए पाखण्ड स्वरूप किये जा रहे हैं तो यह राजस तप हैं –

सत्कारमानपूजार्थ तपो दम्भेन चैव यत्।
क्रियते तदिह प्रोक्तं राजसं चलमधुवम।।(गीता,2018)

पुनश्च, यदि यह तप मूढता पूर्वक इंठ के साथ शरीर, वाणी और मन को कष्ट देने के लिए या किसी दूसरे का अनिष्ट करने के लिए किए जाते हैं तो यह तामस तप हैं:-

मूढग्राहेणात्मनो यत्पीडया क्रियते तपः ।
परस्योत्सादनार्थं वा तत्तामसमुदाहृतम्।।(गीता,2018)

इन तपो में सात्विक तपजन्य सिद्धि ही अधिक स्थायी एवं कल्याणकारी होती है। हमारे ऋषियों, मुनियों, सन्त, महात्माओं ने सात्विक तपोजा सिद्धि से अपना भी कल्याण किया और संसार का भी जबकि राक्षसों आदि द्वारा प्राप्त तामसिक तपोजा सिद्धियाँ तो स्वयं उनके लिए भी घातक सिद्ध हुईं और दूसरों के लिए भी।

सात्विक तप से ब्रहम की सिद्धि

तप से अनेकों सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। असम्भव को सम्भव कर दिखाने की सामर्थ्य तपस्या से ही आती है। तैतरीय उपनिषद में वर्णित प्रसंगानुसार भृगु को वरूण ने ब्रह्म सिद्धि हेतु तप का ही मार्ग बतलाया था। उनके अनुसार तप ही ब्रहम है। तपस्या के द्वारा ही ब्रह्म ही प्राप्ति होती है -

तपसा ब्रहम विजिज्ञासस्व। तपो ब्रहमेती ।।(तैतरीयोपनिषद,2014)
ब्रह्म की प्राप्ति का उपाय तप को ही बताया गया है-

'तपसा बीयते ब्रह्म' (मुण्डकोपनिषद,2014) अर्थात तप से ही ब्रह्म को जाना जाता है। तप शिव से मिलाने वाला है और तप ही क्लेश को मिटाने वाला है, जैसा कि रामचरित मानस में कहा गया है –

आन उपाय न मिटहि कलेसू।।
तप से प्रज्ञा की सिद्धि-

तप से प्रज्ञा की सिद्धि

कूर्मपुराण के अनुसार- तपस्या से उत्पन्न योगाग्नि शीघ्र ही सम्पूर्ण पाप समूहों को जलाकर नष्ट कर देती है। उन पापों के दग्ध हो जाने पर आनन्ददायक प्रतिबन्धक रहित तारक स्वरूप विवेक ज्ञान का उदय हो जाता है जिससे निर्वाण या मुक्ति की प्राप्ति हो जाती है। कूर्म पुराण के अनुसार-"योगाग्निदहति क्षिप्रमशेषं पाप पंजरम्। प्रसन्नं जायतेज्ञानं ज्ञानान्निर्वाणमृच्छति ।।

परमात्मा की सिद्धि (प्राप्ति) के साधनों में तप का प्रमुख स्थान है क्योंकि ब्रह्म स्वयं तप रूप है। परमात्मा इस शरीर के भीतर ही शुभ्र ज्योति के रूप में विद्यमान है। वह सत्य, तप, ब्रह्मचर्य और विवेक द्वारा ही प्राप्त होता है। जिसने अपने दोषों को दूर कर किया है, (तप की अग्नि में अपने दोष-दुर्गुणों को जलाकर खाक कर अपने को शुद्ध, निर्मल बना दिया), वह प्रयत्नशील साधक ही उसका दर्शन करते हैं -

सत्येन लभ्य स्तपसा ह्येष आत्मा सम्यक ज्ञानेन ब्रह्मचर्येण नित्यम्।
अन्तःशरीरे ज्योतिर्मयो हि शुभ्रो यं पश्यन्ति यतयः क्षीण दोषाः ।।
(मुण्डकोपनिषद,2014)

इसीलिए शास्त्रों में सिद्धि और मोक्ष की प्राप्ति हेतु तपस्या को श्रेष्ठतम् साधन माना गया है-तपस्या तपोत्तमम्।।(शर्मा,1998)

संसार में जो अति कठिन कार्य है, दुःसाध्य है, जिसे कोई भी अतिक्रमण करने में समर्थ नहीं होता, ऐसे दुःसाध्य कार्यों को एक मात्र तप के द्वारा ही सिद्ध किया जा सकता है और तप का अतिक्रमण कोई भी नहीं कर सकता-

"यद दुष्कर दुराराध्य दुर्जय दुरति क्रमम।
तत्सर्व तपस्या साध्यातपो हि दुरतिक्रमम्" ।।(शर्मा,1998)

अश्वघोष कृत बुद्धचरितम् में कही-सुनी बात पर विश्वास करने के बजाय तप और शम से स्वयं ही तत्त्व को जानने और उसे ग्रहण करने की बात कही गई है-

अवहत्य तत्त्वं तपसा शमेन च स्वयं ग्रहीष्यामि यदन्न निश्चयम्
।(अश्वघोष,2016)

रामचरित मानस में कहा गया है कि तप सभी दोषों को दूर कर सुख (आनन्द) प्रदायक है-तपु सुख प्रद दुख दोष नसावा।

आयुर्वेद में भी तप को स्वास्थ्य की सिद्धि देने वाला माना गया है।(सुश्रुत,2002)

तप से 'सत्त्व की प्राप्ति होती है। सत्त्व से मन का निग्रह होता है ,मन स्थिर होने पर आत्मा की प्राप्ति होती है और इस उपलब्धि से सभी दुखों के बन्धन छूट जाते हैं -

तपसा प्राप्यते सत्वं सत्त्वात् संप्राप्यतेतनः।
मनसा प्राप्यते त्वामा ह्यात्मापत्त्या निवर्तते ।।(मैत्रेयी उपनिषद,2018)

आत्म कल्याण के लिए तपस्वियों की ही शरण में जाना चाहिए। क्योंकि वह ही स्वयं पार होते हैं और दूसरों को पार कर सकने में समर्थ होते हैं–

ऋषीन्तपस्वतो यम तपोजां अभिगच्छतात्।(अथर्ववेद,1998)

श्रेय एवं प्रेय तप

कष्टसहिष्णुता , द्वन्द्वसहन का अभ्यास जब महान उद्देश्यों की पूर्ति के लिए किया जाता है तो उसे तप कहते हैं। यह भौतिक प्रयोजनों के लिए भी की जा सकती है और अध्यात्म प्रयोजनों के लिए भी। वस्तुतः शरीर और मन की भौतिक लालसाओं एवं सुख-आकांक्षाओं को विरत करके श्रेष्ठ लक्ष्य की प्राप्ति के मार्ग में नियोजित करने का नाम ही तप है। तप से आत्म शक्ति उत्पन्न होती है और उस शक्ति के द्वारा मनुष्य अनेक प्रकार के भौतिक एवं आध्यात्मिक उपलब्धियों-विभूतियों को प्राप्त करता है।

'पत' नहीं, 'तप श्रेष्ठ है

मनुष्य के सामने दो ही मार्ग है- तप या पत। यह दोनों मार्ग एक दूसरे के विपरीत हैं। तप का अर्थ है ऊपर उठना जबकि पत का अर्थ है पतित होना, नीचे गिरना। जो तप नहीं करता उसे आध्यात्मिक पतन की ओर चलना पड़ेगा और जो आत्मिक पतन से बचना चाहता है (उत्कर्ष चाहता है) उसे तपन के लिए अग्रसर होना पड़ेगा। इन दोनों में से एक ही मार्ग को चुना जा सकता है। इसीलिए शास्त्र उत्कर्ष के लिए पतन के बजाय तप मार्ग का उपदेश देते हैं।

आचार्य श्री राम शर्मा के शब्दों में 'ईश्वर केवल उन्हीं की सहायता करता है जो अपनी सहायता आप करता है। ईश्वरीय कृपा और विशेष सहायता का अधिकारी वही व्यक्ति होता है जो तपश्चर्या द्वारा अपनी प्रामाणिकता सिद्ध कर देता है। तप एक पुरूषार्थ है जिसके द्वारा सिद्धि, शान्ति, समृद्धि, स्वर्ग एवं मुक्ति जैसी सफलतायें उपार्जित की जाती हैं और पाप, ताप, विहन, संकट, प्राख्या एवं आसुरी तत्त्वों को परास्त करके अपने पौरूष का विजय घोष किया जाता है। तप के द्वारा तपस्वी को अष्ट सिद्धि और नवनिद्धियाँ कर तलगत हो सकती हैं। वह अपने को पूर्णता के अन्तिम लक्ष्य तक पहुँचा सकता है और अपने तेज (आत्म-बल) से अन्य अनेकों को प्रकाश-बल-सहयोग एवं सहायता प्रदान कर सकता है' (शर्मा,1998)|

निष्कर्ष

इस प्रकार योग के धरातल पर अवस्थित हो हर व्यक्ति तपश्चर्या की चाबी से अपने परम सौभाग्य के ताले को खोल अपनो अन्तर्निहित खजाने को हासिल कर सकता है। यह मानव जीवन में ही सम्भव है। तप चाहे भौतिक क्षेत्र में किया जाय या आध्यात्मिक, वह अपना फल सुनिश्चित देता है। भौतिक उपलब्धियाँ भी तप पुरूषार्थ का ही एक रूप हैं।

आध्यात्मिक साधना में तो तप अनिवार्यतः योग का ही एक अंग है जिसे अपनाकर मानव सम्पूर्ण उत्कर्ष- शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, भावनात्मक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक को प्राप्त कर जीवन को धन्य बना सकता है। इसीलिए कहा गया है कि- मनुष्य अपने भाग्य का निर्माता स्वयं है- मानवः स्वस्यभाग्यस्य विधाता स्वयमेव हि (शर्मा,1998)।

वर्तमान समाज की एक बड़ी समस्या तप की उपेक्षा है। श्रेय मार्गी हो या प्रेम मार्गी, अधिकांशतः आरामपसन्द स्वभाव प्रिय होने के कारण कष्ट साध्य मार्ग पर चलना पसन्द नहीं करते। तत्क्षण लाभ लोगों का उद्देश्य हो रहा है। अपने उद्देश्य की पूर्ति, सफलता, चाहे जैसे मिले मिलनी चाहिए, इसके लिए कुमार्ग, अनीति को अपनाने से अधिकांश लोगों को कोई परहेज नहीं रह गया है। देर तक जिस कार्य के लिए प्रतीक्षा करनी पड़े और आरम्भ में ही जिसके लिए कठिनाई उठानी पड़े, उसे पसन्द करने की अभिरूचि कम होती जा रही है। इस सामाजिक दुष्प्रवृत्ति का कारण तप भावना का अभाव ही है। तप में जहाँ सुख-दुख, लाभ-हानि, जय-पराजय, सर्दी-गर्मी, भूख-प्यास आदि शारीरिक मानसिक सामाजिक द्वन्द्वों का सहन है, वहीं सत्य न्याय, ईमानदारी से युक्त कठोर परिश्रम, पुरूषार्थ, प्रतीक्षा, साहस और धैर्य जैसे गुण भी हैं जो व्यक्ति और समाज के उत्कर्ष के साधन हैं। अतः स्पष्ट है कि तप का आध्यात्मिक ही नहीं, भौतिक और व्यावहारिक मूल्य एवं उपयोगिता भी है।

संदर्भ सूची

शर्मा, पंडित श्रीराम (1998). प्रज्ञोपनिषद- 3/25,जनजागरण प्रेस , अखंड ज्योति संस्थान, मथुरा

शर्मा, पंडित श्रीराम (1998). ज्ञोपनिषद- 3/2,जनजागरण प्रेस , अखंड ज्योति संस्थान, मथुरा

.पतंजलि,महर्षि(2005). योगसूत्र कैवल्यपाद-1,गीताप्रेस गोरखपुर

पतंजलि,महर्षि (2005). योगसूत्र 2/43,गीताप्रेस गोरखपुर

पतंजलि ,महर्षि(2005). योगसूत्र 3/45, गीताप्रेस गोरखपुर

पतंजलि ,महर्षि(2005). योगसूत्र 3/46, गीताप्रेस गोरखपुर

आचार्य ,शंकर(1932). विवेकचूड़ामणि-78,अद्वैत आश्रम ,राम कृष्ण मठ, कलकत्ता

पतंजलि ,महर्षि(2005). योगसूत्र 2/32, गीताप्रेस गोरखपुर

पातंजल योगसूत्र(2005). व्यास भाष्य 2/32,गीता प्रेस , गोरखपुर

शर्मा, पंडित श्री राम (1998). प्रज्ञोपनिषद¾- जनजागरण प्रेस , अखंड ज्योति संस्थान, मथुरा

शर्मा, पंडित श्रीराम (1998). प्रज्ञोपनिषद 3/5 जनजागरण प्रेस , अखंड ज्योति संस्थान, मथुरा

आचार्य चाणक्य(2019). चाणक्यसूत्र 5/85, सम्पूर्ण चाणक्य नीति , मनोज पब्लिकेशन , नई दिल्ली

महाभारत (2001). वन पर्व 313/88, गीता प्रेस ,गोरखपुर

शर्मा, (1998). पंडित श्रीराम , प्रज्ञोपनिषद पृ० 5.23 , जनजागरण प्रेस , अखंड ज्योति संस्थान, मथुरा

कठोपनिषद (2002) 2/1/6, गीताप्रेस,गोरखपुर
श्रीमद भागवत महापुराण,(2014). ,स्कन्द 2/9 ,गीताप्रेस गोरखपुर
तैत्तरीय उपनिषद (2014). ब्रह्मावल्ली-6, गीताप्रेस ,गोरखपुर
शर्मा, पंडित श्री राम (1998). प्रज्ञोपनिषद- पृ0 5.24,जनजागरण प्रेस , अखंड ज्योति संस्थान, मथुरा
प्रश्नोपनिषद,(2001). 1/4/ 5, गीताप्रेस , गोरखपुर
शान्डिल्य उपनिषद (2001), 3/1, गीता प्रेस गोरखपुर
श्रीमद्भागवद् महापुराण (2002), 2.2.7, गीताप्रेस गोरखपुर
अथर्ववेद,(1998), 18/3/17, युग निर्माण योजना , मथुरा
श्रीमद्भगवद्गीता , (2018),17/14, गीताप्रेस गोरखपुर
श्रीमद्भगवद्गीता,(2018), 17/15 , गीताप्रेस गोरखपुर
श्रीमद्भगवद्गीता,(2018), 17/16, गीताप्रेस गोरखपुर
श्रीमद्भगवद्गीता,(2018), 17/17, गीताप्रेस गोरखपुर
श्रीमद्भगवद्गीता,(2018), 17/18, गीताप्रेस गोरखपुर
श्रीमद्भगवद्गीता,(2018), 17/19, गीताप्रेस गोरखपुर
तैत्तरीय उपनिषद,(2014),भृगुवल्ली, गीताप्रेस गोरखपुर
मुण्डक उपनिषद ,(2014),1/1/8, गीताप्रेस गोरखपुर
मुण्डक उपनिषद,(2014), 3/1/5, गीताप्रेस गोरखपुर
शर्मा , पंडित श्रीराम (1998). साधना पद्धतियों का ज्ञान-विज्ञान-3/18, अखंड ज्योति संस्थान,मथुरा
शर्मा ,पंडित श्रीराम (1998). विचार सार एवं सूक्तियाँ-9/27, अखंड ज्योति संस्थान,मथुरा
अश्व घोष ,(2016). श्रीबुद्ध चरितम्-6/73, चौखम्भा विद्या भवन ,वाराणसी
सुश्रुत ,(2002). सुश्रुत संहिता , सूत्र 6/2, राष्ट्रीय आयुर्वेद विद्यापीठ
मैंत्रायण्युपनिषद् (2018), 4/3, गीताप्रेस ,गोरखपुर
अथर्ववेद,(1998), 18/2/15, युग निर्माण योजना , मथुरा
शर्मा, पंडित श्री राम (1998). प्रसुप्ति से जागृति की ओर-4.26, अखंड ज्योति संस्थान, मथुरा
शर्मा, पंडित श्रीराम (1998). प्रज्ञोपनिषद् 2.40 ,जनजागरण प्रेस , अखंड ज्योति संस्थान, मथुरा

पूर्वी उत्तर प्रदेश तराई में थारू जनजाति की साक्षरता का स्थानिक स्वरूप

डॉ. संजीव कुमार सिंह*
डॉ. अभिषेक सिंह**
सीमा सिंह***

सारांश

पूर्वी उत्तर प्रदेश का तराई भाग भारत-नेपाल की सीमा पर स्थित एक कृषि प्रधान क्षेत्र है। विपरीत भौगोलिक परिस्थितियों से व्याप्त होने के कारण यह आदिम जनजातियों का एक प्रमुख निवास्य क्षेत्र है, जिनका मुख्य उद्यम पारम्परिक कृषि है । पारिस्थिति से समायोजन एवं सामंजस्य के बावजूद शिक्षा एवं अन्य बुनियादी सुविधाओं के अभाव के कारण आज भी यह जनजातियाँ विकास की गति के अनुसार मुख्यधारा से नहीं जुड़ पाई हैं। परिणामतः यह लोग आज भी गरीबी, अशिक्षा, सामाजिक कुरीतियों से ग्रसित हैं। समाज में व्याप्त अंधविश्वास, रूढ़िवादिता, निर्धनता आदि को दूर करने में साक्षरता का महत्त्व सर्वोपरि है। इस क्षेत्र के थारू जनजाति की कुल साक्षरता 44.99 प्रतिशत है, जिसमें 55.30 प्रतिशत पुरुष एवं 34.14 प्रतिशत महिला जनजाति साक्षरता है जो राष्ट्र एवं उत्तर प्रदेश के अनुसूचित जनजाति की साक्षरता से काफी न्यून है। जिसमें महिला साक्षरता का स्तर पुरुष साक्षरता के सापेक्ष अत्यन्त दयनीय है। इस जनजाति में साक्षरता कम होने का मुख्य कारण अधिसंख्य जनसंख्या का परम्परागत कार्यों में संलग्न होना , रूढ़िवादिता, प्राचीन परम्पराएँ, निम्न आय, शिक्षा के प्रति उदासीनता, नशा का अत्यधिक सेवन, आवागमन की कम सुविधा एवं संचार माध्यम का अभाव आदि है। विशेषकर महिलाओं की प्राथमिक क्रिया-कलापों में अत्यधिक संलिप्तता के कारण महिला साक्षरता की स्थिति अतिन्यून है। अतः सरकारी एवं गैर-सरकारी विभिन्न योजनाओं को प्रभावी ढंग से लागू करके, समुदाय में शिक्षा के प्रति जनचेतना, थारू समाज में व्याप्त कुरीतियों, नशाखोरी आदि को कम करके शिक्षा के स्तर में वृद्धि किया जा सकता है । इनसे थारू जनजाति के लोगों में कार्यशीलता में वृद्धि करके आर्थिक विकास को अग्रसर किया जा सकता है।

बीज शब्द - साक्षरता, अनुसूचित जनजाति, थारू, मानव संसाधन

---

* लेखक भूगोल विभाग, दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय में पोस्ट डॉक्टोरल फेलो हैं|
** लेखक भूगोल विभाग, महाराणा प्रताप स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गोरखपुर में सहायक प्राध्यापक हैं|
*** लेखिका बेसिक शिक्षा विभाग, गोरखपुर में प्रधानाध्यापिका हैं|

प्रस्तावना:

जनसंख्या भूगोल में मात्रात्मक पक्ष के साथ उसके गुणात्मक पक्ष के अध्ययन का भी विशेष महत्व है। जनसंख्या के गुणात्मक पक्ष के अन्तर्गत उसकी ऐसी विशेषताएँ सम्मिलित हैं, जिससे मानव की योग्यता एवं कार्य क्षमता में अभिवृद्धि होती है। मनुष्य में सामाजिक मूल्यों का विकास उसके गुणात्मक पक्ष पर ही आधारित होता है। साक्षरता एवं शैक्षिक योग्यता मानव का ऐसा गुणात्मक पक्ष है, जिससे जीवन दर्शन में सुधार अभिव्यक्त होता है। साक्षरता एवं शिक्षा के प्रचार-प्रसार में समाज रूढ़िवादी एवं परम्परागत विचारों से मुक्ति पाकर प्रगतिवादी दृष्टिकोण अपनाता है जिससे उसके जीवन में सुधार आता है। इससे मनुष्य का रहन-सहन एवं उसके विचार प्रभावित होते हैं। साक्षरता जनसंख्या का वह सामाजिक पक्ष है, जिसके आधार पर किसी भी क्षेत्र के सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक विकास का मापदण्ड निर्धारित किया जा सकता है। वस्तुतः साक्षरता के विकास से मनुष्य सीमित परिवेश से बाहर निकलकर सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक प्रवृत्तियों से अन्योन्याश्रित सम्बन्ध स्थापित करता है, जिससे इकाई के रूप में मानव ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण समाज विकास के क्रम में आगे बढ़ता जाता है। मानव का ज्ञान सबसे बड़ा संसाधन है, क्योंकि यह सभी संसाधनों का जनक है। मानव का ज्ञान ही किसी वस्तु या पदार्थ में संसाधनता उत्पन्न करने में ध्रुवीय भूमिका निभाता है। शिक्षा एवं ज्ञान मानव को आदर्श मानव का रूप देने में परम उपयोगी है, ज्ञान एवं शिक्षा के विकास के लिए साक्षरता प्रथम सोपान है। वह व्यक्ति जो किसी भी भाषा में पढ़-लिख सकता है, साक्षर कहलाता है (Census of India, 1971)। साक्षरता किसी भी क्षेत्र के सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक विकास में सूचकांक के रूप में प्रयुक्त होती है। चाँन्दना एवं सिद्धू (Chandana, R.C. and Sindhu, M.S., 1980) के अनुसार, साक्षरता का योगदान, निर्धनता उन्मूलन, मानसिक अलगाव को कम करने, अन्तर्राष्ट्रीय शांति एवं मैत्री सम्बन्धों को स्थापित करने तथा जनांकिकीय प्रक्रियाओं के स्वतन्त्र विकास को निर्धारित करने में बहुत अधिक सहायक होता है।

साक्षरता की कमी किसी भी राष्ट्र के सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक विकास तथा राजनैतिक परिपक्वता में अवरोधक का काम करती है। साक्षरता का प्रभाव दूसरे सामाजिक एवं जनांकिकीय पक्षों यथा - रोजगार एवं आय के अवसर, व्यावसायिक संरचना, जीवन-शैली, रहन-सहन के स्तर, वैवाहिक स्वरूप, धार्मिक विश्वास, वैवाहिक ढंग, जन्मदर, मृत्युदर एवं स्थानान्तरण पर बहुत अधिक होता है (Maurya, 2009)। व्यक्तित्त्व के सर्वांगीण विकास के लिए शिक्षा एक महत्त्वपूर्ण उपादान है। आधुनिक युग में शिक्षा मानव का एक अति विशिष्ट गुण है। यह निर्विवाद रूप से व्यक्ति, समाज, क्षेत्र एवं राष्ट्र सभी स्तरों

पर सामाजिक एवं आर्थिक विकास का मूल आधार प्रस्तुत करती है। शिक्षा न केवल सामाजिक एवं आर्थिक विकास प्रक्रिया में सहायक होती है, अपितु इसका प्रसार किसी क्षेत्र या समाज विशेष के सर्वांगीण विकास का द्योतक भी माना जाता है। साक्षरता क्षेत्र विशेष के सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्वरूप को प्रभावित करती है, इसलिए इसको क्षेत्र विशेष की सामाजिक एवं सांस्कृतिक विकास की कुंजी कहा गया है (Chandana, 2001)। साक्षरता से मानव संसाधन की गुणवत्ता में जहाँ एक ओर वृद्धि होती है, वहीं दूसरी ओर संसाधन उपयोग के स्वरुप में परिवर्तन परिलक्षित होता है जिससे सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक प्रगति का मार्ग प्रशस्त होता है। वहीं समाज में व्याप्त अंधविश्वास, रूढ़िवादिता, सामाजिक भेदभाव, निर्धनता आदि को दूर करने में साक्षरता का महत्व सर्वोपरि है। प्रस्तुत अध्ययन पूर्वी उत्तर प्रदेश तराई में थारू जनजाति की साक्षरता का स्थानिक स्वरुप इसी शृंखला की एक कड़ी है।

अध्ययन क्षेत्र

भौतिक एवं सांस्कृतिक आधार पर पूर्वी उत्तर प्रदेश तराई एक पतली पट्टी के आकार में पूर्वी उत्तर प्रदेश के उत्तर में अवस्थित बहराइच जनपद के मिहिनपुरवा एवं नवाबगंज विकासखण्ड, श्रावस्ती जनपद के जमुनहा, हरिहरपुररानी तथा सिरसिया विकासखण्ड, बलरामपुर जनपद के हरैयासतघर्वा, तुलसीपुर, गैसड़ी, पचपेड़वा एवं बलरामपुर विकासखण्ड, सिद्धार्थनगर जनपद के इटवा, भनवापुर, खुनियाव, बढ़नी, बर्डपुर, शोहरतगढ़, नौगढ़, जोगिया, उस्काबाजार, बाँसी एवं लोटन विकासखण्ड, महराजगंज जनपद के नौतनवा, लक्ष्मीपुर, बृजमनगंज, फरेन्दा, निचलौल, मिठौरा, महराजगंज, घुघली एवं सिसवा विकासखण्ड तथा कुशीनगर जनपद के खड्डा, नेबुआनौरंगिया तथा विशुनपुरा विकासखण्ड सम्मिलित हैं। इस प्रकार अध्ययन क्षेत्र में बहराइच जनपद के दो विकासखण्ड, श्रावस्ती जनपद के तीन विकासखण्ड, बलरामपुर जनपद के पाँच विकासखण्ड, सिद्धार्थनगर जनपद के ग्यारह विकासखण्ड, महराजगंज जनपद के नौ विकासखण्ड तथा कुशीनगर जनपद के तीन विकासखण्ड अर्थात कुल तैंतीस विकासखण्ड सम्मिलित किये गये हैं, जो एक विशिष्ट भौगोलिक क्षेत्र जिसे पूर्वी उत्तर प्रदेश तराई कहते हैं, का निर्माण करते हैं। इस क्षेत्र का अक्षांशीय विस्तार, 26० 55' उत्तर से 28० 19' उत्तर तथा देशान्तरीय विस्तार 81० 4' पूर्व से 84० 2' पूर्व तक है। इस क्षेत्र की अधिकतम लम्बाई 325 कि0मी0 एवं चौड़ाई 40 कि0मी0 के लगभग है, जिसका सम्पूर्ण क्षेत्रफल 9917.44 वर्ग कि0मी0 है (चित्र-1)।

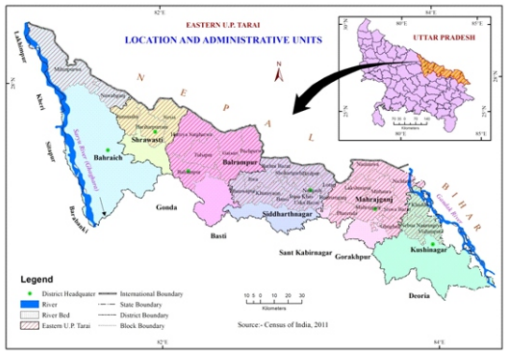

चित्र 1

प्राकृतिक एकाकीपन, समतल भूमि, अपेक्षाकृत मन्द ढाल, वर्षा की अधिकता, बाढ़ एवं जलप्लावित क्षेत्र की प्रचुरता, अति आर्द्र जलवायु, जंगलों की अधिकता, मच्छरों एवं कीटों की अधिकता, जल एवं कीट जनित बीमारी, गरीबी, पिछड़ापन आदि इस क्षेत्र की विशेषताएँ हैं। समतल उर्वरक भूमि का आधिक्य, खनिजों की विपन्नता एवं मानवीय संसाधन सम्पन्नता आदि के कारण यहाँ की सम्पूर्ण भूमि कृषि के अधीन है। मानव के स्वास्थ्य व बसाव हेतु प्रतिकूल यह क्षेत्र अपेक्षाकृत विरल जनसंख्या, परन्तु विपन्नता एवं जनजातीय बहुलता रखने वाला एक विशिष्ट भौगोलिक आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र है।

अध्ययन का उद्देश्य

पूर्वी उत्तर प्रदेश तराई के जनजाति थारू जनजाति के नाम से जाने जाते हैं। यह लोग विकास की सामान्य व्यवस्थाओं एंव आधारभूत सुविधाओं विशेषतः शिक्षा से दूर अभी भी प्रारम्भिक दशा में जीवन-यापन कर रहे हैं जिससे इस समुदाय में अन्धविश्वास, रूढ़िवादिता, सामाजिक भेद-भाव, निर्धनता आदि व्याप्त है। इन सब असामाजिक व्यवस्थाओं को दूर करने में साक्षरता का महत्त्व सर्वोपरि है। वहीं दूसरी तरफ शिक्षा से व्यक्ति के कार्यशीलता में वृद्धि होकर आर्थिक विकास के प्रति अग्रसर होता है। उक्त तथ्यों के आलोक में पूर्वी उत्तर प्रदेश तराई में थारू जनजाति की साक्षरता का स्थानिक स्वरुप के अध्ययन का मुख्य उद्देश्य निम्न है -

1. अध्ययन क्षेत्र के थारू जनजाति की कुल साक्षरता का स्थानिक वितरण का विवेचन करना
2. विवेच्य क्षेत्र के थारू जनजाति की पुरुष साक्षरता एवं स्त्री साक्षरता का विश्लेषण करना
3. थारू जनजाति की साक्षरता को प्रभावित करने वाले कारकों का निरूपण करना

आंकड़ा स्रोत एवं विधितंत्र

पूर्वी उत्तर प्रदेश तराई क्षेत्र भारत के उत्तर प्रदेश एवं नेपाल के सीमावर्ती 6 जनपदों के 33 विकासखण्डों में विस्तृत है। इस क्षेत्र की जनजाति थारू जनजाति के नाम से जानी जाती है। यह लोग गरीबी, पिछड़ेपन एवं अशिक्षा के साथ प्रकृति से सामंजस्य बनाकर अपना जीवन-यापन कर रहे हैं। इस समुदाय के साक्षरता अध्ययन हेतु द्वितीयक आंकड़ों का संकलन जनगणना निदेशालय, उत्तर प्रदेश, लखनऊ से जनगणना पुस्तिका, जिला मुख्यालय से जिला सांख्यिकीय पत्रिका एवं अन्य कार्यालयों से आंकड़ों को एकत्रित कर किया गया है। आंकड़ों की सत्यता की परख हेतु व्यक्तिगत सर्वेक्षण से आंकड़ों का चयन किया गया है। आंकड़ों के एकत्रीकरण हेतु 33 विकासखण्डों की लगभग 39 प्रतिशत अर्थात् 13 विकासखण्डों के 200 परिवारों से प्रश्नावलियों को भरकर आंकड़ों को संग्रहीत किया गया है। थारु जनजाति के परिवारों के सर्वेक्षण हेतु चयन के लिए समानुपातिक प्रतिचयन विधि का प्रयोग करते हुए उनका चयन किया गया है।

उपरोक्त विधियों से प्राप्त आंकड़ों को संगणक (Computer) में डालकर सारणीयन किया गया है, जिसका विश्लेषण एसपीएसएस सॉफ्टवेयर के माध्यम से किया गया है। प्राप्त निष्कर्षों की व्यापक समझ के लिए संगणकों के माध्यम से भौगोलिक सूचना तंत्र के माध्यम से मैंनिफोर्ड/आर्कव्यू जीआइएस सॉफ्टवेयर का उपयोग कर आरेखों एवं मानचित्रों का निर्माण किया गया है, ताकि निष्कर्ष तथ्यगत एवं प्रभावयुक्त बन सके।

पूर्वी उत्तर प्रदेश तराई में थारू जनजाति की साक्षरता

साक्षरता किसी भी समाज के मानव विकास सूचकांक का एक प्रमुख संकेतक है। आधुनिक युग में शिक्षा मानव का एक विशिष्ट गुण है जो निर्विवाद रूप से व्यक्ति, समाज, क्षेत्र एवं राष्ट्र सभी स्तरों पर सामाजिक एवं आर्थिक विकास का मूल आधार प्रस्तुत करती है। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार पूर्वी उत्तर प्रदेश तराई में निवसित थारू जनजाति की कुल साक्षरता 44.99 प्रतिशत है, जबकि पुरुष साक्षरता 55.30 प्रतिशत एवं महिला साक्षरता 34.14 प्रतिशत है (तालिका - 1 एवं चित्र. 2)।

उक्त वर्ष में राष्ट्र की कुल अनुसूचित जनजाति की साक्षरता 59.0 प्रतिशत एवं पुरुष तथा महिला साक्षरता क्रमशः 68.5 प्रतिशत एवं 49.35 प्रतिशत है। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार उत्तर प्रदेश की कुल अनुसूचित जनजाति की साक्षरता 55.67 प्रतिशत जबकि पुरुष साक्षरता 67.08 प्रतिशत एवं महिला साक्षरता 43.72 प्रतिशत है। इस प्रकार स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र की जनजातीय साक्षरता राष्ट्र की कुल जनजातीय साक्षरता, पुरुष अनुसूचित जनजाति साक्षरता एवं महिला जनजाति साक्षरता से क्रमशः 14.01 प्रतिशत, 13.2 प्रतिशत एवं 15.21 प्रतिशत कम है।

तालिका - 1

भारत, उ0प्र0 एवं पूर्वी उ0प्र0 तराई: अनुसूचित जनजाति की साक्षरता, 2011

	कुल साक्षरता (प्रतिशत में)	पुरुष साक्षरता (प्रतिशत में)	महिला साक्षरता (प्रतिशत में)
भारत	59.00	68.50	49.35
उत्तर प्रदेश	55.67	67.80	43.72
पूर्वी उ0प्र0 तराई	44.99	55.30	34.14

स्रोत: Census of U.P. and India, 2011

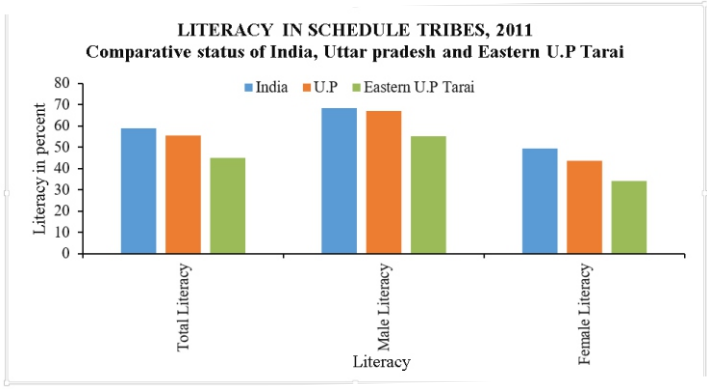

चित्र. 2

इसी प्रकार उत्तर प्रदेश की कुल जनजातीय साक्षरता, पुरुष जनजाति साक्षरता एवं महिला जनजाति साक्षरता से क्रमशः 10.68 प्रतिशत, 11.78 प्रतिशत तथा 9.58 प्रतिशत न्यून है।

थारू जनजाति की कुल साक्षरता

वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार पूर्वी उ0प्र0 तराई में थारू जनजाति की कुल औसत साक्षरता 44.99% है, जो अतिन्यून है। थारू जनजाति की कुल साक्षरता, पुरूष साक्षरता एवं महिला साक्षरता को तालिका-2 एवं चित्र-3 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका-2 एवं चित्र-3 से स्पष्ट है कि सबसे न्यून थारू जनजाति की कुल साक्षरता बहराइच जनपद (37.44%) है, जबकि सबसे अधिक थारू जनजाति की कुल साक्षरता महराजगंज जनपद में 56.26% है। क्षेत्र के शेष जनपदों में थारू जनजाति की कुल साक्षरता क्षेत्रीय औसत 44.99% के आस-पास है। थारू जनजाति की कुल साक्षरता स्तर के क्षेत्रीय प्रतिरूप का अध्ययन पाँच वर्गों के द्वारा चित्र-4 में प्रदर्शित किया गया है।

1. अति उच्च साक्षरता (>60%)

इस वर्ग के अन्तर्गत कुल चार विकासखण्ड हैं जो कुल विकासखण्डों का 12.12 प्रतिशत हैं, जिसमें थारू जनजाति की साक्षरता स्तर 60% से अधिक है। इसके अन्तर्गत तुलसीपुर 73.53%, हरैयासतघर्वा 72.97%, हरिहरपुररानी 63.33% एवं नौतनवा 61.85% विकासखण्ड में थारू जनजाति साक्षरता अति उच्च है।

2. उच्च साक्षरता (55%-60%)

इस क्रम में सम्पूर्ण क्षेत्र के मात्र तीन विकासखण्ड हैं, जिसमें थारू जनजाति की साक्षरता 55% से 60% के मध्य है। जिसमें महराजगंज 57.84%, लोटन 57.52% एवं फरेन्दा 57.41% विकासखण्ड हैं।

तालिका - 2

पूर्वी उत्तर प्रदेश तराई: थारू जनजाति की कुल साक्षरता, पुरूष साक्षरता एवं महिला साक्षरता, 2011

जनपद	कुल साक्षरता (%में)	पुरुष साक्षरता (%में)	महिला साक्षरता (%में)
बहराइच	37.44	45.53	29.31
श्रावस्ती	34.44	43.22	26.80
बलरामपुर	40.82	51.86	29.40
सिद्धार्थनगर	46.59	57.19	35.64
महराजगंज	56.26	67.52	44.61
कुशीनगर	48.56	59.56	37.87
पूर्वी उ0प्र0 तराई	44.99	55.30	34.14

स्रोत: जनगणना, 2011 (www.censusindia.gov.in)

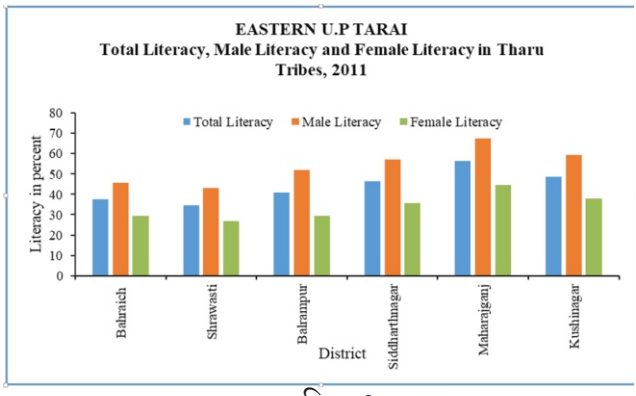

चित्र. 3

3. मध्यम साक्षरता (50%-55%)

इस संवर्ग के अन्तर्गत क्षेत्र के सिसवा, उस्का बाजार, बलरामपुर, लक्ष्मीपुर एवं निचलौल विकासखण्ड हैं, जिसमें थारू जनजाति की कुल साक्षरता क्रमशः 52.41%, 51.72%, 51.19%, 51.14% एवं 51.13% है।

4. निम्न साक्षरता (45%-50%)

इस वर्ग के अन्तर्गत अध्ययन क्षेत्र के कुल 8 विकासखण्ड हैं, जो सम्पूर्ण विकासखण्ड के 24.24% हैं, जिनमें थारू जनजाति की कुल साक्षरता 45% से 50% के मध्य है। यह विकासखण्ड विवेच्य क्षेत्र के दक्षिणी एवं पूर्वी भागों में अवस्थित हैं।

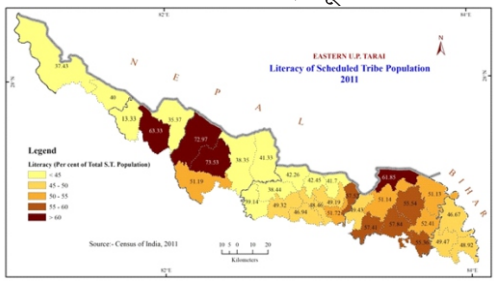

चित्र. 4

5. अति निम्न साक्षरता (<45%)

इस वर्ग के अन्तर्गत क्षेत्र के 11 विकासखण्ड हैं जो सम्पूर्ण विकासखण्ड का 33% हैं, जिसमें थारू जनजाति की कुल साक्षरता बहुत ही निम्न है। इसमें संवर्ग में न्यूनतम साक्षरता जमुनहा विकासखण्ड में 13.33% है जबकि इस वर्ग की अधिकतम साक्षरता शोहरतगढ़ विकासखण्ड में 42.45% है।

थारू जनजाति की पुरुष साक्षरता

पूर्वी उत्तर प्रदेश तराई में थारू जनजाति की औसत पुरूष साक्षरता 55.30% है। क्षेत्र में जनपदवार थारू जनजाति पुरूष साक्षरता स्तर को तालिका-2 में प्रदर्शित किया गया है। तालिका से स्पष्ट है कि सबसे न्यून पुरूष साक्षरता श्रावस्ती जनपद (43.22%) में है एवं सबसे अधिक पुरूष साक्षरता महराजगंज जनपद (67.52%) में है। शेष जनपदों में थारू जनजाति की पुरूष साक्षरता क्षेत्रीय औसत 55.30 प्रतिशत थारू जनजाति पुरूष साक्षरता के समतुल्य है।

अध्ययन क्षेत्र के पुरूष थारू जनजाति की साक्षरता का विश्लेषण पाँच वर्ग के अन्तर्गत किया गया है जिसे चित्र-5 में प्रदर्शित किया गया है।

1. अति उच्च पुरूष साक्षरता (>65%)

अति उच्च पुरूष साक्षरता स्तर संवर्ग में आलोच्य क्षेत्र के कुल 9 विकासखण्ड हैं, जो सम्पूर्ण विकासखण्ड के 27% हैं जिसकी साक्षरता 65% से अधिक है। इस वर्ग में सर्वाधिक पुरूष साक्षरता तुलसीपुर विकासखण्ड में 85.71% एवं सबसे न्यून पुरूष साक्षरता 65.16% घुघली विकासखण्ड में है।

2. उच्च पुरूष साक्षरता (60%-65%)

पुरूष साक्षरता के इस वर्ग में विवेच्य क्षेत्र के कुल 7 विकासखण्ड हैं, जो सम्पूर्ण विकासखण्ड के 21% हैं। क्षेत्र के इन विकासखण्डों में सिसवा 64.64%, लक्ष्मीपुर 64.26%, उस्का बाजार 64.18%, बलरामपुर 64.13%, नेबुआनौरंगिया 61.74% एवं बृजमनगंज 61.63% थारू जनजाति पुरूष साक्षरता है।

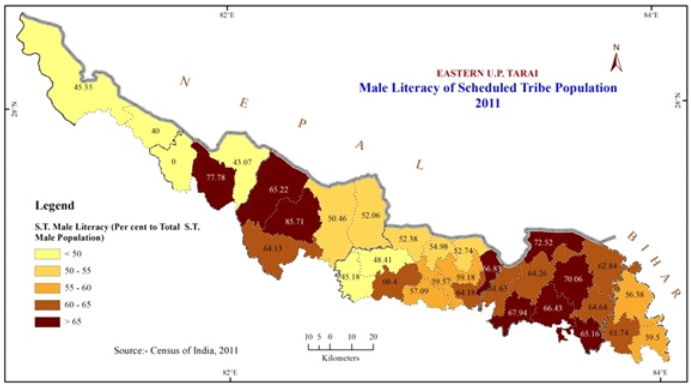

चित्र. 5

3. मध्यम पुरूष साक्षरता (55%-60%)

इस संवर्ग में अध्ययन क्षेत्र के पाँच विकासखण्ड नौगढ़, जोगिया, विशुनपुरा, बाँसी एवं खड्डा हैं। जिसमें थारू जनजाति पुरूष साक्षरता क्रमशः 59.57%, 59.57%, 59.50%, 57.52% एवं 56.38% है।

4. निम्न पुरूष साक्षरता (50%-55%)

इस श्रेणी में 50% से 55% के मध्य थारू जनजाति में पुरूष साक्षरता रखने वाले विकासखण्डों की संख्या चार है, जो अध्ययन क्षेत्र के मध्यवर्ती उत्तरी भाग में अवस्थित है।

5. अति निम्न पुरूष साक्षता (<50%)

इस वर्ग के अन्तर्गत विवेच्य क्षेत्र के कुल 6 विकासखण्ड सम्मिलित हैं, जो सम्पूर्ण

विकासखण्ड के 18% हैं। इस श्रेणी के अन्तर्गत जमुनहा विकासखण्ड में पुरूष साक्षरता शून्य है, जबकि नवाबगंज 40%, सिरसिया 43.07%, भनवापुर 45.18%, मिहिनपुरवा 45.55% एवं इटवा 48.41% पुरूष साक्षरता का स्तर है, जो अतिन्यून है । यह विकासखण्ड अध्ययन क्षेत्र के पश्चिमी एवं मध्य दक्षिणी भाग में अवस्थित हैं।

थारू जनजाति की महिला साक्षरता

महिलाएँ परिवार एवं समाज को एक सुदृढ़ स्वरूप प्रदान करती हैं। यही कारण है कि महिलाओं की अच्छी स्थिति ही हमें एक अच्छा समाज प्रदान कर सकती है। पिछले कुछ दशकों से सरकार द्वारा एवं सामाजिक चेतना से किये गये अनेक उपायों से इनकी स्थिति वर्तमान समय में, समाज के प्रत्येक क्षेत्र में बेहतर है। इन प्रयासों में जो सबसे सशक्त उपाय है, वह है महिलाओं को शिक्षा प्रदान करना।

उक्त तथ्य को दृष्टिगत रखते हुए पूर्वी उ0प्र0 तराई में थारू जनजाति की महिलाओं की साक्षरता का अध्ययन करना आवश्यक है। महिला साक्षरता दर पुरूष साक्षरता दर की तुलना में काफी कम है। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार अध्ययन क्षेत्र में क्षेत्रीय औसत थारू जनजाति की महिला साक्षरता 34.14% है। महिला साक्षरता के क्षेत्रीय प्रतिरूप का अध्ययन पाँच श्रेणियों में किया गया है, जिसे चित्र. 6 में प्रदर्शित किया गया है।

1. अति उच्च महिला साक्षरता (>45%)

थारू जनजाति की महिला साक्षरता स्तर के इस वर्ग में अध्ययन क्षेत्र के मात्र 6 विकासखण्ड सम्मिलित हैं, जिनमें महिला साक्षरता 45% से अधिक है। सबसे अधिक महिला साक्षरता हरैयासतघर्वा विकासखण्ड में 85.71% है । इसके बाद तुलसीपुर, नौतनवा, महराजगंज, लोटन एवं फरेन्दा विकासखण्ड में क्रमशः 53.85%, 50.86%, 48.70%, 46.89%, एवं 46.53% थारू जनजाति महिला साक्षरता है, जो क्षेत्रीय सन्दर्भ में अति उच्च है।

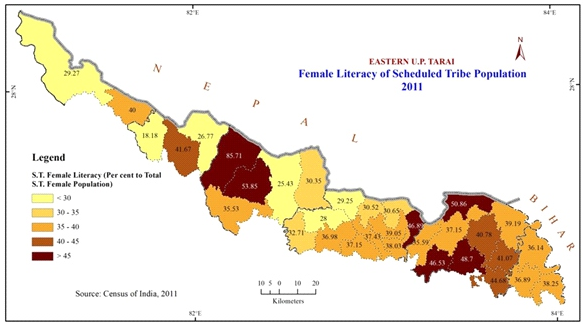

चित्र. 6

2. उच्च महिला साक्षरता (40%-45%)

इस संवर्ग में पूर्वी उ0प्र0 तराई के पाँच विकासखण्ड हैं। जिसमें घुघली 44.68%, हरिहरपुररानी 41.67%, सिसवा 41.07% एवं मिठौरा में 40.78% थारू जनजाति महिला साक्षरता है।

3. मध्यम महिला साक्षरता (35%-40%)

इस वर्ग में विवेच्य क्षेत्र के 13 विकासखण्ड सम्मिलित हैं जो सम्पूर्ण विकासखण्ड के 39% हैं जिसमें साक्षरता स्तर 35% से 40% के मध्य है। इस श्रेणी में सबसे अधिक महिला साक्षरता नवाबगंज विकासखण्ड में 40% है, जबकि सबसे कम बलरामपुर विकासखण्ड में 35.53% है। क्षेत्रीय स्तर पर इनका विस्तार अध्ययन क्षेत्र के दक्षिणी एवं पूर्वी भागों में है।

4. निम्न महिला साक्षरता (30%-35%)

इसके अन्तर्गत क्षेत्र के मात्र 4 विकासखण्ड हैं, जिनमें भनवापुर 32.71%, बर्डपुर 30.65%, शोहरगढ़ 30.52% एवं पचपेड़वा में 30.35% महिला साक्षरता है जो निम्न स्तर को दर्शाता है।

5. अति निम्न महिला साक्षरता (<30%)

यह वर्ग थारू जनजाति के महिला साक्षरता के अत्यन्त ही दयनीय स्तर को प्रदर्शित करता है, जहाँ महिला साक्षरता 30% से कम है। इस श्रेणी में आलोच्य क्षेत्र के 6 विकासखण्ड सम्मिलित हैं, जिसमें सबसे अधिक महिला साक्षरता बढ़नी विकासखण्ड में 29.25% एवं सबसे न्यून महिला साक्षरता जमुनहा विकासखण्ड में 18.18% है।

निष्कर्ष:

पूर्वी उत्तर प्रदेश के थारू जनजाति की कुल साक्षरता, पुरुष साक्षरता एवं महिला साक्षरता के विश्लेषण से स्पष्ट है कि इस जनजाति में साक्षरता का स्तर बहुत ही निम्न है जिसमें महिला साक्षरता का स्तर पुरुष साक्षरता के अपेक्षाकृत अत्यन्त दयनीय है। थारू जनजाति के साक्षरता प्रतिरूप में क्षेत्रीय विभिन्नता स्पष्ट दृष्टिगत है। थारू जनजाति का कुल साक्षरता स्तर अध्ययन क्षेत्र के दक्षिणी-पूर्वी भागों में उच्च है, वहीं पश्चिमी एवं मध्यवर्ती भागों में निम्न है। इसी प्रकार थारू जनजाति की पुरुष साक्षरता एवं महिला साक्षरता के क्षेत्रीय प्रतिरूप में भिन्नता है। विवेच्य क्षेत्र के पश्चिमी भाग में जहाँ पुरुष साक्षरता अति न्यून है, वही मध्यवर्ती, दक्षिणी एवं पूर्वी भागों में पुरुष साक्षरता उच्च एवं अति उच्च है। जबकि महिला साक्षरता का निम्न स्तर अध्ययन क्षेत्र के बहराइच, श्रावस्ती, बलरामपुर एवं

सिद्धार्थनगर जनपद के कुछ विकासखण्डों में है, जबकि मध्यवर्ती, दक्षिणी एवं पूर्वी भागों में स्थित विकासखण्डों में महिला साक्षरता का स्तर उच्च या अति उच्च है । इस प्रकार अध्ययन क्षेत्र का वह भाग जो नगरीय केन्द्रों के समीपस्थ है, आवागमन की सुविधा, संचार साधनों का होना, अवस्थापनात्मक सुविधाओं का विकास, शिक्षा सुविधा का विकास, शिक्षा केन्द्रों की स्थापना, सामाजिक चेतना तथा सरकारी एवं गैर-सरकारी सुविधाओं को प्राप्त करने की जिज्ञासा आदि कारकों से साक्षरता का स्तर उच्च है। लेकिन क्षेत्र का वह भाग जहाँ वनों की अधिकता, प्राथमिक क्रियाकलापों में अत्यधिक संलग्नता, शिक्षा के प्रति उदासीनता, आवागमन की सुविधा का अभाव, संचार साधनों का भाव एवं विपरीत प्राकृतिक परिस्थितियों के कारण साक्षरता का स्तर अतिन्यून है।

अध्ययन क्षेत्र के थारू जनजाति की कुल साक्षरता 44.99 प्रतिशत है जिसमें पुरुष साक्षरता 55.30 प्रतिशत एवं महिला साक्षरता 34.14 प्रतिशत है। स्पष्ट है कि इस जनजाति की साक्षरता अभी भी बहुत न्यून है। जिसका मुख्य कारण थारू जनजाति की अधिसंख्य जनसंख्या का परम्परागत कार्यों, रूढ़िवादिता, प्राचीन परम्पराएँ, जीवन निर्वाहक , निम्न आय, शिक्षा के प्रति उदासीनता, नशा का अत्यधिक सेवन आदि कारकों से साक्षरता का स्तर अति न्यून है। विशेषकर महिलाओं की प्राथमिक क्रियाकलापों जैसे जंगल से लकड़ी काटना, कुक्कुट पालन, बकरी पालन आदि कार्यों में अत्यधिक संलिप्तता के कारण महिला साक्षरता की स्थिति अति न्यून है। अतः सरकारी एवं गैर-सरकारी विभिन्न योजनाओं को प्रभावी ढंग से क्रियान्वित करके और शिक्षा के प्रति चेतना जाग्रत करके, थारू समाज में व्याप्त अंधविश्वास एवं कुरीतियाँ, नशाखोरी को कम करके, बच्चों को प्राथमिक क्रिया-कलापों से निवृत करके साक्षरता के स्तर में वृद्धि किया जा सकता है। जिससे थारू समाज की योग्यता एवं कार्य क्षमता में अभिवृद्धि करके आर्थिक विकास को अग्रसर किया जा सकता है।

आभार

प्रस्तुत शोध प्रपत्र भारतीय सामाजिक विज्ञान अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली द्वारा स्वीकृत पोस्ट डॉक्टोरल फोलोशिप के दौरान किये गए अध्ययनों पर आधारित है अतः भारतीय सामाजिक विज्ञान अनुसंधान परिषद , नई दिल्ली को आर्थिक सहयोगार्थ सादर आभार|

संदर्भ सूची

Census of India, (1971): Uttar Pradesh, A Portrait of Population, P.88.

Chandana R.C. and Sidhu, M.S.(1980): Introduction to Population Geography, Kalyani Publishers, New Delhi, P.96

Maurya,S.D.(2009): "Population Geography", Sharda Pustak Bhawan, Allahabad, P.325.

Chandna, R.C.(2001): "Population of Geography", Kalyani Publishers, New Delhi, P.233.

सिंह वीरेन्द्र एवं सिंह, संजीव कुमार (2017): "थारू जनजाति अर्थव्यवस्था एवं समाज" ए०एस०आर० पब्लिकेशन्स, लखनऊ, पृष्ठ संख्या. 63.

सिंह संजीव कुमार (2017): "मध्य गंगा मैंदान में जल प्रबन्धन एवं प्रादेशिक विकास", भारती प्रकाशन वाराणसी, पृष्ठ संख्या. 104-105.

Krauskopff, G.(1995) : "The Anthropology of Tharus: An Annoted Bibliography (PDF) Kailash, 17 (3/4) 185-213.

Kochar, V.K.(1963): "Size and Composition of Families in Tharu Village", Vanyajati, Kailash, 11,PP. 99-106.

Govila, T.P. (1959) : "The Tharu of Terai and Bhabar", Indian Folklore Kailash,2,PP. 228-248.

यादव , निरुपमा ,(2007): "देवीपाटन मण्डल के भारत नेपाल तराई क्षेत्र में थारु महिलाओं का स्तर तथा प्रजनन दर : एक भौगोलिक अध्ययन" अप्रकाशित शोध प्रबन्ध, भूगोल विभाग, दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर |

पादप संरक्षण में ऊतक संवर्धन तकनीक की भूमिका

डॉ. मनोज कुमार राय*
रोशनी राठौर**

सारांश

पादप जैव विविधता के रखरखाव के लिए व्यावसायिक और औषधीय रूप से महत्वपूर्ण पौधों की प्रजातियों का प्रबंधन और संरक्षण अत्यंत आवश्यक है। पिछले कुछ दशकों में जैव प्रौद्योगिकी विशेष रूप से पादप ऊतक संवर्धन के क्षेत्र में हो रहे निरंतर विकास ने तरह-तरह के पौधों के संरक्षण के लिए एक नया मार्ग प्रशस्त किया है। पादप ऊतक संवर्धन आधारित इन विट्रो कल्चर तकनीक पौधों विशेष रूप से दुर्लभ और लुप्तप्राय प्रजातियों के संरक्षण का एक वैकल्पिक और उपयोगी विकल्प प्रदान करती है। पादप ऊतक संवर्धन तकनीक में पौधे की किसी भी कोशिका, प्रोटोप्लास्ट या फिर एक छोटे से भाग जैसे शूट टिप्स, माइक्रोकटिंग, फूलों की कलियाँ, पत्तियाँ, परागकोष, भ्रूण इत्यादि का उपयोग कर प्रयोगशाला में बड़े पैमाने पर अधिक संख्या में नए-नए पौधों का विकास किया जाता है जिन्हे बाद में पारिस्थितिक अनुकूलन के बाद फील्ड में स्थानांतरित कर दिया जाता है।

पादप ऊतक संवर्धन तकनीक द्वारा व्युत्पन्न एक्सप्लांट्स जैसे शूट टिप्स, माइक्रो कटिंग, सोमैंटिक भ्रूण, प्रोटोप्लास्ट आदि का उपयोग स्लो ग्रोथ स्टोरेज विधि द्वारा लघु से मध्यम अवधि और क्रायोप्रिजर्वेशन विधि द्वारा दीर्घावधि के लिये जर्मप्लाज्म के संरक्षण में किया जाता है। स्लो ग्रोथ स्टोरेज तकनीक का उपयोग करके किसी पौधे के जर्मप्लाज्म को कुछ महीनों से लेकर 1-2 साल तक संरक्षित किया जा सकता है। क्रायोप्रिजर्वेशन पादप आनुवंशिक संसाधनों के दीर्घकालिक संरक्षण के लिए एक आदर्श और सबसे व्यवहारिक तकनीक है। कई सीमाओं के वावजूद, दोनों स्लो ग्रोथ स्टोरेज और क्रायोप्रिजर्वेशन विधियों को अब नियमित रूप से पौधों की प्रजातियों के संरक्षण के लिए उपयोग किया जाता है। इस शोध समीक्षा पत्र में इन विट्रो कल्चर तकनीक की भूमिका और पौधों की जैव विविधता के संरक्षण में उनके अनुप्रयोगों और सीमाओं पर चर्चा की गई है। इसके अतिरिक्त स्लो ग्रोथ स्टोरेज और क्रायोप्रिजर्वेशन द्वारा पादप जर्मप्लाज्म के लघु से मध्यम और दीर्घकालिक संरक्षण पर हाल की प्रगति को भी प्रस्तुत किया गया है।

बीज शब्द- ऊतक, एक्सप्लांट्स, इन विटरो कल्चर

* लेखक पर्यावरण विज्ञान विभाग, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय, अमरकंटक में सहायक प्राध्यापक हैं |
** लेखिका पर्यावरण विज्ञान विभाग, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय, अमरकंटक में शोधरत हैं |

प्रस्तावना

मानव सभ्यता की प्रगति के साथ-साथ, कई महत्वपूर्ण पौधे हमारे आहार, दवाओं, व्यवसाय और संस्कृति का एक अभिन्न अंग बनते गए। हालांकि जलवायु परिवर्तन, और मानवजनित कई गतिविधियों जैसे पौधों पर आधारित उत्पादों के अत्यधिक उपयोग और पादप संसाधनों का दोहन, प्रदूषण, पौधों के प्राकृतिक आवास का विनाश और विखंडन के कारण, कई पौधों की प्रजातियां अब गंभीर खतरे में हैं। इसलिए दुर्लभ और लुप्तप्राय पौधों की प्रजातियों के संरक्षण के लिए पारंपरिक इन-सीटू और टिशू कल्चर-आधारित इन विट्रो संरक्षण रणनीति अपनाने की आवश्यकता है। कुछ विशिष्ट प्रजातियों का संरक्षण इन-सीटू संरक्षण रणनीति के तहत उनके प्राकृतिक आवास में व्यावहारिक रूप से मुश्किल है। इसलिए इन-सीटू संरक्षण विधि के विकल्प के रूप में, कई पौधों के जर्मप्लाज्म को एक्स-सीटू संरक्षण के तहत बीज या फील्ड जीन बैंकों में संरक्षित किया जाता है (Engelmann, 2011)। हालाँकि फील्ड जीन बैंक में पौधों की सामग्री के रखरखाव में जर्मप्लाज्म वितरण के दौरान माइक्रोबियल संक्रमण और रोग हस्तांतरण का एक अतिरिक्त जोखिम होता है (Rai et al., 2009)। प्लांट टिश्यू कल्चर तकनीक, जिसे हिंदी में ऊतक संवर्धन तकनीक के नाम से भी जाना जाता है, में कई प्रकार के एक्सप्लांट्स जैसे शूट टिप्स, माइक्रोकटिंग, फूलों की कलियाँ, पत्तियाँ, परागकोष, भ्रूण इत्यादि का उपयोग कर के बड़े पैमाने पर अधिक संख्या में नए नए पौधों का विकास किया जाता है (चित्र संख्या 1 क-घ)। इसके अतिरिक्त इन एक्सप्लांट्स का उपयोग स्लो ग्रोथ स्टोरेज विधि द्वारा लघु से मध्यम अवधि और क्रायोप्रिजर्वेशन विधि द्वारा दीर्घावधि के लिये जर्मप्लाज्म के संरक्षण में किया जाता है (Engelmann, 2011)। पादप ऊतक संवर्धन आधारित एक्स-सीटू संरक्षण विधि पौधों के जर्मप्लाज्म के संरक्षण और रखरखाव में बहुत कारगर है, विशेष रूप से संकटग्रस्त प्रजातियां, विशिष्ट जीनोटाइप, अलैंगिक रूप से प्रसारित प्रजातियां, या खराब अंकुरण दर वाले पौधे।

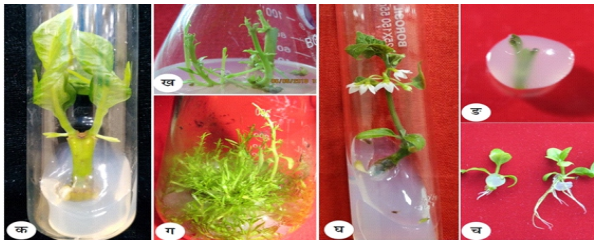

चित्र संख्या 1: पादप ऊतक संवर्धन तकनीक द्वारा पौधों का पुनर्जनन और सिंथेटिक बीज का निर्माण

(क) नोडल एक्सप्लांट से नए शूट्स का निकलना (ख) नोडल एक्सप्लांट से कई शूट्स का प्रसार (ग) शूट्स का बड़े पैमाने पर गुणन (घ) इन विट्रो स्थिति में फूल खिलना (ङ) एक सिंथेटिक बीज (च) सिंथेटिक बीज का पौधा बनना

इस शोध समीक्षा पत्र में ऊतक संवर्धन तकनीक की पादप संरक्षण में भूमिका साथ ही विशेष रूप से लघु से मध्यम अवधि के साथ-साथ दीर्घकालिक संरक्षण में इसके उपयोग पर चर्चा की गई है। चित्र संख्या 2 में लघु से मध्यम और दीर्घकालिक अवधि के लिये जर्मप्लाज्म संरक्षण के लिए अपनाई गई विभिन्न रणनीतियों का एक योजनाबद्ध चित्रण प्रस्तुत किया गया है।

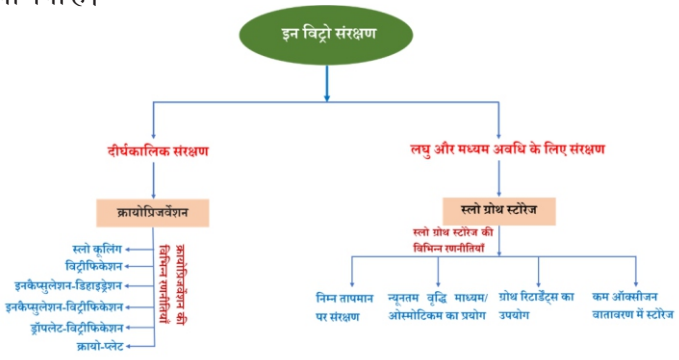

चित्र संख्या 2: लघु से मध्यम और दीर्घकालिक अवधि के लिये जर्मप्लाज्म संरक्षण के लिए अपनाई गई विभिन्न रणनीतियाँ

जर्मप्लाज्म संरक्षण के लिए इन विट्रो प्रौद्योगिकी का अनुप्रयोग

कई पौधों की कुछ विशेष प्रजातियों ख़ास तौर से उष्णकटिबंधीय फसलों, फलदायी और वन वृक्षों में ऐसे बीज पाए जाते हैं जिन्हें लंबे समय तक संरक्षित नहीं किया जा सकता है और वह जल्दी खराब हो जाते हैं। उच्च उपापचयी दर और कवक संदूषण की उच्च आवृत्ति के कारण इन पौधों में बीज भंडारण सफल नहीं होता है। इस तरह की कठिनाइयाँ, पादप संरक्षण में इन-सीटू या अन्य एक्स-सीटू संरक्षण विधियों के उपयोग को चुनौतीपूर्ण बनाती हैं। उच्च गुणन दर के कारण, पादप ऊतक संवर्धन तकनीक ऐसे पौधे को लघु से मध्यम अवधि या लंबी अवधि के लिए संरक्षण में सहायक होती है। यह जर्मप्लाज्म एक्सचेंज और वितरण के लिए रोग मुक्त स्टॉक सामग्री भी सुनिश्चित करता है। इन विट्रो कल्चर तकनीक में, पौधे के किसी भी हिस्से को पूरे साल स्टोर करने के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है और भंडारण के लिए बीज सामग्री की भी आवश्यकता नहीं होती है। इसका मतलब है कि प्लांट टिशू कल्चर आधारित जर्मप्लाज्म संरक्षण मौसम पर निर्भर नहीं करता है। इन विट्रो संरक्षण तकनीक का एक अन्य महत्वपूर्ण अनुप्रयोग यह है कि कई महत्वपूर्ण

पौधों के जर्मप्लाज्म का संरक्षण तुलनात्मक रूप से छोटी जगह और सूक्ष्मजीव मुक्त परिस्थितियों में होता है (Rai et al., 2009; Engelmann, 2011; Reed et al., 2011) । इन विट्रो कल्चर तकनीक का उपयोग करके किसी पौधे के जर्मप्लाज्म को कुछ महीनों से लेकर कई वर्षों तक संरक्षित किया जा सकता है जिसमें स्टोरेज के बाद उसके पुनर्जनन क्षमता पर कोई विशेष प्रभाव नहीं होता है । यद्यपि टिशू कल्चर से उत्पन्न पौधों की आनुवंशिक अस्थिरता मुख्य चिंताओं में से एक है। हालांकि कई अध्ययनों से यह साबित हो चुका है कि उपयुक्त स्टोरेज स्थितियों और संरक्षित सामग्रियों का उपयोग कर पौधों की आनुवंशिक स्थिरता को रक्षित किया जा सकता है (Reed et al., 2011; Chauhan et al., 2019)। आजकल, कई जंगली, औषधीय और संकटग्रस्त पौधों की प्रजातियों का संरक्षण बहस का मुद्दा है । हाल के वर्षों में मुख्य भोजन और फलों की फसलों, कई व्यावसायिक और औषधीय पौधों, विशिष्ट जीनोटाइप, दुर्लभ और लुप्तप्राय पौधों की प्रजातियों के संरक्षण के लिए इन विट्रो संरक्षण तकनीक का कुशलतापूर्वक उपयोग किया गया है (Bhojwani & Dantu, 2013)।

सिंथेटिक बीज और इसका पादप संरक्षण में उपयोग

प्लांट टिशू कल्चर और इनकैप्सुलेशन तकनीक पर आधारित सिंथेटिक बीज एक अन्य वैकल्पिक जैव-प्रौद्योगिकी उपकरण है जिसका उपयोग जर्मप्लाज्म को संरक्षित और विनिमय और वितरण करने में किया जाता है (Ara et al., 2000; Rai et al., 2009; Sharma et al., 2013; Faisal & Alatar, 2019)। इन विट्रो व्युत्पन्न सोमैंटिक भ्रूण या एपिकल या एक्सिलरी शूट बड्स आदि को कृत्रिम रूप से इनकैप्सुलेट करके सिंथेटिक बीज तैयार किया जाता है (चित्र संख्या १ ङ-च)। पिछले कुछ वर्षो में सिंथेटिक बीज का उपयोग और इसका जर्मप्लाज़्म के संरक्षण में भागीदारी का व्यापक रूप से कई पौधों में अध्ययन किया गया है (Rai et al., 2008a; Singh et al., 2009, 2010; Verma et al., 2010; Sharma et al., 2013; Faisal & Alatar, 2019) । सिंथेटिक बीज प्रौद्योगिकी का पादप जर्मप्लाज्म के संरक्षण में उपयोग मुख्यतः स्लो ग्रोथ स्टोरेज संवर्धन तकनीक पर आधारित है जिसमें सिंथेटिक बीज को भिन्न प्रकार की विकास-सीमित परिस्थितियों में संग्रहीत किया किया जाता है जैसे निम्न तापमान पर संरक्षण, न्यूनतम वृद्धि माध्यम या कल्चर मीडिया में ओस्मोटिकम का प्रयोग, ग्रोथ रिटार्डेंट्स का उपयोग इत्यादि (तालिका संख्या 1)।

लघु और मध्यम अवधि के लिए पादप संरक्षण

इन विट्रो कल्चर तकनीक का उपयोग करके लघु और मध्यम अवधि के लिए

पादप जर्मप्लाज्म के संरक्षण के लिए दो मुख्य रणनीतियाँ हैं। पहली रणनीति पौधे की वृद्धि को बाधित किए बिना सामान्य वृद्धि की स्थिति में संरक्षित करने पर आधारित है। इस पद्धति में पादपसंवर्धन को आम तौर पर एक नए कल्चर मीडिया में क्रमिक स्थानांतरण द्वारा स्थापित किया जाता है। हालांकि क्रमिक स्थानांतरण द्वारा स्थापित पादपसंवर्धन की कुछ मुख्य कमियां हैं जैसे समय लेने वाली प्रक्रिया, उच्च श्रम लागत, पोषक तत्वों की अधिक खपत और पादपसंवर्धन को बनाए रखने के लिए अन्य आवश्यक सामग्री इत्यादि।

दूसरी रणनीति 'स्लो ग्रोथ स्टोरेज' संवर्धन तकनीक पर आधारित है जिसमें पौधे के जर्मप्लाज्म को विकास-सीमित परिस्थितियों में संग्रहीत किया किया जाता है और इस प्रकार संवर्धन स्थानांतरण अंतराल को कुछ महीनों से लेकर 1-2 साल तक बढ़ाया जा सकता है। इस रणनीति का मुख्य उद्देश्य स्टोरेज के बाद उनका जीवित रहना है और पुनर्जनन क्षमता को प्रभावित किए बिना दो संवर्धन स्थानांतरण के बीच की अवधि का विस्तार करना है। स्लो ग्रोथ स्टोरेज के तहत पादप जर्मप्लाज्म के संरक्षण के लिए अपनाई गई रणनीतियों में निम्न तापमान पर संरक्षण, माध्यम में पोषक तत्वों को न्यूनतम करके पौधे की न्यूनतम वृद्धि करना, या पौधे की वृद्धि को सीमित करने के लिए ग्रोथ रेटार्डेंट या ऑस्मोटिकम का प्रयोग शामिल है। पौधों में धीमी वृद्धि आमतौर पर भौतिक या रासायनिक कारकों को बदलकर प्राप्त की जाती है जो कोशिकाओं की उपापचयी गतिविधि को प्रभावित करते हैं। रासायनिक और भौतिक कारकों के अलावा कई अन्य कारक जैसे कि एक्सप्लांट्स के प्रकार, एक्सप्लांट्स की शरीर-क्रियात्मक स्थिति, विभिन्न प्रकार के कल्चर वहसेल्स, कल्चर वहसेल्स का आयतन आदि भी कल्चर के धीमी वृद्धि को निर्धारित करते हैं। पिछले दो-तीन दशकों के दौरान, स्लो ग्रोथ स्टोरेज तकनीक का उपयोग करके समशीतोष्ण और उष्णकटिबंधीय मूल के कई पौधों को अल्पकालिक से मध्यम अवधि के लिए सफलता पूर्वक संरक्षित किया गया है (Chauhan et al., 2019) (तालिका संख्या 1)।

1. निम्न तापमान पर संरक्षण

अधिकांश पौधों की प्रजातियों को स्लो ग्रोथ स्टोरेज के लिए 4 डिग्री सेल्सियस पर संग्रहित किया जाता है। हालांकि इष्टतम भंडारण के लिए आवश्यक तापमान प्रजातियों से प्रजातियों में भिन्न हो सकता है और यह प्रजातियों की ठंड संवेदनशीलता पर निर्भर करता है। उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों की कई पौधों की प्रजातियां आमतौर पर ठंड के प्रति संवेदनशील होती हैं। इसलिए इन प्रजातियों को तुलनात्मक रूप से उच्च तापमान, यानी 10-22 डिग्री सेल्सियस या कभी-कभी साधारण तापमान जैसेकि 25±2 डिग्री सेल्सियस पर संग्रहित किया जाता है। कुछ पौधों में, कम तापमान और कम रोशनी या पूरी तरह से अंधेरे में कल्चर का रखना जर्मप्लाज्म के संरक्षण के लिए फायदेमंद होता है। पादप

कोशिका/ऊतक की वृद्धि कम तापमान पर धीमी हो जाती है क्योंकि यह कोशिका झिल्ली को मोटा कर देती है और कोशिका विभाजन और उसकी वृद्धि को या तो धीमा या फिर रोक देती है (Chauhan et al., 2019)। एक्सप्लांट्स की वृद्धि में कमी के लिए कल्चर्स को उनके सक्रिय तापमान से नीचे के तापमान पर ही रखा जाना चाहिए। इस तापमान पर कल्चर्स की वृद्धि धीमी हो जाती है लेकिन पूरी तरह से नहीं रूकती है। इसके अलावा, इस तापमान पर न सिर्फ वह जीवित रह सकते हैं बल्कि कम तापमान के कारण कोशिकाओं में हुई क्षति और मैंक्रोमोलेक्यूल्स की विकृतीकरण को भी कम कर सकते हैं। पिछले दो-तीन दशकों के दौरान बहुत सारे पौधों के जर्मप्लाज़्म को निम्न तापमान पर संरक्षित किया गया है जिनमें से कुछ प्रमुख इस प्रकार हैं अमरूद (Rai et al., 2008a), अकरकरा (Singh et al., 2009), भृंगराज (Singh et al., 2010), मकोय (Verma et al., 2010), स्वीट चेस्टनट (Capuana & Lonardo, 2013), मैंस्टिक ट्री (Koc et al., 2014), आलूबुखारा (Gianní & Sottile, 2015), पिटुनिया (El-Hawaz et al., 2019) इत्यादि।

2. न्यूनतम वृद्धि माध्यम या कल्चर मीडिया में ओस्मोटिकम का प्रयोग

हाल के वर्षों में कल्चर मीडिया में ओस्मोटिकम का प्रयोग करके या मीडियम की पोषक संरचना में परिवर्तन करके पौधों की वृद्धि को धीमी कर उसे सीमित समय के लिए संरक्षित करने के उपयोग में लाया जा रहा है। पौधों के संरक्षण की यह रणनीति कई प्रजातियों के संरक्षण में व्यापक रूप से सफल कारगर साबित हुई है। जिन ओस्मोटिकम का प्रयोग पौधों की वृद्धि को सीमित करने में किया जाता है उसमे सुक्रोस और शुगर अल्कोहल जैसे कि मैंनिटोल और सोर्बिटोल प्रमुख हैं। ऑस्मोटिकम बढ़ते पौधों के लिए पानी की उपलब्धता को कम कर देता है और पानी की कमी के कारण तनाव की स्थिति पैदा करता है जो कोशिका विभाजन को रोकता है और पौधों की वृद्धि को सीमित करता है। इसके अतिरिक्त कल्चर मीडिया में शुगर की सांद्रता, पोषक तत्वों या ग्रोथ रेगुलेटर्स को कम करके भी पौधों की वृद्धि को सीमित किया जाता है। कई अध्ययनों ने यह साबित किया है कि मीडियम में ओस्मोटिकम मिलाने से पौधों की कई प्रजातियों को 6 महीने से लेकर कुछ वर्षो तक संरक्षित किया जा सकता है। उदाहरण के लिए न्यूनतम वृद्धि माध्यम तकनीकी को उपयोग में लाकर आलू के सूक्ष्म पौधों को बिना उप-संवर्धन के 18 महीने तक संग्रहीत किया गया है। आलू की धीमी वृद्धि के लिए सबसे अच्छी भंडारण स्थिति (Murashige and Skoog,1962) मीडियम में प्राप्त की गई जब उसमें 2% सुक्रोज और 4% सोर्बिटोल मिलाया गया, फलस्वरूप पौधों की जीवित रहने की अधिकतम दर 58% पायी गई (Gopal & Chauhan, 2010)। कल्चर मीडिया में सुक्रोज कार्बन स्रोत के रूप में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। सुक्रोज सांद्रता में परिवर्तन पौधों की वृद्धि पर महत्वपूर्ण

प्रभाव डालते हैं। कल्चर मीडिया में पोषक तत्व की कमी या सुक्रोज या अन्य कार्बोहाइड्रेट स्रोतों की कमी करके पौधों की वृद्धि को सीमित करना पादप संरक्षण का एक अन्य प्रभावी तरीका है। हाल ही में गन्ना की एक प्रजाति को कम पोषक तत्वों और सुक्रोस के अधिक सांद्रता (10 %) वाले कल्चर मीडिया में रखकर 48 महीनों के लिए संरक्षित करने में सफलता पायी गई (Banasiak & Snyman, 2017)।

3. ग्रोथ रिटार्डेंट्स का उपयोग

इन विट्रो परिस्थितियों में पौधों की वृद्धि को कम करने के लिए कल्चर मीडिया में विभिन्न ग्रोथ रिटार्डेंट्स का उपयोग एक सामान्य व उपयोगी प्रक्रिया है। स्लो ग्रोथ स्टोरेज के लिए उपयोग किए जाने वाले कुछ महत्वपूर्ण ग्रोथ रिटार्डेंट्स में एब्सिसिक एसिड (एबीए), मैंलिक हाइड्राज़ाइड (एमएच), पैक्लोबुट्राज़ोल (पीबीजेड), ट्रांस-सिनामिक एसिड (टीसीए), क्लोरोकोलाइन क्लोराइड एन-डाइमिथाइल एमिनो स्यूसिनैमिक एसिड (डीएसए), और फ्लरप्रिमिडोल शामिल हैं। यह ग्रोथ रिटार्डेंट्स या प्लांट ग्रोथ इनहिबिटर प्राकृतिक/सिंथेटिक यौगिक हैं जो इन विट्रो रीजेनरेटेड प्लांटलेट्स की वृद्धि को कम करते हैं। कल्चर मीडिया में ऐसे ग्रोथ रिटार्डेंट्स के उपयोग से स्लो ग्रोथ स्टोरेज के दौरान उप-संवर्धन अंतराल में वृद्धि होती है। ज्यादातर मामलों में स्लो ग्रोथ स्टोरेज के लिए एब्सिसिक एसिड (एबीए) को ग्रोथ रिटार्डेंट्स के रूप में इस्तेमाल किया गया है (Rai et al., 2011)। उदाहरण के लिए अमरूद के सोमैंटिक भ्रूण से बनाये गए सिंथेटिक बीज के अंकुरण को अस्थायी रूप से रोकने व उसके इन विट्रो संरक्षण के लिए एब्सिसिक एसिड का सफलता पूर्वक प्रयोग किया गया और यह पाया गया कि एब्सिसिक एसिड अमरूद के सिंथेटिक बीज को संरक्षित करने में सहायक है (Rai et al., 2008b)। कई फायदों के बावजूद स्लो ग्रोथ स्टोरेज में ग्रोथ रिटार्डेंट्स के उपयोग की कुछ सीमाएं भी हैं। कुछ पौधों की प्रजातियों में, ग्रोथ रिटार्डेंट्स पर संग्रहीत पुनर्जीवित पौधे असामान्य वृद्धि प्रदर्शित करते हैं और पुनर्विकास के बाद अविकसित होते हैं। इसके अलावा कुछ ग्रोथ रिटार्डेंट्स के उत्परिवर्तन गुणों के कारण संग्रहित पौधों में आनुवंशिक परिवर्तन की संभावना रहती है।

तालिका संख्या 1: स्लो ग्रोथ स्टोरेज तकनीक का उपयोग कर जर्मप्लाज़्म संरक्षण के मौजूदा दशक में प्रकाशित कुछ चयनित रिपोर्ट्स

पौधे का नाम	पौधे का वैज्ञानिक नाम	संरक्षण रणनीतियाँ	स्टोरेज अवधि	संदर्भ
अकरकरा	स्पाइलैंथस एकमेला	4 डिग्री सेल्सियस पर इनकैप्सुलेटेड शूट टिप्स का	2 महीने	सिंह तथा अन्य

अमरुद	सिडियम गुआजावा	इनकैप्सुलेटेड शूट टिप्स और इनकैप्सुलेटेड सोमैटिक भ्रूण का क्रमशः 4 डिग्री सेल्सियस और एबीए युक्त मीडियम पर स्टोरेज	2 महीने	राय तथा अन्य. (2008a, b)
आलू	सोलैनम ट्यूबरोसम	सुक्रोज और सोर्बिटोल का उपयोग	18 महीने	गोपाल तथा चौहान (2010)
आलूबुखारा	प्रूनस डोमेस्टिका	अंधेरे में 4 डिग्री सेल्सियस पर स्टोरेज	12 महीने	गिन्नी तथा सोट्टिले (2015)
गन्ना	सैकरम स्पीशीज	न्यूनतम वृद्धि माध्यम में उच्च सुक्रोज सांद्रता का उपयोग	48 महीने	बानासियाक तथा स्नाइमैन (2017)
पिटुनिया	पिटुनिया × ह्यब्रिडा	12 डिग्री सेल्सियस और कम सुक्रोज और कम रोशनी में स्टोरेज	32 सप्ताह	अल-हवाज तथा अन्य (2019)
ब्राम्ही	बाकोपा मोंनिएरी	खनिज तेल ओवरले का उपयोग	6-24 महीने	शर्मा तथा अन्य (2012)
भृगराज	एक्लिप्टा अल्बा	4 डिग्री सेल्सियस पर इनकैप्सुलेटेड नोडल सेगमेंट का स्टोरेज	2 महीने	सिंह तथा अन्य (2010)
मकोय	सोलैनम नाइग्रम	4 डिग्री सेल्सियस पर इनकैप्सुलेटेड शूट टिप्स का स्टोरेज	2 महीने	वर्मा तथा अन्य (2010)
मुलेठी	ग्लीसीर्रहीजा ग्लाब्रा	कोल्ड स्टोरेज, पीईजी या मैनिटोल का उपयोग, प्लांट ग्रोथ रिटार्डेंट एबीए का उपयोग	6 महीने	श्रीवास्तव तथा अन्य . (2013)
वूल ग्रेप्स	वाइटिस हेनीआना	धीमी वृद्धि के लिए एब्सिसिक एसिड और मैनिटोल का उपयोग	12 महीने	पैन तथा अन्य . (2014)
मैस्टिक ट्री	पिस्टेसिया लेंटिसकस	अंधेरे में 4 डिग्री सेल्सियस पर स्टोरेज	12 महीने	कोन तथा अन्य . (2014)
सफेद मूसली	क्लोरोफाइटम बोरीविलियेनम	न्यूनतम वृद्धि माध्यम में उच्च सुक्रोज सांद्रता का उपयोग	4 महीने	चौहान तथा अन्य (2016)
स्वीट चेस्टनट	कस्टेनिया सटाइवा	4 डिग्री सेल्सियस पर स्टोरेज	12 महीने	कैपुआना तथा लोनार्डो (2013)

4. कम ऑक्सीजन वातावरण में स्टोरेज

कल्चर वहसेल्स में उपलब्ध ऑक्सीजन स्तर को कम करके पौधों की वृद्धि को सीमित करना एक अन्य उपयोगी और लघु-से-मध्यम अवधि के संरक्षण का वैकल्पिक माध्यम है। ऑक्सीजन के स्तर को कम करने का सबसे आसान तरीका खनिज तेल के साथ ऊतक को ओवरले करना है। खनिज तेल कल्चर वहसेल्स में उपलब्ध ऑक्सीजन स्तर को कम करता है जिसके परिणामस्वरूप कुछ हफ्तों से महीनों तक पौधों की वृद्धि को सीमित किया जा सकता है। एक अध्ययन में खनिज तेल ओवरले का उपयोग करके ब्राम्ही के जर्मप्लाज्म को 12 महीनों के लिए संरक्षित करने में सफलता पायी गई (Sharma et al., 2012)। हालांकि कई पौधों की प्रजातियों में यह तकनीक उतनी सफल नहीं है। संग्रहीत पौधों का स्टोरेज के बाद पुनः विकसित न होना या बहुत कम विकसित होना, विट्रिफाइड शूट का विकास, और कल्चर वहसेल्स में ऑक्सीजन स्तर को बनाये रखना इस तकनीक के साथ कुछ मुख्य समस्याएं और चुनौतियां है।

5. एक से अधिक स्लो ग्रोथ स्टोरेज रणनीतियों का संयोजन

कई बार एक से अधिक स्लो ग्रोथ स्टोरेज रणनीतियों को आपस में मिलाकर कई पौधों की प्रजातियों को अलग-अलग अवधि के लिए संरक्षित किया जाता है। अधिकांश अध्ययनों में स्लो ग्रोथ स्टोरेज के लिए पौधों को आमतौर कम तापमान पर रखने के साथ-साथ कल्चर मीडिया में या तो शुगर या पोषक तत्वों को कम करके या फिर कल्चर मीडिया में ग्रोथ रिटार्डेंट्स को मिलाकर कर अलग-अलग समयावधि के लिए संरक्षित करते हैं। कई मायनो में एक से अधिक रणनीतियों के संयोजन की तकनीक किसी एक तकनीक को उपयोग में लाने की तुलना में अधिक कारगर है। एक उत्कृष्ट उदाहरण में मुलेठी के शूट एपिक्स को छह महीने के लिए सफलता पूर्वक संरक्षित किया गया, जब इसे दो ग्रोथ रिटार्डेंट्स, एंसीमिडोल और एबीए, और एक ऑस्मोटिकम पॉलीइथाइलीन ग्लाइकॉल (पीईजी) वाले माध्यम पर संग्रहीत किया गया, और साथ में कम तापमान (10 डिग्री सेल्सियस) पर अंधेरे में रखा गया (Srivastava et al., 2013)।

क्रायोप्रिजर्वेशन द्वारा दीर्घकालिक संरक्षण

पौधों के दीर्घकालिक संरक्षण के लिए आजकल एक नयी जैव प्रौद्योगिकी तकनीक का इस्तेमाल हो रहा है जिसे क्रायोप्रिजर्वेशन कहते हैं। इस तकनीक में तरह-तरह के जर्मप्लाज्म जिसमें पौधों के अलग-अलग हिस्सों जैसे बीज, पराग, फूलों की कलियों, जड़ों, कंदों, जाइगोटिक भ्रूण या फिर इन विट्रो तकनीक से उत्पन्न जर्मप्लाज्म जैसे शूट टिप्स, माइक्रो कटिंग, सोमैंटिक भ्रूण, प्रोटोप्लास्ट को तरल नाइट्रोजन में अति-निम्न तापमान (-

196 डिग्री सेल्सियस) पर स्टोर किया जाता है । पौधों के आनुवंशिक संसाधनों के दीर्घकालिक संरक्षण के लिए यह एक आदर्श, व्यवहारिक और सबसे उपयोगी तकनीक है (Engelmann, 2004; 2011; Reed et al., 2011)। क्रायोप्रिजर्वेशन में अति-निम्न तापमान पर कोशिका विभाजन और कोशिकाओं की अन्य उपापचयी गतिविधिया निलंबित हो जाती हैं, जिससे जर्मप्लाज्म की व्यवहार्यता लंबी अवधि के लिए सुनिश्चित रहती है। पादप ऊतक संवर्धन तकनीक क्रायोप्रिजर्वेशन के लिए जर्मप्लाज्म के कई अंग और ऊतक उपलब्ध कराती है। वायरस मुक्त और आनुवंशिक रूप से स्थिर पौधों के प्रत्यक्ष पुनर्जनन के कारण कई पौधों की प्रजातियों में क्रायोप्रिजर्वेशन के लिए शूट टिप सबसे अच्छे विकल्पों में से एक है । वैकल्पिक रूप से, सोमैंटिक भ्रूण, प्रोटोप्लास्ट और अन्य एक्सप्लांटस का भी क्रायोप्रिजर्वेशन के लिए उपयोग किया जाता है (Normah et al., 2019)।

सबसे पारंपरिक क्रायोप्रिजर्वेशन विधि जिसमें स्लो कूलिंग विधि शामिल है इसमें तरल नाइट्रोजन में विसर्जन से पहले एक्सप्लांट्स को शुरू में आमतौर पर -40 डिग्री सेल्सियस के तापमान पर रखा जाता है। 1990 के दशक में प्रौद्योगिकी में तेजी से प्रगति ने निर्जलीकरण और विट्रिफिकेशन प्रक्रियाओं के आधार पर तीन अलग-अलग क्रायोप्रिजर्वेशन तकनीकों को जन्म दिया जिन्हें आमतौर पर 'विट्रिफिकेशन,' 'इनकैप्सुलेशन-विट्रिफिकेशन' और 'इनकैप्सुलेशन-डिहाइड्रेशन' के रूप में जाना जाता है (Engelmann, 2004; 2011; Reed et al., 2011) । विट्रिफिकेशन तकनीक में, एक्सप्लांटस को पहले निर्जलीकरण के लिए क्रायोप्रोटेक्टेंट्स के विट्रीफाइंग घोल से उपचारित किया जाता है और फिर फ्रीजिंग के लिए तरल नाइट्रोजन में रखा जाता है। अन्य दो क्रायोप्रिजर्वेशन तकनीक इनकैप्सुलेशन तकनीक पर आधारित हैं, जिसमें एक्सप्लांट्स को शुरू में कैल्शियम एल्जिनेट जेल में इनकैप्सुलेट करते हैं, फिर या तो फिजिकल डिहाइड्रेशन प्रक्रिया से द्वारा उसको डिहाइड्रेट करते हैं (इनकैप्सुलेशन-डिहाइड्रेशन में) या क्रायोप्रोटेक्टेंट्स के विट्रिफाइंग सॉल्यूशन से ट्रीट करते हैं (इनकैप्सुलेशन-विट्रिफिकेशन में) । विट्रिफिकेशन पर आधारित दोनों तकनीकों, यानी 'विट्रिफिकेशन' और 'इनकैप्सुलेशन-विट्रिफिकेशन' व्यवहारिक रूप से अधिक उपयोगी हैं क्योंकि विट्रिफिकेशन सॉल्यूशन में एक्सप्लांट्स पर्याप्त रूप से निर्जलित होते हैं। इसके अलावा क्रायोप्रोटेक्टेंट्स कोशिकाओं या ऊतकों में बर्फ के क्रिस्टल के गठन को रोकते हैं और इंट्रा-सेलुलर बर्फ क्रिस्टलीकरण द्वारा ऊतक क्षति की रक्षा करते हैं (Engelmann, 2011; Reed et al., 2011; Normah et al., 2019)।

पिछले दो दशकों में क्रायोप्रिजर्वेशन की दो नयी 'ड्रॉपलेट विट्रिफिकेशन' और

'क्रायोप्लेट' तकनीकें खोजी गयी हैं जो तकनीक के मामले में पारंपरिक स्लो कूलिंग और दूसरी क्रायोप्रिजर्वेशन विधियों से अधिक विकसित हैं। इन दोनों तकनीकों में एक्सप्लांट्स को शुरू में एक एल्यूमीनियम पन्नी पर ड्रॉपलेट के रूप में या फिर एल्यूमीनियम क्रायो-प्लेट्स पर क्रायोप्रोटेक्टिव घोल के साथ रखा जाता है जिसमें क्रायोप्रोटेक्टिव सॉल्यूशन की बहुत कम मात्रा की आवश्यकता होती है फलस्वरूप कूलिंग के बाद री-वार्मिंग की दर बढ़ जाती है। इससे न सिर्फ क्रायो-प्रक्रिया के दौरान होने वाले एक्सप्लांट्स को नुकसान का जोखिम कम हो जाता है बल्कि पौधों की रिग्रोथ दर भी बढ़ जाती है। इन सभी क्रायोप्रिजर्वेशन तकनीकों के अनुप्रयोग आज के परिपेक्ष्य में अत्यंत प्रासंगिक हैं और इन तकनीकों का उपयोग कर विभिन्न प्रकार के पौधों की कई प्रजातियों को दीर्घकालीन अवधि के लिए संरक्षित किया गया है जिनमें फल, कंद, सजावटी पौधे, वन वृक्ष, औषधीय पौधों की प्रजातियां और दुर्लभ और लुप्तप्राय पौधों की प्रजातियां शामिल हैं।

निष्कर्ष

पिछले दो से तीन दशकों में इन विट्रो कल्चर प्रौद्योगिकी में हुई हालिया प्रगति ने कई दुर्लभ और लुप्तप्राय पौधों की प्रजातियों के संरक्षण का मार्ग प्रशस्त किया है। लघु से मध्यम अवधि के लिए पादप ऊतक संवर्धन तकनीक आधारित स्लो ग्रोथ स्टोरेज विधियों और दीर्घकालिक रखरखाव के लिए क्रायोप्रिजर्वेशन की भूमिका पादप संरक्षणवादी और पर्यावरणविद लोगों के बीच अच्छी तरह से स्थापित हुई है। आधुनिक जैव प्रौद्योगिकी उपकरणों के प्रयोग और इन विट्रो प्रौद्योगिकी में लगातार नए-नए शोधो ने पौधों के संरक्षण के लिए एक वैकल्पिक विकल्प और नया रास्ता खोला है जहाँ किसी भी दुर्लभ और लुप्तप्राय प्रजाति को विलुप्त होने से बचाया जा सकता है। हालांकि पादप संरक्षण की कई नयी-नयी तकनीकें और रणनीतियाँ खोजी गयी हैं लेकिन किसी पौधे में उचित संरक्षण विधि का चयन तकनीक की लागत-प्रभावशीलता और संरक्षण के बाद उच्च प्रतिशत पुनर्विकास क्षमता और प्राकृतिक रूप से पुनर्स्थापन पर आधारित होना चाहिए। आनुवंशिक रूप से विविध पौधों की प्रजातियों की एक विस्तृत श्रृंखला के लिए अनुकूलित इन विट्रो स्लो ग्रोथ स्टोरेज या क्रायोप्रिजर्वेशन विधियों को अन्य एक्स-सीटू और इन-सीटू संरक्षण रणनीतियों के साथ एकीकृत किया जाना चाहिए। यह एकीकरण व्यावसायिक रूप से महत्वपूर्ण और संकटग्रस्त पौधों को उनके प्राकृतिक आवास में बहाल करने और संरक्षण उद्देश्यों के लिए इसे और अधिक व्यवहारिक बनाने में मदद करेगा।

संदर्भ सूची

Ara, H., Jaiswal, U., & Jaiswal, V.S. (2000). Synthetic seed: prospects and limitations. Current Science 78, 1438–1444.

Banasiak, M., & Snyman, S.J. (2017). Exploring in vitro germplasm conservation options for sugarcane (Saccharum spp. hybrids) in South Africa. In Vitro Cellular & Developmental Biology - Plant 53, 402–409.

Bhojwani, S.S., & Dantu, P.K. (2013). Plant tissue culture: an introductory text. Springer, India.

Capuana, M., & Di Lonardo, S. (2013). In vitro conservation of chestnut (Castanea sativa) by slow growth. In Vitro Cellular & Developmental Biology - Plant 49, 605–610.

Chauhan, R., Keshavkant, S., Jadhav, S.K., & Quraishi, A. (2016). In vitro slow-growth storage of Chlorophytum borivilianum Sant. et Fernand: a critically endangered herb. In Vitro Cellular & Developmental Biology - Plant 52, 315–321.

Chauhan, R., Singh, V., & Quraishi, A. (2019). In vitro conservation through slow-growth storage. In: Faisal, M., & Alatar, A.A. (Eds.) Synthetic seeds. (pp. 397–416). Springer Cham.

El-Hawaz, R.F., Adelberg, J., Naylor-Adelberg, J., Eisenreich, R., & Van der Meij, J. (2019). The effect of slow-growth strategy on a production of Petunia× hybrida Vilm. microcuttings. In Vitro Cellular & Developmental Biology - Plant 55, 433–441.

Engelmann, F. (2011). Use of biotechnologies for the conservation of plant biodiversity. In Vitro Cellular & Developmental Biology - Plant 47, 5–16.

Engelmann, F. (2004). Plant cryopreservation: progress and prospects. In Vitro Cellular & Developmental Biology - Plant 40, 427–433.

Faisal, M., & Alatar, A. (2019). Synthetic seeds: germplasm regeneration, preservation and prospects. Springer Cham.

Gianní, S., & Sottile, F. (2015). In vitro storage of plum germplasm by slow growth. Horticultural Science 42, 61–69.

Gopal, J., & Chauhan, N.S. (2010). Slow growth in vitro conservation of potato. Potato Research 53, 141–149.

Koc, I., Akdemir, H., Onay, A., & Ciftci, Y.O. (2014). Cold-induced genetic instability in micropropagated Pistacia lentiscus L. plantlets. Acta

Physiologiae Plantarum 36, 2373–2384.

Murashige, T., & Skoog, F.A. (1962). Revised medium for rapid growth and bioassays with tobacco tissue cultures. Physiologia Plantarum 15, 473–497.

Normah, M.N., Sulong, N., Reed, & B.M. (2019). Cryopreservation of shoot tips of recalcitrant and tropical species: advances and strategies. Cryobiology 87, 1–14.

Pan, X., Zhang, W.E., & Li, X. (2014). In vitro conservation of native Chinese wild grape (Vitis heyneana Roem. & Schult) by slow growth culture. Vitis 53, 207–214.

Rai, M.K., Asthana, P., Singh, S.K., Jaiswal, V.S., & Jaiswal, U. (2009). The encapsulation technology in fruit plants—a review. Biotechnology Advances 27, 671–679.

Rai, M.K., Jaiswal, V.S., & Jaiswal, U. (2008a). Encapsulation of shoot tips of guava (Psidium guajava L.) for short-term storage and germplasm exchange. Scientia Horticulturae 118, 33–38.

Rai, M.K., Jaiswal, V.S., & Jaiswal, U. (2008b). Effect of ABA and sucrose on germination of encapsulated somatic embryos of guava (Psidium guajava L.). Scientia Horticulturae 117, 302–305.

Rai, M.K., Shekhawat, N.S., Gupta, A.K., Phulwaria, M., Ram, K., & Jaiswal, U. (2011). The role of abscisic acid in plant tissue culture—a review of recent progress. Plant Cell Tissue and Organ Culture 106, 179–190.

Reed, B.M., Sarasan, V., Kane, M., Bunn, E., & Pence, V.C. (2011). Biodiversity conservation and conservation biotechnology tools. In Vitro Cellular & Developmental Biology - Plant 47, 1–4.

Sharma, N., Satsangi, R., Pandey, R., Singh, R., Kaushik, N., & Tyagi, R.K. (2012). In vitro conservation of Bacopa monnieri (L.) using mineral oil. Plant Cell Tissue and Organ Culture 111, 291–301.

Sharma, S., Shahzad, A., & da Silva, J.A.T. (2013). Synseed technology—a complete synthesis. Biotechnology Advances 31, 186–207.

Singh, S.K., Rai, M.K., Asthana, P., Pandey, S., Jaiswal, V.S., & Jaiswal, U. (2009). Plant regeneration from alginate-encapsulated shoot tips of Spilanthes acmella (L.) Murr., a medicinally important and herbal pesticidal plant species. Acta Physiologiae Plantarum 31, 649–653.

Singh, S.K., Rai, M.K., Asthana, P., & Sahoo, L. (2010). Alginate-encapsulation of nodal segments for propagation, short-term conservation and germplasm exchange and distribution of Eclipta alba (L.). Acta Physiologiae Plantarum 32, 607–610.

Srivastava, M., Purshottam, D.K., Srivastava, A.K., & Misra, P. (2013). In vitro conservation of Glycyrrhiza glabra by slow growth culture. International Journal of Biotechnology & Research 3, 49–58.

Verma, S.K., Rai, M.K., Asthana, P., Jaiswal, V.S., & Jaiswal, U. (2010). In vitro plantlets from alginate-encapsulated shoot tips of Solanum nigrum L. Scientia Horticulturae 124, 517–521.

बुन्देलखण्ड के प्राचीन दुर्ग: एक अनुशीलन

डॉ. मोहन लाल चढ़ार*

सारांश

प्रस्तुत शोध पत्र में बुन्देलखण्ड के प्राचीन कालीन दुर्गों का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है। बुन्देलखण्ड अपनी कला, संस्कृति एवं इतिहास के लिए विश्व प्रसिद्ध है । भारतीय इतिहास में बुन्देलखण्ड को चेदि, दशार्ण, डाहल, जुझौती एवं जेजाकभुक्ति आदि नामो से जाना जाता है। इसका उल्लेख हमें महाभारत, पुराणों, जैन साहित्य, बौद्ध साहित्य एवं चंदेलकालीन अभिलेखों में मिलता है। इस क्षेत्र में पूर्व मध्यकाल में अनेक दुर्ग बनवाये गये थे जो पर्यटन की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। इन दुर्गों में अजयगढ़, कालंजर, एरण, धामोनी, राहतगढ़ एवं गढ़कुंडार के दुर्ग उल्लेखनीय रहे हैं। इनके अलावा गढ़ाकोटा दुर्ग, रहली दुर्ग, देवरी दुर्ग, सनोधा दुर्ग, खुरई दुर्ग, खिमलासा दुर्ग एवं गढ़पहरा दुर्ग पर्यटन की दृष्टि से काफी अधिक महत्व के हैं। बुन्देलखण्ड की सीमा का निर्धारण करने वाली प्रमुख नदियां यमुना नदी, टोंस नदी, नर्मदा नदी, चम्बल नदी और बेतवा नदी मानी जाती हैं। उपर्युक्त नदियों से घिरा हुआ भूभाग ही बुन्दलेखण्ड कहलाता है। बुन्देलखण्ड की संस्कृति के निर्माण में इन नदियों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। इस क्षेत्र के दुर्गों का विस्तार से वर्णन लेख में किया गया है।

बीज शब्द - दुर्ग, प्राचीर, पुरातात्त्विक

परिचय

बुन्देलखण्ड भारत के मध्यभाग में अवस्थित है। बुन्देलखंड को भारत का हृदय स्थल भी कहा जाता है। बुन्देलखण्ड का भूभाग लगभग अस्सी हजार वर्ग किलोमीटर में फैला हुआ है। इसके अंतर्गत मध्यप्रदेश के ग्वालियर, भिण्ड, मुरैना, गुना, शिवपुरी, रायसेन, जबलपुर, सागर, दमोह, नरसिंहपुर, टीकमगढ़, दतिया, छतरपुर, पन्ना इत्यादि जिले सम्मिलित हैं (शर्मा,1974,पृ.18)। प्राचीन भारत के राजनीतिक तथा सांस्कृतिक इतिहास में बुन्देलखण्ड का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। प्रागैतिहासिक काल से आधुनिककाल तक के अनेक पुरात्तात्विक प्रमाण मिले हैं जो पर्यटन की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। सागर जिले में स्थित एरण से प्रागैतिहासिक काल, ताम्रपाषाणकाल, शक-क्षत्रप, नाग, एवं गुप्त शासकों के अनेक पुरात्तात्विक प्रमाण मिले हैं (श्रीवास्तव, 2019,पृ. 31)। सातवीं सदी के बाद चंदेलों एवं कलचुरियों का आधिपत्य बुन्देलखंड पर स्थापित रहा। चंदेल व कलचुरी

* लेखक प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय जनजतीय विश्वविद्यालय, अमरकंटक में सहायक प्राध्यापक हैं |

शासकों के पुरातात्विक प्रमाण बुन्देलखण्ड क्षेत्र में बड़ी मात्रा में प्राप्त हुए हैं। मुस्लिमों, मराठों व अंग्रेंजों ने इस क्षेत्र पर अपना शासन स्थापित किया। बुन्देलखण्ड में नौवीं शताब्दी से लेकर 1300 तक चंदेल शासक सबसे अधिक शक्तिशाली थे (त्रिपाठी, 2006,पृ.15)। चंदेल वंश के शासकों ने आधुनिक बुन्देलखण्ड के अधिकांश क्षेत्र पर लगभग पांच सौ वर्षो तक शासन किया। इसके पश्चात इस क्षेत्र पर स्थानीय शासक गौड़ एवं दांगी वंश के राजाओं ने राज्य किया। इनके समय अनेक दुर्गों का निर्माण कार्य किया गया था। इस क्षेत्र में विभिन्न राजाओं द्वारा बनवाये गये दुर्गों से तत्कालीन समाज, धर्म, संस्कृति, आर्थिक एवं राजनीतिक स्थिति की जानकारी मिलती है। इसलिए दुर्गों को मध्यभारत की सांस्कृतिक विरासत में महत्वपूर्ण माना जाता है। इन दुर्गों के माध्यम से श्रमिकों की कार्यकुशलता व कला के जीवन्त प्रमाण मिलते हैं (गुरू, 2014, पृ.32)। बुन्देलखण्ड के प्रमुख दुर्गों का विस्तार से विवरण इस प्रकार है।

कालंजर दुर्ग

कालंजर बांदा मुख्यालय से दक्षिण-पूर्व दिशा में 57 कि.मी. दूर स्थित है। यह रीवा से 90 कि.मी. दूर उत्तर-पश्चिम में पड़ता है। कालंजर दुर्ग लगभग 1300 ऊँची पहाड़ी पर स्थापित है (चित्र क्र.1)। इस किले के पास ही कालंजर नामक एक गांव है। कालंजर भगवान शिव का एक नाम है अर्थात भगवान शिव के नाम पर ही इस स्थान का नाम कालंजर पड़ा। कालंजर के दुर्ग में आलमगीर दरवाजा, गणेश दरवाजा, चण्डी दरवाजा, हनुमान दरवाजा, बड़ा दरवाजा इत्यादि प्रमुख हैं। इस दुर्ग में दुर्गा मंदिर, गणेश मंदिर के साथ -साथ अनेक हिन्दू धर्म की मूर्तियों से तत्कालीन धर्म की जानकारी मिलती है। इस किले में मुखलिंग का अप्रतिम अंकन, शिव तांडव की सुन्दर प्रतिमा के साथ नृवराह की विशाल प्रतिमा, ब्रह्मा, विष्णु व शिव की प्रतिमा, गजलक्ष्मी, गरुड़ासीन विष्णु, उमामहेश्वर, चमुण्डा की प्रतिमा, नृसिंह प्रतिमा, बसु की प्रतिमा, विष्णु के दशावतार का शिलाफलक पर सुन्दर दृश्याकंन, समुद्र मंथन का उत्कृष्ट प्रदर्शन एक शिलाफलक पर किया गया है (चित्र क्र.2)। इसके अलावा जैन धर्म के अनेक जैन तीर्थंकरों की प्रतिमा इस दुर्ग में मिली हैं। विंध्याचल पर्वत की श्रृंखलाओं की प्राकृतिक शोभा में डूबा बुन्देलखण्ड के कालंजर का यह भू-भाग अत्यंत मनोरम है। यहाँ के जन-जीवन में प्रकृति का अपूर्व योगदान है (दीक्षित, 1954, पृ. 67)। प्रकृति के बीच उसकी सुषमा एवं सौन्दर्य से पर्यटकों को प्रभावित कर अपनी ओर आकर्षित करती है। इस दुर्ग में विभिन्न प्रकार के मंगल कलश, गज, अश्व इत्यादि की मूर्तियां बनी हैं। इस दुर्ग के आसपास की चंदेलकालीन मूर्तिकला आलौकिक है। इस पुरास्थल को विश्व धरोहर में साम्मिलित किया जाना चाहिए। दुर्ग में जड़ी हुई मैथुन मूर्तियाँ आकर्षण का केन्द्र हैं। कालंजर के मंदिरों व मूर्तियों का निर्माण कार्य उत्कृष्ट रुप में किया गया है। कालंजर

की चंदेल कालीन स्थापत्य कला का अद्भुत नमूना है। जीवंत कला-वैभव के प्रतीक इस दुर्ग की सूक्ष्म कल्पना एवं विश्लेषण परंपरागत और नूतन है (त्रिपाठी, 2005,पृ.11)। इन शिल्प रत्नों की संरचना मूर्ति विज्ञान के सिद्धांतों के विकास का परिचय देती हैं। इस किले को मध्यभारत के प्रमुख पर्यटन के रुप में विकसित किया जा सकता है।

चित्र क्र.1, कालजंर दुर्ग की बह्य दीवार (छायाचित्र: लेखक)

चित्र क्र. 2, कालजंर दुर्ग में रखी चंदेलकालीन प्रतिमाएं (छायाचित्र: लेखक)

अजयगढ़ दुर्ग

अजयगढ़ का दुर्ग भी एक विशाल पर्वत पर बना है। यह खजुराहो जिला मुख्यालय से उत्तर-पूर्व दिशा में 80 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। अजयगढ़ दुर्ग में स्थित कुछ मंदिरों का निर्माण किया गया, जिन्हें रंगमहल, चंदेली महल आदि नामों से जाना जाता है। यह दुर्ग पन्ना जिले के निकट लगभग सात वर्ग किलोमीटर में बनाया गया था। यहाँ का दुर्ग समुद्र तल से लगभग 1800 फुट की ऊंचाई पर स्थापित है (जैन,1995,पृ. 71)। कालंजर दुर्ग से अजयगढ़ की दूरी लगभग 28 किलोमीटर है। इस किले में प्रवेश करने के लिये दो प्रवेश द्वार बनाये गये हैं। दुर्ग के मध्य में एक विशाल तलाब बनाया गया था। किले में जैन मंदिरों के अनेक पुरावशेष देखने को मिलते हैं। दुर्ग में कुछ चंदेल काल के मंदिर बनाये गये हैं। यह दुर्ग विंध्याचल पर्वत के ऊपर स्थित है (शुक्ल, 2001,पृ.46)। इस किले में अधिकतर लाल बलुआ पत्थर का ही प्रयोग किया गया है। अजयगढ़ के दुर्ग में चंदेल शासकों के समय अनेक निर्माण कार्य किये गये हैं। कला व शिल्प की दृष्टि से यह दुर्ग अनुपम

कुति माना जाता है (चित्र क्र. 3)। प्राचीन अभिलेखों में अजयगढ़ दुर्ग का नाम जयपुर मिलता है। इस दुर्ग का एक नाम नांदीपुर भी मिलता है। अजयगढ़ के दुर्ग में दो तलाब बनाये गये हैं। यह जल स्रोत्र चंदेल काल में बनाये गये थे। अजयगढ़ के दुर्ग में जैन एवं हिन्दू धर्म की अनेक मूर्तियां मिली हैं। इस दुर्ग में अनेक शिवलिंग बनाये गये हैं। अजयगढ़ के दुर्ग में चंदेल शासकों के कुछ अभीलेख भी मिले हैं (चित्र क्र. 4)। चंदेल शासकों ने प्राकृतिक संसाधनों का उत्तम प्रबंधन किया था। चंदेल शासकों द्वारा बनवाये गये दुर्गों में अनेक तलाबों एवं जलाशयों का निर्माण करवाया गया था (श्रीवास्तव, 2019, पृ. 76)। अजयगढ़ दुर्ग के एक अभिलेख में तालाब को अमृतकूप कहा गया है। इस दुर्ग को पर्यटन स्थल के रूप में विकसित करने की जरुरत है।

चित्र क्र. 3, अजयगढ़ दुर्ग का सामान्य दृश्य (साभार: विकीपिडिया)

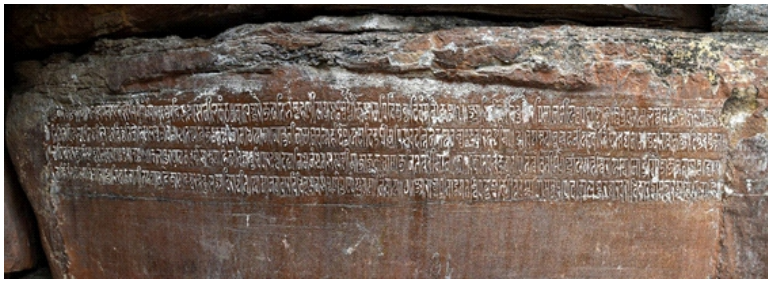

चित्र क्र. 4, अजयगढ़ दुर्ग का चंदेलकालीन अभिलेख(छायाचित्र: लेखक)

धामोनी दुर्ग

धामोनी दुर्ग सागर जिला की बंडा तहसील में सागर नगर से लगभग 40 कि.मी. की दूरी पर धसान नदी के किनारे अवस्थित है। इसका निर्माण 16 वीं शताब्दी में हुआ था। गढ़ा-मण्डला के एक शासक सूरतशाह ने इस किले का निर्माण करवाया था। कुछ समय यह दुर्ग मुगलों सुल्तानों के अधीन रहा। कुछ समय यह दुर्ग ओरछा के राजा वीरसिंह देव के अधिकार में था। उन्होनें इस दुर्ग का जीर्णोद्वार का कार्य कराया था। कुछ काल तक यह दुर्ग बुन्देलों के आधिपत्य में रहा | इसके तत्पश्चात यह दुर्ग महाराष्ट्र के भोसले शासकों के कब्जे में भी रहा। अठारहवीं शताब्दी में अंग्रेजों ने इस पर अधिकार कर लिया। स्लीमेन ने इस दुर्ग

को एक मात्र असाधरण वास्तु शिल्प में बनाया गया दुर्ग कहा है। इसका निर्माण लगभग 50 एकड़ भूमि पर किया गया था। इस किले में राजा-रानी का महल, राजा की कचहरी, विशाल बरामदा, हाथी दरवाजा, दुर्ग में लगभग 52 कोठरिया बनी हैं, इनको भूल-भुलैया कहा जाता है (वाजपेयी,1964,पृ.38)। इस दुर्ग में एक विशाल एवं सुंदर रानी वावड़ी बनाई गई है। यहाँ पर एक बालजती शाह की समाधि बनी है। इन्हें मुगलकालीन अकबर के राजदरबारी अबुल फजल का गुरू माना जाता है। आइन-ए-अकबरी ग्रंथ में इसका उल्लेख मिलता है। धामोनी दुर्ग बुंदेलखंड का एक विशाल दुर्ग माना जाता था यहाँ बुंदेलों का राज्य काफी समय तक रहा था। इस किले में जल संरक्षण की उत्तम व्यवस्था थी। इस दुर्ग के मुख्यद्वार के साथ एक विशाल रक्षा-प्राचीर बनाई गयी थी जो लगभग 60 फुट ऊँची तथा 20 फुट चौड़ी है (चित्र क्र.5)। यह दुर्ग मध्ययुग में सामरिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण माना जाता था। इस किले का जीर्णोद्धार कर इसे पर्यटक स्थल बनाया जा सकता है (त्रिपाठी, 2006, पृ.87)।

चित्र क्र. 5, धमोनी दुर्ग का सामान्य दृश्य (साभार: विकीपिडिया)

गढ़पहरा का दुर्ग

गढ़पहरा का सामरिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण यह दुर्ग सागर नगर से लगभग 11 कि.मी. उत्तर दिशा की ओर झांसी सड़क के दाहिनी ओर एक विशाल पहाड़ी पर अवस्थित है। गढ़पहरा में विशाल दुर्ग की स्थापना गोड़ राजा संग्राम शाह ने किया था। मुगल काल में गढ़पहरा जागीर में लगभग 360 ग्राम सम्मिलित थे। इस किले पर 1700 में दांगीवंश के राजाओं ने अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया था। गढ़पहरा किला में आज भी मोतीताल नामक तालाब, प्राचीन सिद्ध हनुमान मंदिर, प्राचीन सिद्ध अनगढ़ देवी मंदिर के लिए विशेष रूप से प्रसिद्ध है। गढ़पहरा किले का प्रवेश द्वारा काफी विशाल बनाया गया है। गढ़पहरा के किले में एक विशाल शीशमहल आज भी सुरक्षित है। इस भवन की स्थापत्य कला तत्कालीन समय की उत्कृष्ट कला मानी जाती है। इस महल में विशालतम एवं लघु अकार के कक्ष भी निर्मित हैं। दीवारों पर सुन्दर नक्काशी की गई है। गढ़पहरा के किले को

पुराना सागर के रुप में माना जाता है। बुन्देलखण्ड में गढ़पहरा को दांगीवंश के राजाओं ने अपने राज्य की राजधानी बनाया था (गुरु,1970,पृ.44)। गढ़पहरा का उल्लेख स्थानीय सती अभीलेखों में भी मिलता है। गढ़पहरा पर मराठा राजाओं ने भी अधिकार कर लिया था। मुगल शासक औरंगजेब के काल में ओरछा के प्रतापी राजा छत्रसाल ने गढ़पहरा पर अपना अधिकार कर लिया था। इसी समय गढ़पहरा के अनेक निवासी वर्तमान सागर नगर में जाकर रहने लगे थे। इस दुर्ग में मण्डला के गोंड़ राजाओं ने एक कलात्मक अनगढ़ देवी का मंदिर बनवाया था। उल्लेखनीय है कि मण्डला के गोंड़ राजा देवी के महान भक्त थे। इस प्रकार कहा जा सकता है कि दांगी राजाओं के समय में गढ़पहरा दुर्ग की बहुत उन्नति हुई। बुन्देलखण्ड के दांगी राजा मानसिंह,जयसिंह तथा ऊदनशाह ने काफी समय तक गढ़पहरा पर शासन किया था। इन शासकों के राज्यकाल में गढ़पहरा दुर्ग की रक्षा-प्राचीर, बुर्जियों तथा सीढ़ियों का निर्माण कराया गया था। गढ़पहरा दुर्ग को मध्यकालीन दुर्ग निर्माण परम्पराओं के अनुसार निर्मित किया गया था। मुख्य राजप्रासाद में दो विशाल प्रांगण हैं जिनके चारों ओर विशाल व लघु कक्ष निर्मित हैं। दुर्ग की द्वार-भित्तियों पर आकर्षक बेलबूटों को बनाया गया है। राजप्रासाद तीन मंजिला है। गढ़पहरा स्थित शीश महल अत्यन्त भव्य है। दांगी शासक जयसिंह ने इसे अपने आमोद-प्रमोद हेतु निर्मित कराया था (त्रिपाठी,2000,पृ.56)। शीश महल हिन्दू व मुस्लिम स्थापत्य कला का मिश्रित स्मारक माना जाता है। शीशमहल के ऊपरी हिस्से में रंगीन शीशे लगे हुए थे, इस कारण ही इसे शीशमहल नाम दिया गया था (चित्र क्र. 6)। इस किले को संरक्षित कर पर्यटन को बढ़ावा दिया जा सकता है।

चित्र क्र.6, गढ़पहरा दुर्ग का सामान्य दृश्य (साभार: विकीपिडिया)

गढ़कुंडार दुर्ग

गढ़-कुंडार मध्य प्रदेश के नव-निर्मित निवारी जिले में स्थित एक गाँव है। इस गाँव का नाम यहां स्थित प्रसिद्ध दुर्ग (या गढ़) के नाम पर पड़ा है। गढ़-कुंडार झांसी नगर से लगभग 71 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। यह दुर्ग आज भी अनसुलझी पहेलियों के कारण स्थानीय लोगों में जिज्ञासा का केंद्र बना हुआ है। यह दुर्ग मध्यकाल की अनुपम कला,स्थापत्यकला एवं शिल्पकला का उत्तम नमूना है। साहित्य में गढ़कुण्डार ग्राम का प्राचीन नाम गढ़ कुरार मिलता है। यह दुर्ग विशालकाय एवं रहस्मयी होने के साथ साथ काफी डरावना भी माना जाता है। गढ़कुंडार किले के विषय में यह बोला जाता है कि एक बार इस किले में एक बारात के लोग घूमने गये थे किन्तु आज तक यह किसी को नहीं ज्ञात हुआ कि आखिरकार यह बारात कहां गई। इस घटना के बाद स्थानीय प्रशासन व पुरातत्व विभाग ने इस दुर्ग के तलघर के हिस्से को बंद कर दिया है। गढ़कुंडार का दुर्ग लगभग 1000 वर्ष पुराना माना जाता है। इस किले का निर्माण 10 वीं एवं 11 वीं सदी में हुआ था। इस किले के निर्माण के विषय में कम ही जानकारी मिलती है। इस किले में ऊपर दो मंजिल है जबकि दो मंजिल तल घर के रूप में बनी हैं। कहा जाता है कि इस किले पर चंदेल राजाओं के बाद बुंदेला शासकों एवं खंगार राजाओं का अधिपत्य रहा है। इस दुर्ग की स्थापत्य कला, शिल्पकला, आलौकिक एवं उन्नत होने के साथ साथ स्थानीय कला का प्रतिनिधित्व भी करती है। इस दुर्ग को कोई व्यक्ति दूर से देखता है तो उसे दुर्ग काफी पास लगता है लेकिन जैसे जैसे व्यक्ति इस किले के पास जाता है तो वह दिशा भ्रम में पड़ जाता है। किले को दूर से देखकर अगर किले की तरफ जाते हैं तो रास्ता ही नहीं मिलता है। इस किले के निर्माण के दौरान इस बात का विशेष ध्यान रखा गया है कि लोगों को किले तक पहुचने में दिशा भ्रम हो जाये। किले तक पहुंचने के लिए एक अलग गुप्त रास्ता भी बनाया गया था। इस दुर्ग को चंदेल कालीन राजाओं ने अपना दक्षिणी-पश्चिमी क्षेत्र का मुख्यालय और सैनिक अड्डा बनाया था। चंदेल शासकों ने 12 वीं शती के आसपास दक्षिणी-पश्चिमी बुंदेलखंड को अपने अधिकार में कर लिया था (त्रिपाठी,2005,पृ.79)। इसकी सुरक्षा के लिए गढ़कुंडार किले में अनेक भवनों का निर्माण भी किया गया था। इस किले को देश के सबसे रहस्यमयी किले के नाम से जाना जाता है। (चित्र क्र.7) दुर्ग में पानी की उत्तम व्यवस्था है। इसे पर्यटन के दृष्टिकोण से संरक्षित करने की आवश्यकता है।

चित्र क्र.7, गढ़कुडार दुर्ग का सामान्य दृश्य
(साभार: विकीपिडिया)

खिमलासा का दुर्ग

खिमलासा सागर नगर से लगभग 55 किलोमीटर उत्तर-पश्चिम में खुरई मालथौन मार्ग पर खुरई से लगभग 15 कि.मी. की दूरी पर स्थित है। इस नगर की स्थापना मुगल काल में की गई थी। लगभग 16 वीं शती में इस किले की नींव स्थापित की गई थी। खिमलासा नगर के मध्य एक मुगलकालीन स्थापत्य कला में निर्मित दुर्ग बनाया गया था (चित्र क्र. 8)। इस दुर्ग में अनेक सुरक्षा बुर्जे बनाई गई थीं। इस किले की दीवारें लगभग 20 फुट ऊँची बनाई गई थीं। इस किले का दरवाजा मध्यकालीन कला का उत्कृष्ट उदाहरण माना जा सकता है। इस दुर्ग की शिल्पकला को हिन्दू कला एवं इस्लाम शैली पर आधारित अनुपम नमूना माना जाता है। किले के सभी स्तंभों में सन्दर जालीदार नक्काशी का शिल्प कार्य किया गया है। किले में अनेक मुस्लिम सन्तों की दरगाह आज भी विद्यमान है। खिमलासा नगर व उसके आसपास लगभग 52 सती स्तंभ मिले हैं। कुछ सती स्तम्भों में लेख लिखे मिले हैं। यह सभी सती स्तम्भ अभिलेखों में अकिंत तिथि के अनुसार 1450 से लेकर 1823 के मध्य रखे जा सकते हैं। खिमलासा दुर्ग में सुन्दर नगीना महल बनाया गया है। यह भवन स्थापत्य कला एवं शिल्प की दृष्टि से अत्यन्त उत्कृष्ट व कलात्मक है। इस दुर्ग के अनेक स्तंभों की शिल्पकला शेख सलीम चिश्ती के मकबरे के समान बनी है। दुर्ग में कुछ शिलालेख मिले हैं। इन लेखों में अरबी भाषा में कुरान के कुछ उद्धरण अंकित किये गये हैं। मुगल काल में बनी एक मस्जिद भी मुगलकालीन कला की उत्तम कलाकृति मानी जाती है। यह दुर्ग वर्तमान समय में केन्द्रीय पुरातत्व विभाग के अन्तर्गत सुरक्षित है। मुगलकालीन साहित्य में इस नगर का नाम क्षेमोल्लास लिखा गया है। कालान्तर में इस नगर का नाम कमलासा और फिर वर्तमान नाम खिमलासा हो गया। मुगल काल के पूर्व यह नगर गढ़मंडला जबलपुर की रानी दुर्गावती के ससुर संग्राम सिंह के बावन गढ़ों में से एक माना जाता था (श्रीवास्तव,2019,पृ.69)। यह दुर्ग जल संरक्षण का एक उत्तम नमूना प्रस्तुत करता है। नगर के चारों ओर परकोटा और अनेक पुरावशेष प्राचीन नगर की समृद्धि और विकास के साक्षी के रुप में आज भी विकास की राह देख रहे हैं। पुरातात्विक पुरावशेषों से समृद्ध इस दुर्ग में प्राचीन तोप, शिलालेख, अनेक कलाकृतिया, बुर्जे, बावड़ी, कुंआ, शीश महल दर्शनीय हैं (गुरु,1970,पृ.45)।

चित्र क्र. 8, खिमलासा का दुर्ग सामान्य दृश्य (साभार: भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग)

राहतगढ़ का दुर्ग

राहतगढ़ नगर, सागर शहर से लगभग 42 किलोमीटर पश्चिम दिशा में एवं सागर-भोपाल मार्ग पर अवस्थित है। राहतगढ़ दुर्ग कला स्थापत्य की दृष्टि से उल्लेखनीय है। यह किला बुन्देलखण्ड के अजेय दुर्गों में अपना स्थान रखता था। राहतगढ़ का यह प्राचीनतम दुर्ग एक विशाल एवं ऊँची पहाड़ी पर बनाया गया था। इस किले की रक्षा-प्राचीर काफी ऊँचाई में बनाई गई है। रक्षा-प्राचीर में अनेक सुरक्षा चौकियां बनाई गई हैं। इस किले के अन्दर अनेक सुन्दर व कलात्मक भवन, अनेक महल एवं की मस्जिदें बनाई गई हैं। राहतगढ़ दुर्ग के प्रमुख भवनों में गगनचुम्बी बादल महल, जोगन का बुर्ज, सूफी सन्त हाजी रतन की हिन्दू कला में निर्मित समाधि, तथा मुगलकालीन कला शिल्प में निर्मित उत्कृष्ट शिल्प की कमानीदार मस्जिद उल्लेखनीय है। इस दुर्ग के मध्य में एक तालाब बना है। ग्यारहवीं-बारहवीं शताब्दी में यह क्षेत्र परमारों के अधिकार क्षेत्र में था। यहां से परमार राजा का एक अभिलेख मिला है। इस अभिलेख में परमार नरेश जयसिंह देव का नाम उत्कीर्ण है (वाजपेयी,1964,पृ.40)। इसी किले के समीप राहतगढ़ नगर की जीवनदायिनी नदी बीना लगभग 55 फुट ऊँचा मनोरम जल-प्रपात बनाती है जो पर्यटकों व स्थानीय लोगों को आकर्षित करता है। इस किले में अनेक गुप्त मार्ग, तलघर पहाड़ी के अंदर रहने के आवास, अनाज संग्रहण के भंडार बनाये गये हैं। इस किले में अभी भी ऊँची तथा विशालतम 25 मीनारें सुरक्षित बची हैं। यह दुर्ग लगभग 65 एकड़ भूमि में बनाया गया था। यहां दुर्ग की ऊँची पहाड़ी तक पहुंचने का मार्ग काफी लंबा एवं घुमावदार बनाया गया था जिससे कि शत्रु आसानी से किले पर आक्रमण न कर सके। राहतगढ़ किले के भीतर पहुँचने के लिए विशाल व सुन्दर चार दरवाजे चारो दिशाओं में बने हैं। राहतगढ़ दुर्ग में विशाल एवं ऊँची जोगन बुर्ज तत्कालीन समय में कैदियों को मृत्यु-दण्ड देने के लिए बनाई गयी थी। इस बुर्ज से कैदियों को फांसी दी जाती थी एवं उन्हें बीना नदी में फेंक दिया जाता था। राहतगढ़ का यह विशाल व अजेय दुर्ग मंडला के पराक्रमी गोंड़ राजाओं के राज्य में सम्मिलित था। यह दुर्ग मुगलों के बाद भोपाल के नवाबों एवं अम्बापानी के नवाबों, सिंधिया राजाओं एवं अंग्रेजों के अधीन रहा था (गुरु,1970,पृ.46)। यह दुर्ग भी पर्यटन के लिए काफी दर्शनीय दुर्ग माना जाता है (चित्र क्र. 9)।,

चित्र क्र. 9, राहतगढ दुर्ग का सामान्य दृश्य (साभार: विकीपिडिया)

एरण का दुर्ग

एरण का यह दुर्ग मुगल काल में लगभग 17 वीं सदी में बनाया गया था और लगभग 30 एकड़ भूमि पर निर्मित किया गया था। इस दुर्ग को तीन दिशाओं की ओर से बीना नदी सुरक्षा प्रदान करती थी। एरण के दुर्ग का मुख्यद्वार विशाल व अत्यन्त भव्य रुप में बनाया गया था। इस दरवाजे को हाथी दरवाजा कहा जाता है। इस दुर्ग का प्रवेशद्वार दक्षिण दिशा की ओर कलात्मक ढंग से निर्मित किया गया था (चित्र क्र.10)। इस दुर्ग की सुरक्षा-प्राचीर ताम्रपाषाण काल में निर्मित मिट्टी की बनी रक्षा-प्राचीर के ऊपर लगभग 20 फुट ऊँची तथा 8 फुट चौड़ाई में बनाई गई थी (चढ़ार,2016,पृ.23) जिसमें पांच सुरक्षा चौकी बनाई गई थीं ।1700 तक यह दुर्ग मुगलों के अधीन रहा उसके पश्चात मण्डला के गोंड़ राजाओं, दांगी शासकों, महाराष्ट्र के भोसले शासकों एवं 1857 में एरण का यह किला अंग्रेजों के अधिकार में आ गया था। इसका प्रमाण एरण से प्राप्त एक सती स्तम्भ लेख से मिलता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि एरण मध्यकाल में सामरिक दृष्टिकोण से काफी महत्वपूर्ण स्थान था। एरण गांव के अन्दर आज भी विस्तृत क्षेत्र में दुर्ग के पुरावशेष विखरे पड़े हैं। आज भी गांव के आसपास गोंड़ महापुरुषों की अनेक समाधियां एवं मंदिर बने हुए हैं। दांगी शासकों के शासन काल में एरण की बहुत उन्नति हुई। इस समय एरण बत्तीस ग्रामों का मुख्यालय था। मुगलों के समय यहां से बत्तीस ग्रामों का लगान वसूल किया जाता था। इसी समय से इस गांव को एरण बत्तीसी कहा जाने लगा था। आज भी इस क्षेत्र के लोग इसे एरण बत्तीसी के नाम से जानते हैं। एरण का दुर्ग अपनी सुदृढ़ स्थिति व सामरिक महत्ता के कारण महत्वपूर्ण था क्योंकि तीन ओर से गहरी बीना नदी और चौथी ओर 50 फुट ऊँचाई की किले की दीवारें थीं (वाजपेयी,1964,पृ.41)। दुर्ग के अन्दर के भवन व अन्य स्मारक अब नष्ट हो चुके हैं। इसका जीर्णोद्धार कर पर्यटन को बढ़ावा दिया जा सकता है।

चित्र क्र.10, एरण के किले के दरवाजे का सामान्य दृश्य (छायाचित्र: लेखक)

देवरी का दुर्ग

देवरी का दुर्ग सागर नगर से नरसिंहपुर सड़क मार्ग पर लगभग 40 मील की दूरी पर अवस्थित है। ऐसा माना जाता है कि 500 वर्ष पूर्व इस किले को एक चंदेल शासक ने बनवाया था। कुछ काल तक यह दुर्ग गढ़ा-मण्डला के गोंड़ राजा के आधीन रहा था। इस

किले में गोंड़ राजाओं ने एक पंचमहल नामक महल बनवाया था। कालन्तर में इस किले को पंचमहल नाम से ही जाना जाने लगा। देवरी के समीप ही एक गौरझामर नामक कस्बे में गोंड़ शासकों ने इस किले को पुनः बनवाया। देवरी नगर में दो प्रमुख नदियां क्रमशः सुखचेन एव झुनकू नदी नगर के मध्य से बहती हैं। इन्हीं नदियों के बीचों-बीच देवरी का यह दुर्ग बनाया गया था (गुरु, 1970,पृ.47)।

गढ़ाकोटा का दुर्ग

गढ़ाकोटा का दुर्ग सागर नगर से लगभग 46 कि.मी. पूर्व दिशा की ओर पथरिया रेलवे स्टेशन से 12 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। 17वीं शताब्दी में एक राजपूत वंशी राजा चन्द्रशाह ने इसे बनवाया था। गढ़ा-मण्डला के गोंड़ वंश के शासक संग्रामशाह के समय यह गढ़ाकोटा का दुर्ग उनके क्षेत्र बुन्देलखण्ड के प्रमुख दुर्गों में से एक माना जाता था। यह दुर्ग सुनार नदी व गधेरी नदी के संगम पर स्थित है। यह किला पहाड़ीनुमा काफी ऊंची भूमि पर बनाया गया था। गढ़ाकोटा का यह दुर्ग तत्कालीन दुर्ग स्थापत्य का उत्कृष्ट प्रतीक माना जाता है। वर्तमान समय में भी इस दुर्ग की सुरक्षा-प्राचीर एवं अनेक सुरक्षा बुर्जियों को देखा जा सकता है। दुर्ग के अन्दर विशाल राजप्रासाद, सुन्दर भंडारगृह, शिल्पयुक्त सभा कक्ष व अस्त्र-शस्त्र भण्डार कक्ष के अवशेष अभी भी सुरक्षित हैं। 1857 ईस्वी में गढ़ाकोटा के इस किले पर शाहगढ़ के एक वीर एवं पराक्रमी सरदार पंचम सिंह का आधिपत्य हो गया था। 1858 ईस्वी में इस किले पर अंग्रेजों का अधिकार हो गया था (शर्मा,1974 ,पृ.18)। अग्रेजों ने इस किले के विषय में कहा कि इस दुर्ग पर सुगमता से अधिकार कर लिया किन्तु वास्तव में इतना दुर्गम दुर्ग भारत में दूसरा नहीं है। इस किले को अजेय समझा जाता था (चित्र क्र.11)। इस किलें में राजा मर्दनसिंह ने लगभग 100 फुट ऊँची सुन्दर मीनार बनवाई थी जिसके ऊपर चढ़कर राजा एवं उसकी प्रिय रानी आसपास के क्षेत्रों का अवलोकन करते थे। गढ़ाकोटा दुर्ग अपनी सुदृढ़ स्थिति व सामरिक महत्ता के कारण महत्वपूर्ण था। आज इस दुर्ग के भग्नावशेष असुरक्षित हैं, इसे पर्यटन स्थल बनाने की आवश्यकता है।

चित्र क्र.11, गढ़ाकोटा दुर्ग का सामान्य दृश्य (छायाचित्र: लेखक)

खुरई का दुर्ग

सागर जिला मुख्यालय से लगभग 45 किलोमीटर दूर उत्तर-पश्चिम दिशा में सागर से बीना जाने वाले मार्ग पर मुगलकाल में बसा खुरई नामक एक बड़ा कस्बा स्थित है। इस कस्बे के मध्य भाग में एक विशाल दुर्ग बनाया गया था। खुरई स्थित यह दुर्ग अत्यन्त कलात्मक एवं शिल्प की दुष्टि से उत्कृष्ट रुप में बनाया गया था। यह दुर्ग लाल बलुआ पत्थर से निर्मित विशाल सुरक्षा-प्राचीर से युक्त बनाया गया था। इसकी सुरक्षा व्यवस्था को सुदृढ़ करने के उद्देश्य से इसकी प्राचीर में लगभग नौ विशाल सुरक्षा चौकियों के रुप में बुर्जियाँ निर्मित की गई थीं। दुर्ग के अन्दर के सभी भवन व अन्य स्मारक अब नष्ट हो चुके हैं। खुरई की नींव मुगल शासक औरंगजेब ने डाली थी। यहां किले का अधिकतर निर्माण कार्य स्थानीय जागीरदार दांगी वंश के खेमचंद दांगी ने करवाया था। मराठा काल में एक सूबेदार पंडित नामक व्यक्ति ने इस किले का जीर्णोद्वार का कार्य करवाया था। यहां उसने एक विशाल व सुन्दर तालाब खुदवाया था। यह तालाब आज भी जल संरक्षण का उत्तम उदाहरण माना जाता है। यह तालाब किले की दक्षिणी दीवार से लगा हुआ है। इस तालाब से दक्षिण दिशा की ओर से यह किला दुश्मनों से पूर्ण रुप से सुरक्षित था। इसी तालाब के किनारे एक विशाल शिव मंदिर का निर्माण करवाया गया था। अंग्रेजी हुकूमत के समय में 1857 में इस किले पर बानपुर के राजा ने अपना अधिकार कर लिया था (गुरू, 2014 ,पृ.21)। इस किले का मुगलकालीन शिल्पयुक्त सुन्दर प्रवेश द्वार आज भी आकर्षण का प्रमुख केन्द्र है। (चित्र क्र.12)

चित्र क्र.12, खुरई दुर्ग का सामान्य दृश्य (साभार: विकीपिडिया)

रहली का दुर्ग

रहली नामक प्राचीन नगर, सागर जिला मुख्यालय से दक्षिण-पूर्व दिशा में लगभग 40 कि0मी0 दूर स्थित है। यह नगर सागर जिले का तहसील मुख्यालय है। यह दुर्ग सुनार नदी एवं देहार नदी के संगम पर बनाया गया था। यह किला मध्यकालीन स्थापत्य कला का अनुपम उदाहरण माना जाता है। रहली नगर के मध्य इस अजेय दुर्ग के भग्नावशेष

आज भी सुरक्षित हैं। यह उल्लेख मिलता है कि 14 वीं सदी में इस किले को स्थानीय अहीर जाति के राजाओं ने बनवाया था। यह किला काफी समय तक बुन्देलों के राज्य के अधीन रहा। सत्रहवीं शताब्दी में यह किला पेशवा बाजीराव के आधिपत्य में आ गया था | अठारहवीं सदी में इस किले पर अंग्रेजों ने अपना अधिकार कर लिया था। इस किले का जीर्णोद्धार मराठा काल में किया गया था। इस किले के समीप सुनार नदी के तट पर पूर्व मध्यकाल में एक सूर्य मंदिर स्थापित किया गया था। यह मंदिर भारतीय कला संस्कृति में अपना विशिष्ट स्थान रखता है। इस मन्दिर के गर्भगृह में सूर्य की विशालतम प्रतिमा स्थापित की गई थी। इस मंदिर की दीवारों पर भगवान शिव का नटराज स्वरुप, भगवान शिव की स्थानक प्रतिमाएं, अग्नि, ब्रह्मा व अनेक देवियों के साथ साथ अष्टदिग्पालों को भी बनाया गया है। इस मदिर में शैव, वैष्णव व शाक्त धर्म से संबंधित मूर्तियों को विशेष तौर पर मंदिर की बाह्य दीवारों पर उत्कीर्ण किया गया है। यह सूर्य मंदिर शिल्पकला के आधार पर लगभग दसवीं शताब्दी ईस्वी में बना प्रतीत होता है। मराठों के समय इस दुर्ग को सुदृढ़ता एवं विशालता के साथ-साथ सुन्दरता प्रदान की गई थी। इस दुर्ग का मुख्य प्रवेश-द्वार उत्तर दिशा की ओर निर्मित किया गया है (चित्र क्र.13)। इस दुर्ग की सुदृढ़ सुरक्षा-प्राचीर के साथ अनेक विशाल सुरक्षा बुर्जे स्थापित की गई थीं (त्रिपाठी, 2011 ,पृ.88)।

चित्र क्र. 13, रहली दुर्ग का सामान्य दृश्य (साभार: विकीपिडिया)

सानौधा दुर्ग

सागर नगर से यह दुर्ग लगभग 19 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। सानौधा का यह विशाल दुर्ग मण्डला के गोंड़ शासकों ने बनवाया था जिसका निर्माण धामौनी के गोंड़ शासक सूरतशाह के शासन काल में प्रारम्भ हुआ था। धामौनी का यह किला गोंड़ कालीन महत्वपूर्ण किलो में से एक था। इस किले पर गोंड़ शासकों के पश्चात एक सेनापति अमानसिंह, मराठा शासकों एवं अंग्रेजों के अधीन रहा था। यह किला 1857 में अग्रेंजों के

खिलाफ संघर्ष कर रहे भारतीय राजाओं व सैनिकों की शरण स्थली बन गया था। अठारहवीं शताब्दी में इस किले को मराठों से अंग्रेजों ने छीन लिया था। अंग्रेजी सेना ने 8 फरवरी 1858 को इस दुर्ग को तोपों से उड़ाकर ध्वस्त कर दिया था। कालान्तर में अंग्रेजों ने इस किले की मरम्मत कराई एवं इसको अपनी सैनिक छावनी बना लिया था। यह दुर्ग यहां के स्थानीय लाल बलुआ पत्थरों से निर्मित किया गया था (चित्र क्र.14)। अंग्रेजों ने इस किले के जीर्णोद्धार में ईंटों का प्रयोग किया था (त्रिपाठी, 2005,पृ.19)। इस किले को पर्यटन की दृष्टि से विकसित किया जा सकता है।

चित्र क्र.14, सनौधा दुर्ग का सामान्य दृश्य (साभार: विकीपिडिया)

सागर का दुर्ग

सागर नगर मध्यप्रदेश का एक महत्वपूर्ण जिला मुख्यालय है। इस नगर की स्थापना सोलहवीं शताब्दी में हुई थी। यूनानी लेखक टालमी ने अपने साहित्य में सागर नगर का उल्लेख किया है (वाजपेयी,1964,पृ.43)। इस सागर नगर को गढ़पहरा में राज्य करने वाले स्थानीय दांगी शासक निहालशाह के वंशज उदनशाह ने स्थापित किया था। सत्रहवीं शताब्दी में एक लाखा बंजारा नामक व्यापारी ने सागर का तालाब बनवाया था। गढ़पहरा के पराक्रमी राजा ऊदनशाह ने इसी तालाब के किनारे एक विशाल व अजेय दुर्ग का निर्माण किया था। अठारहवीं शताब्दी में यह दुर्ग कुरवाई के नवाब के अधीन हो गया था। मराठा काल में सूबेदार गोविन्द पंडित सागर के किले के साथ-साथ आसपास के सभी किलों पर शासन करता था। दांगी नरेशों द्वारा निर्मित यह दुर्ग सागर के मध्य में स्थित तालाब के उत्तर पश्चिम बना है। इसमें अनेक गोलाकार सुरक्षा चौकियां व बुर्ज आज भी सुरक्षित हैं। इस किले की सुरक्षा दीवार की ऊँचाई लगभग 45 फुट के आसपास है। बुन्देलखण्ड के छत्रसाल बुन्देला का अधिकार कुछ समय तक इस किले पर रहा था। गोविन्द पन्त बुन्देला के समय इस किले का जीर्णोद्धार किया गया था। यह दुर्ग सुरक्षा की दृष्टि से काफी मजबूत बना है। इस किले पर कोई भी बाहरी आक्रमणकारी कब्जा नहीं कर पाया था। इस किले पर कुछ समय ग्वालियर के सिन्धिया का भी अधिकार रहा था (गुरु,1970,पृ.49)। वर्तमान में भी यह किला अपनी भव्यता के साथ तालाब के किनारे दृष्टव्य है (चित्र क्र.15)। मध्यप्रदेश का

पुलिस प्रशिक्षण महाविद्यालय इस किले में संचालित होता है।

चित्र क्र.15,सागर दुर्ग का सामान्य दृश्य (छायाचित्र: लेखक)

निष्कर्ष

इस प्रकार कहा जा सकता है कि बुन्देलखण्ड क्षेत्र मध्यकालीन कला संस्कृति के रुप में आज भी अनेक स्थानीय शासकों व मुगल शासकों के समय में बनाये गये विशाल व सुन्दर दुर्गों की दृष्टि से काफी सम्पन्न है। यहां के सभी दुर्ग लाल बलुआ पत्थर से बनाये गये थे। इन दुर्गों में तत्कालीन समय में काफी धन लगा था। गढ़ा-मण्डला के गोंड़ राजाओं ने इस बुन्देलखण्ड क्षेत्र में अनेक दुर्गों का निर्माण किया था जो अपनी विशालता, सुदृढ़ता, विशिष्ट स्थिति व दुर्ग स्थापत्य की परिपूर्णता के कारण आज भी महत्वपूर्ण माने जाते हैं। बुन्देलखण्ड के किलों में मुख्य रुप सें कालंजर, अजयगढ़, गढ़कुंडार, खिमलासा, धामोनी, गढ़ाकोटा, सागर, राहतगढ़, गढ़पहरा, सानोधा, शाहगढ़ एवं रहली के दुर्ग अत्याधिक महत्वपूर्ण हैं। इन दुर्गों की भौगोलिक स्थिति, सुरक्षा व्यवस्था व जल आपूर्ति व्यवस्था उत्तम कोटि की दिखाई देती है। बुन्देलखण्ड क्षेत्र में इतनी बडी संख्या में दुर्गों की उपस्थिति से ज्ञात होता है कि यह भू-भाग प्राचीन काल से ही अनेक राजवंशों के साथ साथ विदेशी आक्रमणकारियों के संघर्ष का साक्षी रहा है। बुन्देलखण्ड अंचल में स्थित प्राचीनकालीन ये गौरवशाली दुर्ग तत्कालीन शासकों की दुर्ग स्थापत्य कला के प्रति गहरी सोच, व्यक्तिगत अभिरूचि व इन्हें निर्मित करने वाले शिल्पियों की सराहनीय कलात्मकता के प्रतीक माने जाते हैं।

बुन्देलखण्ड क्षेत्र के यह दुर्ग इतिहास के अनेक उतार-चढ़ावों के साक्षी रहे हैं। बुन्देलखण्ड क्षेत्र में स्थापित इन महत्वपूर्ण दुर्गों से प्राचीन कालीन दुर्ग निर्माण परम्परा की जानकारी भी मिलती है। बुन्देलखण्ड के प्राचीनतम पुरास्थल एरण में ताम्रपाषाणकाल में ही सुरक्षा-प्राचीर व खाई निर्मित किए जाने के प्रमाण मिले हैं। गुप्तकाल में एरण में भी रक्षा-प्राचीर निर्मित की गयी थी। एरण उत्खनन से ज्ञात हुआ है कि एरण में रक्षा-प्राचीर के अन्दर दुर्गनुमा अवास व राजमहलों का निर्माण रहा होगा। मुगलकाल में एक दुर्ग का निमार्ण यहां पर किया गया था। पूर्व मध्यकाल तथा मध्यकाल में दुर्ग निर्माण परम्परा का काफी अधिक विकास हुआ था। बुन्देलखण्ड क्षेत्र के विभिन्न स्थलों पर चंदेल शासकों, बुन्देला शासकों,

गौंड शासकों, मुस्लिम व मराठा शासकों व उनके सामंतों के द्वारा निर्मित दुर्गों के अवशेष विद्यमान हैं। इनके अलावा इस क्षेत्र में स्थानीय शासकों, सामंतों, जागीरदारों द्वारा निर्मित अनेक दुर्गों के अवशेष विभिन्न स्थलों पर दृष्टव्य हैं। मुस्लिम शासकों द्वारा निर्मित खिमलासा एवं राहतगढ़ दुर्ग स्थापत्य की दृष्टि से महत्वपूर्ण थे। बुन्देलखण्ड क्षेत्र के महत्वपूर्ण भू-भाग सागर पर गौड़ व दांगी शासकों का भी आधिपत्य रहा। इन्होंने सागर, धामोनी, गढ़पहरा, बिलहरा, पिठौरिया, गौरझामर, शाहगढ़ गढ़ाकोटा, जैसीनगर, खुरई तथा एरण आदि स्थलों पर सुदृढ़ दुर्ग निर्मित कराये थे। मराठों का आधिपत्य भी बुन्देलखण्ड क्षेत्र पर रहा। बुन्देलखण्ड क्षेत्र के वर्तमान दुर्गों को मराठों ने दांगी शासक के पुराने दुर्ग को विस्तारित किया।

इन दुर्गों के अतिरिक्त सागर क्षेत्र में सानौधा, बरोदिया, हीरापुर, नरयावली, बरेठा, रहली, खुरई, बिनायका, देवरी, गढ़ौला के दुर्ग की मराठा शासन काल में निर्मित हुए थे। बुन्देलखण्ड क्षेत्र के सभी दुर्गों में जल संरक्षण के उत्तम उदाहरण देखने को मिलते हैं। यहा के प्रमुख दुर्गों को आधुनिक परिदृश्य में मध्यप्रदेश पर्यटन विभाग द्वारा विकसित कर रोजगार के अवसर पैदा किये जा सकते हैं। दुर्गों में स्थित मंदिरों, भवनों के जीर्णोद्धार की आवश्यकता है। भारतीय पुरातत्न सर्वेदाण को संरक्षण एवं परिरक्षण का कार्य करवाना चाहिए। इससे इस क्षेत्र के पर्यटन का विकास तेजी से हो सकेगा। शोध के दौरान बुन्देलखण्ड क्षेत्र के अनेक नवीन दुर्ग प्रकाश में आए इन्हें पर्यटकों के लिए सुविधा सम्पन्न बनाया जा सकता है।

संदर्भ सूची

गुरु, एस. डी. (1970) : सागर जिला गजेटियर, भोपाल, मध्यप्रदेश

गुरू, केशव प्रसाद (2014) : बुन्देलखण्ड के प्राचीन दुर्ग और गढ़ी, बुन्देली लोक साहित्य संस्थान प्रकाशन, सागर, मध्यप्रदेश

चढ़ार, मोहन लाल (2016) : एरण एक सांस्कृतिक धरोहर, (आयु प्रकाशन नई दिल्ली, नई दिल्ली,

दीक्षित, मोरेश्वर गंगाधर (1954) : म.प्र. के पुरातत्व की रूपरेखा, अन्नद मुद्राणालय,पूना,महाराष्ट्र

जैन, हुकुम चन्द्र (1995) : ऐतिहासिक स्थल, जैन पुस्तक मंदिर,जयपुर, राजस्थान

शर्मा, राजकुमार (1974) : मध्यप्रदेश के पुरातत्व का सन्दर्भ ग्रन्थ, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी,

शुक्ल, परशुराम (2001) : बुन्देलखण्ड की संस्कृति, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल

वाजपेयी, के.डी. (1964) : सागर थ्रो द एजेज, प्रकाशन डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय सागर, मध्यप्रदेश

श्रीवास्तव, ब्रजेश कुमार (2019) : बुन्देलखण्ड की संस्कृति, राधा प्रकाशन, नई दिल्ली

त्रिपाठी,काशी प्रसाद(2006):बुन्देलखण्ड का सामाजिक,आर्थिक इतिहास,समय प्रकाशन, नई दिल्ली,
त्रिपाठी, काशी प्रसाद (2005) : बुन्देलखण्ड के दुर्ग, समय प्रकाशन, नई दिल्ली
त्रिपाठी, काशी प्रसाद (2006) : बुन्देलखण्ड का वृहद इतिहास , समय प्रकाशन, नई दिल्ली
त्रिपाठी, काशी प्रसाद(2000) :बुन्देलखण्ड की सांस्कृतिक विरासत, समय प्रकाशन, नई दिल्ली
त्रिपाठी, काशी प्रसाद (2011) : बुन्देलखण्ड के तालाबों एवं जल प्रबंधन का इतिहास, समय प्रकाशन, नई दिल्ली

भारत-बांग्लादेश संबंध के 50 वर्ष: एक ऐतिहासिक मूल्यांकन

डॉ. सोनाली सिंह*

सारांश

इस लेख में भारत बांग्लादेश संबंध के 50 वर्ष पूर्ण होने के संदर्भ में इनके बीच संबंध का एक संक्षिप्त अध्ययन किया गया है, जिसमें यह जानने का प्रयास किया गया है कि इनके मध्य विवाद के बिंदु क्या रहे तथा उनका समाधान किस प्रकार किया गया, तथा इनको जोड़ने वाले विभिन्न सांस्कृतिक, ऐतिहासिक संदर्भ क्या रहे हैं | दोनों देशों के मध्य सीमा संबंधी मुद्दों, व्यापार तथा वाणिज्य, शरणार्थी समस्या, जल विभाजन की समस्या, कनेक्टिविटी के प्रमुख बिंदु, सांस्कृतिक सम्बन्ध व अन्य बिंदु संबंधों की मीमांसा के सन्दर्भ में महत्वपूर्ण हैं । अध्ययन के उपरान्त हम पाते हैं कि भारत बांग्लादेश के बीच संबंध सामान्यतः मित्रतापूर्ण रहे हैं हालांकि इनके मध्य विवाद के बिंदु भी विद्यमान रहे हैं लेकिन दोनों देशों ने समझबूझ व आपसी तालमेल के द्वारा इनको हल करने का प्रयास किया है।

बीज शब्द - भारत-बांग्लादेश संबंध, सीमा संबंध, आर्थिक संबंध, शरणार्थी समस्या, जलविभाजन, कनेक्टिविटी

परिचय

बांग्लादेश भारत का पड़ोसी देश है और दोनों देश एक दूसरे के साथ अपनी सबसे बड़ी सीमा रेखा साझा करते हैं। 'बांग्लादेश भारत का सबसे अधिक आबादी वाला पड़ोसी है जिसके साथ भारत की सबसे लम्बी सीमा (4000 किलोमीटर से अधि लंबी) है' (सीकरी, 2017, पृ. 67) | वैश्वीकरण के इस दौर में किसी भी देश का दूसरे देश के साथ संबंध महत्वपूर्ण है और जब देश पड़ोसी हो तो आपसी संबंधों का महत्व और भी बढ़ जाता है। यदि हम बात भारत और बांग्लादेश के संबंधों की करें तो दोनों देशों के बीच काफी समानताएं हैं जो इनको आपस में जोड़ती हैं । इनमें एक साझा इतिहास, साझी विरासत, भाषाई और सांस्कृतिक रिश्ते, साहित्य और कला के लिए लगाव शामिल हैं । स्वतंत्रता संघर्ष और स्वतंत्रता की साझी विरासत दोनों देशों को आपस में जोड़ती है।

बांग्लादेश मुक्ति संघर्ष में भारत की भूमिका

वर्ष 1947 में जब अंग्रेजों ने हिन्दुस्तान को आजाद किया तो 14- 15 अगस्त की

* लेखिका ने गोविन्द वल्लभ पन्त सामाजिक विज्ञान संस्थान, प्रयागराज से शोध उपाधि प्राप्त की है और लेखन और शोधकार्य में सक्रिय हैं |

रात्रि में भारत और पाकिस्तान दो अलग अलग स्वतंत्र राष्ट्रों का उदय हुआ जिसमें पाकिस्तान के दो भाग थे, एक भारत के पश्चिम में जिसे पश्चिमी पाकिस्तान (वर्तमान पाकिस्तान) नाम दिया गया तथा एक भारत के पूर्व में जिसे पूर्वी पाकिस्तान (वर्तमान बांग्लादेश) नाम दिया गया। इनकी एकता का आधार धर्म था जबकि दोनों क्षेत्रों के लोगों के खान-पान, रहन सहन, उनके विचार, उनकी भाषा और संस्कृतियों में काफी अंतर था। स्वतंत्रता के बाद से ही पश्चिमी पाकिस्तान के लोगों का देश की राजनीति, प्रशासन, संसाधन आदि पर प्रभुत्व था तथा संसाधनों का भेदभावपूर्ण उपयोग किया जाता था। जैसे हम देखें तो संपूर्ण राजस्व में पूर्वी पाकिस्तान का 60% भाग होने के बावजूद उसके सुरक्षा तथा नागरिक परिव्यय पर केवल 25% ही खर्च के लिए दिया जाता था (www.epw.in)। इससे पूर्वी पाकिस्तान की स्थिती दयनीय बनी रही। सेना और प्रशासन में पूर्वी पाकिस्तान की हिस्सेदारी न्यूनतम थी एवं शिक्षा व अन्य क्षेत्रों में भी असमानता का व्यवहार किया जाता था। पूर्वी एवं पश्चिमी पाकिस्तान के मध्य सबसे बड़ा विवाद भाषा को लेकर उभरा, जब सन1948 में उर्दू को राष्ट्रभाषा घोषित किया गया (James, 1989)। इसका पूर्वी पाकिस्तान में लोगों ने विरोध किया तथा उन पर जवाब में गोलियां चलाई गईं। इन सब भेदभावपूर्ण निर्णयों के खिलाफ पूर्वी पाकिस्तान के लोगों ने विरोध किया जिसका नेतृत्व शेख मुजीबुर रहमान ने किया। जनता के बढ़ते असंतोष तथा स्वायत्तता की मांग को दबाने के लिए पश्चिमी पाकिस्तान की सरकार ने क्रूरता का परिचय दिया तथा जनता का ध्यान भटकाने के लिए कश्मीर की स्वायत्तता की मांग उठाते हुए भारत के प्रति अपना वैमनस्य निकालने के उद्देश्य से 1965 में भारत पर आक्रमण कर दिया। आक्रमण के संदर्भ में शेख मुजीबुर रहमान ने टिप्पणी करते हुए कहा कि हमारी सरकार कश्मीर से जनमत संग्रह कराना चाहती है, पर यहाँ (पूर्वी पाकिस्तान) पर जनमत को कुचल रही है। यहाँ जनमत कराया जाए तो उसे मालूम हो कि वह कितने पानी में है। 1965 के युद्ध के समय भारत की पूर्वी पाकिस्तान की सीमा पर शांति थी क्योंकि यहाँ की जनता स्वयं शोषण और अत्याचार की शिकार थी। 1970 के चुनाव में शेख मुजीबुर्रहमान की पार्टी अवामी लीग को बहुमत प्राप्त हुआ लेकिन पश्चिमी पाकिस्तान की सरकार ने इस बहुमत को नकार दिया तथा जनता के असंतोष व विरोध को दबाने के लिए बल प्रयोग का सहारा लिया तथा पूर्वी पाकिस्तान की जनता के साथ बेरहमी के साथ मारकाट, हत्या तथा बलात्कार किए गए (आरएसटीवी, 2021)। सेना के इस दमनकारी कृत्य के चलते बड़ी संख्या में बच्चे, बूढ़े, नौजवान, महिलाएं भारत में प्रवेश कर शरणार्थी बन गए जिससे भारत में असुरक्षा बढ़ने लगी तथा इनके रहन-सहन, खान-पान का दबाव बढ़ गया और भारत की एकता व शांति खतरे में पड़ गई जिससे भारत ने पूर्वी पाकिस्तान की मुक्ति वाहिनी सेना को मदद प्रदान करनी शुरू की

तथा भारत व पाकिस्तान के सैनिकों के बीच मुठभेड़ के मामले बढ़ गए।

पाकिस्तान की सरकार ने 2 दिसंबर 1971 को भारत के साथ पूर्ण युद्ध की घोषणा कर दी और 3 दिसम्बर 1971 को भारत के श्रीनगर, पठानकोट, राजस्थान, बाड़मेर, आगरा, अंबाला में हवाई हमले किए जिसका भारतीय सेना ने मुंहतोड़ जवाब दिया। 3 दिसंबर 1971 की रात्रि में ही राष्ट्र के नाम संबोधन में श्रीमती इंदिरा गांधी ने भारत की अपनी अक्षुण्णता तथा बांग्लादेश के लिए अपने आदर्शों की रक्षा के लिए पाकिस्तान के साथ सख्ती और अनुशासन से मुकाबले की बात कही, सेनाध्यक्ष ने संयुक्त बैठक कर मुक्ति वाहिनी सेना को खुले रूप में साथ देने तथा बांग्लादेश को स्वतंत्र करने का भी संकल्प लिया (बांग्लादेश डॉक्यूमेंट)।

चीन और अमेरिका ने इस मुद्दे को संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में उठाया तथा भारत को आक्रांता घोषित करने की मांग रखी लेकिन सोवियत रूस ने वीटो का प्रयोग करते हुए इस प्रस्ताव को रद्द करवा दिया तथा दुनिया के देशों को संदेश भी दिया कि भारत और पाकिस्तान के युद्ध से दूरी बनाए रखें। युद्ध के दौरान अमेरिका ने अपना सातवाँ जहाजी बेड़ा हिंद महासागर के लिए रवाना भी कर दिया लेकिन इसका उद्देश्य स्पष्ट नहीं किया किंतु सोवियत रूस ने भारत की मदद के लिए अपनी न्यूक्लियर सबमरीन भेज दी जिससे अमेरिका अपने कदम रोकने के लिए विवश हुआ।

अंततः मुक्ति वाहिनी सेना व भारतीय सेना के समक्ष पाकिस्तान की सेना को आत्मसमर्पण के लिए मजबूर होना पड़ा। 16 दिसंबर को जनरल नियाजी ने 93,000 सैनिकों के साथ भारतीय सेना के समक्ष आत्मसमर्पण कर दिया और भारत द्वारा तैयार आत्मसमर्पण पत्र पर हस्ताक्षर कर दिए तथा लेफ्टिनेंट जनरल अरोड़ा ने पाकिस्तान के समर्पण करने वाले सभी सैनिकों के साथ जिनेवा कन्वेशन के प्रावधनों के अनुसार सम्मानपूर्वक और अच्छे व्यवहार का विश्वास दिलाया। भारत वह पहला देश था जिसने बांग्लादेश को आजाद कराने से पहले 6 दिसंबर 1971 को एक स्वतंत्र बांग्लादेश गणराज्य के रूप में मान्यता दे दी थी (अयूब, 1971)।

भारत एवं बांग्लादेश के साझा मंच

दोनों देश ऐसे कई संगठनों के साझेदार हैं जिससे कि एक-दूसरे के हितों को समझकर पारस्परिक विकास को आगे बढ़ा सकें जैसे BIMSTEC (Bay of Bengal Initiative for Multi Sectoral Technical and Economic Cooperation), BBIN (Bangladesh Bhutan India Nepal), SAARC (South Asian Association for Regional Cooperation), राष्ट्रमंडल तथा दोनों देशों में महत्वपूर्ण सागरीय क्षेत्र को उचित प्रबंधन प्रदान करने तथा स्थायित्व को सुनिश्चित करने के लिए

IORA (Indian Ocean Rim Association) तथा SAGAR (Security and Growth for All in the Region) जैसे संगठनों की सदस्यता ग्रहण किया है (झारी, 2012)।

भारत बांग्लादेश संबंध के प्रमुख बिंदु

क) सीमा संबंधी मुद्दे

भारत और बांग्लादेश दोनों ही एक-दूसरे के साथ अपनी सबसे लंबी सीमा रखते हैं जो लगभग 4096.7. किलोमीटर है। यह एक खुली सीमा है। दोनों देशों ने अपने सीमा विवाद को शांतिपूर्ण तरीके से हल कर लिया है। इसमें वर्तमान में विवाद केवल 6.1 किलोमीटर सीमा के ऊपर है। दोनों देशों के मध्य सीमा सुरक्षा से संबंधित कई समझौते किए गए हैं, जिसमें 2011 में किया गया "समन्वित सीमा प्रबंधन योजना" जो भारत की सीमा सुरक्षाबल (BSF) और बांग्लादेश के बांग्लादेश सीमा गार्ड (BGB) के बीच किया गया, अति महत्त्वपूर्ण है। इसके द्वारा दोनों बल सीमा पर अवैध गतिविधियों को रोकने तथा शांति बनाए रखने के लिए प्रतिबद्ध हैं।

ख) नदी जल संबंधी मुद्दे

भारत और बांग्लादेश 54 साझी नदियों के जल के भागीदार हैं और दोनों के बीच नदी जल के बँटवारे को लेकर समस्या है। गंगा नदी के जल की हिस्सेदारी पर एक समझौता 12 दिसंबर 1996 को किया गया जब भारत के प्रधानमंत्री देवगौड़ा और बांग्लादेश की प्रधानमंत्री शेख हसीना के मध्य ऐतिहासिक समझौता 30 वर्षों के लिए लागू किया गया।

दोनों देशों ने नदी जल से संबंधित मुद्दों के लिए एक द्विपक्षीय नदी आयोग की स्थापना जून 1972 में की। यह आयोग नदी प्रणाली से अधिकाधिक लाभ प्राप्त करने के लिए दोनों देशों के मध्य निकट संपर्क बनाए रखने, बाढ़ नियंत्रण कार्य के व्यवस्थापन, अग्रिम बाढ़ चेतावनी के प्रस्ताव के व्यवस्थापन, बाढ़ व समुद्री तूफानों से चेतावनी, बाढ़ नियंत्रण के अध्ययन तथा सिंचाई परियोजनाओं आदि के लिए किया गया था। यह संयुक्त नदी तंत्र समय-समय पर नदी संबंधी मामलों पर चर्चा के लिए बैठक भी करता रहता है।

ग) तीस्ता नदी विवाद

भारत एवं बांग्लादेश के बीच तीस्ता नदी जल विभाजन के संबंध में पहली बार वर्ष 1983 में समझौता हुआ कि तीस्ता नदी के जल के 75% भाग का बँटवारा भारत तथा बांग्लादेश के बीच किया गया जिसमें 39% जल भारत को तथा 36% जल का भाग बांग्लादेश को प्रदान किया गया तथा शेष 25% पानी मुक्त प्रवाह के लिए छोड़ दिया गया।

2011 में तीस्ता जल विभाजन के लिये एक स्थायी समझौता प्रस्तावित किया गया जिसके अंतर्गत भारत को जल का 42.5% बांग्लादेश को 37.5% एवं 20% पानी मुक्त प्रवाह के लिए छोड़े जाने का प्रावधान था लेकिन 2011 में यह समझौता बंगाल की मुख्यमंत्री ममता बनर्जी के विरोध के कारण संपन्न नहीं हो पाया | यह समझौता अभी भी अधर में पड़ा हुआ है।

घ) न्यू मूर द्वीप विवाद

न्यू मूर द्वीप बंगाल की खाड़ी में 2 से 12 वर्ग किमी का तट है जो भारत के तट से 5200 मीटर तथा बांग्लादेश के तट से 7000 मीटर है। इस द्वीप को सर्वप्रथम 1971 में देखा गया तथा वर्ष 1979 तक इस द्वीप पर भारत के अधिकार को कोई चुनौती नहीं दी गई थी | इसे पश्चिम बंगाल सरकार ने पूर्वासा द्वीप का नाम दिया। वर्ष 1980 के पश्चात बांग्लादेश ने पहली बार न्यू मूर द्वीप को विवादास्पद क्षेत्र कहा तथा इस पर अपना दावा पेश किया अब यह द्वीप पानी में विलीन हो चुका है (wwwhindi.oneindia.com)।

च) व्यापार एवं वाणिज्य

दो देशों के मध्य व्यापारिक व वाणिज्यिक संबंध कहीं न कहीं दोनों देशों के अन्य द्विपक्षीय संबंधों को प्रभावित करते हैं । जहाँ तक भारत एवं बांग्लादेश के भौगोलिक निकटता की बात है तो कहीं न कहीं यह दोनों देशों के लिए पूरक भूमिका अदा करता है।

भारत एवं बांग्लादेश के मध्य व्यापार को लेकर बांग्लादेश की नाराजगी रहती है क्योंकि इनके मध्य व्यापार संतुलन बांग्लादेश के प्रतिकूल है। दक्षिण एशिया में बांग्लादेश भारत का सबसे बड़ा व्यापारिक साझेदार है जबकि बांग्लादेश के लिए भारत दूसरा सबसे बड़ा व्यापारिक साझेदार है। वित्तीय वर्ष 2019-20 की बात करें तो भारत ने बांग्लादेश को 8.2 बिलियन डॉलर का निर्यात जबकि 1.6 बिलियन डॉलर का आयात किया है। भारत एवं बांग्लादेश के मध्य द्विपक्षीय व्यापार को बढ़ाने के लिए दिसंबर 2020 में "मुख्य कार्यकारी अधिकारी मंच" (CEO FORUM) की व्यवस्था की गयी जिससे कि विभिन्न क्षेत्रों में व्यापार और निवेश को बढ़ाया जा सके तथा इसमें सुधार किया जा सके।

दोनों देशों के मध्य पावर सेक्टर में सहयोग एक उदाहरण है | वर्तमान में बांग्लादेश भारत से 1160 मेगावॉट पावर का आयात करता है। भारत ने 2011 से बांग्लादेश को दक्षिण एशियाई मुक्त व्यापार क्षेत्र (SAFTA) के अनुसार तंबाकू और शराब को छोड़कर सभी टैरिफ लाइनों पर बांग्लादेश को शुल्क मुक्त कोटा प्रदान किया हुआ है । दोनों देशों की सीमाओं पर रहने वाले लोगों की सुविधा के लिए त्रिपुरा और मेघालय में दो बॉर्डर हाट (Border Haat) की व्यवस्था की गई है (पाण्डेय एवं अन्य, 2016)।

छ) सांस्कृतिक सम्बन्ध

स्वतंत्रता के पूर्व दोनों देशों की एक साझा इतिहास, संस्कृति रही है जो दोनों देशों को नजदीक लाती है। दोनों देशों के मध्य सांस्कृतिक आदान-प्रदान तथा जुड़ाव में "इंदिरा गांधी सांस्कृतिक केंद्र" (IGCC) महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। इसका उद्घाटन 11 मार्च 2010 को किया गया जो ढाका में स्थित है | यह केंद्र नियमित रूप से बांग्लादेश में सांस्कृतिक गतिविधियों वाले कार्यक्रम का आयोजन करता है। इसमें विभिन्न प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाए जाते हैं जैसे योग, कथक, मणिपुरी डांस, हिंदी भाषा, भारतीय शास्त्रीय संगीत और सांस्कृतिक कार्यक्रम, जिससे दोनों देशों के मध्य जन-जन के संपर्क तथा जुड़ाव में मदद मिलती है।

ज) चकमा और रोहिंग्या व अवैध प्रवासन की समस्या

बांग्लादेश के चटगांव पहाड़ियों पर चकमा लोगों का निवास है जो बौद्ध धर्म में मान्यता रखते हैं | उल्लेखनीय है कि भारत के उत्तरी-पूर्वी राज्यों में भी चकमा जनजाति के लोग रहते हैं | वर्तमान समय में चकमा पहाड़ियों से होकर भारतीय राज्य त्रिपुरा तथा अरुणाचल प्रदेश में शरण लिए हुए हैं। भारत एवं बांग्लादेश के बीच इन शरणार्थियों को वापस जाने की बात चल रही है।

रोहिंग्या मुसलमान बांग्लादेश के मूल निवासी हैं जो म्यांमार के रखाइन प्रांत में रहते हैं | म्यांमार सरकार उन्हें नागरिकता नहीं दे रही | वर्तमान समय में बड़ी मात्रा में रोहिंग्या बांग्लादेश में शरण लिए हुए हैं। बांग्लादेश चाहता है कि इन्हें वापस भेजने में भारत मदद करे तथा म्यांमार से बात करे | भारत भी इसका एक उचित समाधान चाहता है।

भारत सरकार द्वारा पूरे भारत में राष्ट्रीय नागरिक रजिस्टर (NRC) को लागू करने के प्रस्ताव और "नागरिकता संशोधन अधिनियम (CAA)" को लागू किए जाने की बात चल रही है जिसमें माना जा रहा है कि बड़ी मात्रा में बांग्लादेशी अवैध प्रवासी हैं | इस सम्बन्ध में बांग्लादेश ने अपनी नाराजगी जाहिर की जबकि भारत इसे अपना आन्तरिक मामला कहता है (The Hindu, 2021)।

झ) भूमि सीमा समझौता (LBA)

सीमा विवाद से संबंधित अन्य समस्या भारत और बांग्लादेश के मध्य अंतःक्षेत्र (Enclave) से संबंधित है। यह अंतःक्षेत्र भारत के कूचबिहार तथा बांग्लादेश के रंगपुर में है | इससे संबंधित समझौता 1974 में ही हुआ था जबकि इसे लागू नहीं किया जा सका था। भारतीय प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी तथा बांग्लादेश की प्रधानमंत्री शेख हसीना ने इसे अंतिम रूप दिया। इसमें 111 भारतीय क्षेत्र बांग्लादेश में हैं जबकि 51 बांग्लादेशी अंतःक्षेत्र भारत में

हैं। वर्ष 2015 में भूमि सीमा समझौता के अंतर्गत अंतःक्षेत्र के लेनदेन पर समझौता हो गया और दोनों देशों में अंतःक्षेत्रों में रहने वाले निवासियों को किसी भी देश के अंतःक्षेत्रों में बसने की स्वतंत्रता दी गई। 100वाँ संविधान संशोधन के द्वारा इसे भारतीय संसद द्वारा पारित कर दिया गया। तीन बीघा गलियारा भारत ने बांग्लादेश को सौंप दिया है जो बांग्लादेश के दाहाग्राम एवं अंगोरपोटा को जोड़ता है। अतः दोनों देशों के बीच लंबे समय से विद्यमान विवाद हल हो गया है (Ministry of External Affairs report)।

ट) कनेक्टिविटी

दोनों देशों की सरकारें इस बात को लेकर प्रयासरत हैं कि 1965 के पहले एक दूसरे को जोड़ने वाले सड़क और रेल मार्गों को पुन बहाल किया जाए तथा इसमें वृद्धि की जाए। दोनों देशों के प्रधानमंत्रियों ने 17 दिसंबर को चिल्हाटी (बांग्लादेश) और हल्दीबाड़ी (भारत) के बीच एक नए रेलवह लिंक को बहाल किया। दोनों देशों ने 2017 में ढाका-खुलना-कोलकाता के मध्य बंधन व मैत्री रेल सेवाओं की शुरुआत की। फरवरी 2020 में बंधन एवं मैत्री यात्री रेल सेवाओं को सप्ताह में 4 दिन से बढ़ाकर 5 दिन कर दिया गया तथा इनकी बारंबारता दिन में 1 की जगह 2 बार सुनिश्चित की गई है।

भारत ने बांग्लादेश को आठ बिलियन डॉलर का "लाइन ऑफ क्रेडिट" (LOC) प्रदान किया है जिससे बांग्लादेश, ढाका और कोलकाता के बीच अखुरा-अगरतला रेल प्रोजेक्ट संरचना का विकास हो सके जिससे ढाका से कोलकाता के बीच की दूरी 1650 किलोमीटर की जगह 550 किलोमीटर हो जायेगी। दोनों देशों के बीच आंतरिक जल परिवहन के संबंध में भी समझौता है।

9 मार्च 2021 को फेनी नदी पर बना मैत्री सेतु पुल का उद्घाटन श्री नरेंद्र मोदी ने किया जो त्रिपुरा के सबरूम को बांग्लादेश के रामगढ़ से जोड़ने वाला 1.9 किलोमीटर लम्बा पुल है जो कि दोनों देशों के राजनयिक और सामरिक संबंधों के लिए बहुत मायने रखता है। हम देखें तो दोनों देशों ने वायु, रेल, रोड, जल मार्ग, पाइपलाइन हर तरह की योजना से एक दूसरे को जोड़ने के लिए प्रयास किया है (Ministry of External Affairs report, 2021)।

प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी की बांग्लादेश यात्रा

बांग्लादेश अपनी आजादी की स्वर्ण जयंती के उपलक्ष्य में बांग्लादेश के संस्थापक बंगबंधु शेख मुजीबुर रहमान की जन्म शताब्दी वर्ष तथा भारत-बांग्लादेश संबंधों के 50 वर्ष पूर्ण होने का समारोह मना रहा है। इसी संदर्भ में भारतीय प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने 26-27 मार्च 2021 को बांग्लादेश का दौरा किया जो इस कोविड महामारी के दौर में

लगभग 17 महीनों बाद प्रधानमंत्री की विदेश यात्रा है। 17 दिसंबर 2020 को वर्चुअल मीटिंग में मोदी ने कहा था कि जब भारत में कोविड वैक्सीन आएगी तो बांग्लादेश को भी दिया जाएगा और 16 जनवरी से भारत में वैक्सीनेशन कार्यक्रम शुरु हुआ उसके 5 दिन बाद ही 21 जनवरी 2021 को 2 मिलियन डोज बांग्लादेश को दिए गए और जब बांग्लादेश के स्वतंत्रता दिवस पर मोदी जी गये तब 1.2 मिलियन डोज और दिए गए (RSTV, 2021)।

बांग्लादेश के स्वतंत्रता दिवस पर मोदी जी ने अपने भाषण में कहा बांग्लादेश के स्वतंत्रता संघर्ष में शामिल होना मेरे जीवन के पहले आंदोलनों में से एक था जब उन्होंने बांग्लादेश की आजादी के लिए सत्याग्रह किया और फिर गिरफ्तारी दी तथा जेल गए थे। बांग्लादेश दौरे पर प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने ढाका में बंगबंधु शेख मुजीबुर रहमान को वर्ष 2020 के गांधी शांति पुरस्कार से पुरस्कृत किया गया (Khanna, 2018)।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः हम देखें तो भारत एवं बांग्लादेश की एक साझी संस्कृति, इतिहास, विरासत रही है। तथा बांग्लादेश की स्वतंत्रता में भारत की महत्वपूर्ण भूमिका रही है और बांग्लादेश के निर्माण के साथ ही इनके मध्य संबंध मित्रतापूर्ण रहे हैं। इनके बीच विवाद के बिंदु भी विद्यमान रहे हैं लेकिन दोनों देशों ने सूझ-बूझ के साथ उनका समाधान किया है। चीन के बढ़ते हस्तक्षेप से भी सावधान रहने की जरूरत है। इन दोनों देशों के बीच विद्यमान संभावनाओं तथा समस्याओं को श्री नरेंद्र मोदी के बांग्लादेश के 50वें स्वतंत्रता दिवस पर दिए गए भाषण से हम समझ सकते हैं। जिसमें उन्होंने कहा कि हमारी विरासत भी साझी है, हमारा विकास भी साझा है, हमारे लक्ष्य भी साझे हैं, हमारी चुनौतियां भी सांझी हैं। व्यापार एवं उद्योग में एक जैसी संभावनाएँ हैं तो आतंकवाद जैसे समान खतरे भी हैं इसलिए हम सावधान व संगठित होकर इन समस्याओं का समाधान कर सकते हैं।

संदर्भ सूची

सीकरी, आर. (2017). भारत की विदेश नीति: चुनौती और रणनीति. सेज पब्लिशिंग, भारत |

http://www.epw.in/journal/2016/28/book-reviews/birth-bangladesh.html

James Heitzman, Robert Worden, eds. (1989). "Pakistan Period (1947–71)". Bangladesh: A Country Study. Government Printing Office, Country Studies US. ISBN 0-16-017720-0.

RSTV Vishesh: बंगबंधुः शेख मुजीबुर रहमान, 17 मार्च 2021

बांग्लादेश डॉक्यूमेंट - भाग एक भारत, विदेश मंत्रालय, नई दिल्ली

अयूब, एम. (1971). बांग्लादेश - ए स्ट्रगल फॉर नेशनहुड, विकास पब्लिशिंग हाउस प्राइवहट

लिमिटेड, दिल्ली |
झारी, के.डी. (2012). बांग्लादेश स्वतंत्रता और भारत पाक संबंध, बुक बैंक इंडिया, नई दिल्ली |
http//hindi.one India.com/newsfeatures/India-Pakistan-1965-war history
पांडेय, एस.के.कुशवाहा, एम., कुमार, ए. (2016). भारत बांग्लादेश संबंध, मोहित पब्लिकेशन, नई दिल्ली |
The Hindu-"Good Neighbors on India Bangladesh ties" 31/03/2021
Ministry of External Affairs, Report March 2021
RSTV आज की चर्चा: भारत बांग्लादेश: मैत्री के 50 वर्ष, 27 मार्च 2021
Khanna, V.N. (2018). Foreign Policy of India, Vikas Publishing House, Noida (Uttar Pradesh).

मेकल मीमांसा

(ISSN-0974-0118)

मेकल मीमांसा: एक परिचय

सन 2009 में आरंभ मेकल मीमांसा इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय, अमरकंटक, मध्य प्रदेश द्वारा प्रकाशित डबल ब्लाइंड पीअर रिव्यूड शोध पत्रिका है| राष्ट्रभाषा हिंदी में प्रकाशित अर्धवार्षिक शोधपत्रिका हेतु ज्ञान-विज्ञान के सभी क्षेत्रों से मौलिक शोध प्रकाशन हेतु आमंत्रित किया जाता है| शोध पत्रिका का उद्देश्य शोधार्थियों, नीति नियामकों, एवं वाणिज्यिक क्षेत्रों के ज्ञानवर्धन तथा संवर्धन हेतु उपयोगी नवोन्मेषी, मौलिक और नूतन शोध को सामने लाना है | प्रकाशन में उच्च मानकों को बनाए रखने हेतु पत्रिका के लिए एक निर्धारित, वस्तुनिष्ठ ब्लाइंड पीअर रीव्यू पद्धति से शोध पत्रों का चयन किया जाता है |

पत्रिका का उद्देश्य एवं क्षेत्र-

मेकल मीमांसा शोध पत्रिका का मूल उद्देश्य राष्ट्रभाषा हिंदी में गुणवत्तायुक्त मौलिक शोध को सामने लाना है | पत्रिका सैद्धांतिक, अनुप्रयुक्त एवं नीति निर्धारण आदि सभी क्षेत्रों में होने वाले अनुसन्धान को प्रकाशित करने का कार्य करती है | पत्रिका का विशेष आग्रह आदिवासी विकास, संस्कृति एवं जीवन पद्धति आदि से जुड़े स्तरीय, वस्तुनिष्ठ एवं वैज्ञानिक शोध के प्रकाशन के प्रति है |

पत्रिका की सदस्यता हेतु सहयोग राशि

क्रम संख्या	श्रेणी	अवधि	सहयोग राशि रुपयों में
1	संस्थागत सदस्यता हेतु	अर्धवार्षिक	300.00
		वार्षिक	550.00
		आजीवन	5000.00
2	व्यक्तिगत सदस्यता हेतु	अर्धवार्षिक	250.00
		वार्षिक	475.00
		आजीवन	4500.00
3	आन्तरिक व्यक्तिगत सदस्यता एवं शोधार्थियों हेतु	अर्धवार्षिक	200.00
		वार्षिक	350.00
		आजीवन	3250.00

सहयोग राशि का भुगतान ऑनलाइन/बैंक ट्रान्सफर के माध्यम से स्वीकार किया जाता है | बैंक डिटेल हेतु सम्पादकीय टीम से संपर्क किया जा सकता है |

मेकल मीमांसा के आगामी अंको हेतु शोध पत्र आमंत्रित किए जाते हैं | शोध पत्र मौलिक, वस्तुनिष्ठ एवं ज्ञान के क्षेत्र और समाज तथा संस्कृति के संवर्धन में योगदान करने में सक्षम हों | मौलिकता प्रमाणपत्र एवं अन्यत्र प्रकाशन हेतु नहीं भेजे जाने सम्बंधी घोषणा के साथ शोध पत्र mekalmimansa@igntu.ac.in पर ई-मेल किए जा सकते हैं | विस्तृत निर्देश हेतु हमारी वेबसाइट देखें |

http://www.igntu.ac.in/mekalmimansa.aspx

इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय
अमरकंटक (म.प्र.)

मेकल मीमांसा

अंतर-अनुशासनात्मक डबल ब्लाइंड पीयर रिव्यूड यूजीसी केयर सूचीबद्ध अर्धवार्षिक शोध पत्रिका
http://www.igntu.ac.in/mekalmimansa.aspx